



श्री  
प्रकरण माला.  
( ज्ञापान्तर )

आ पुस्तक

श्री चतुर्विंध सघने भणवा तथा वाचवा  
योग्य जाणी  
तें

देमझकर लहमीगँव वर्षमानकर पासे  
गुजरातीमा ज्ञापान्तर करावो

उपावी प्रसिद्ध कर्त्ता,  
आ भोगीलाल ताराचंद

नथा

भापान्तर कर्त्ता

अमटावाद

युनियन प्रिन्टिंग प्रेस कपर्नी लिमिटेड

मरत १९५८ मन १९०९

किमत रु १-८-०

आ पुस्तकने रापवा रपाववा संवंधि सर्व हक  
प्रतिष्ठ कर्ताए स्वाधिन राख्या रे.

## प्रस्तावना

आ प्रकरण मालानु पुस्तक स्वधर्माभिलापो जन श्रावकोंना हाथमा अर्पण करवानी साथे अमो तेमनी विनती करीए उग्रीएके, आजमुधीमा जैनधर्मना वहु पुस्तको छपाइ बहार पड्या डे पण फक्त एक पुस्तकथी तेवां अनेक पुस्तकों नो लाभ मली शके तेवा पुस्तको तो घणा थोडा बहार पडेला दीठामा आवे छे जीवाजीवादि पदार्थोंने जाणवाना हेतुथी जीवविचार नवतत्व विगरे वहु पुस्तकोंनो सग्रह करवो पडे अने तेमा द्रव्यनो रहु खर्च थाय ते करता थोडा खर्चथी तेवा वहु पुस्तकोंनो लाज मली शके तेवु एकज पुस्तक होय तो तंथी गरीए अने तवगर एम सहुने सरखो लाभ थड पडे अने तेवा कारणयीज अमे आ प्रकरणमाला नामनु पुस्तक छपाव्यु छे आ पुस्तकमा जीवविचार विगरे अठारोश प्रकरणोंनो समावेश थयो छे तेमा उत्तरोत्तर वधारे रसीक अने गोषकारक प्रकरणोंनो ममावेश करवामा आवयो छे प्रथम जीवविचार, नवतत्त्व, दृढ़क अने सग्रहणोंनु ज्ञान थया पछी इद्रियोंने नियममा राखवाना हेतु थी इद्रियपराजयशतरु अने पछी वेराग्यदर्शक वेराग्यशतक दाखल करयु छे तेना पछी गीतमरुलक विगरे कुळकोंनो समावेश करया पछी शाखता जीननी स्तुति अन शासु नयकल्प विगरे महात्म्यदर्शक प्रकरणो ममावेश करयो छे उवटे आत्मज्ञाननु जाणपण थवाना कारणस्प समाधिशतक अने सज्जनचित्त वल्लभ दाखल करु छे छेवट त्रण प्रकरणो मूलपाठ दाखल करी आ पुस्तकन पूर्ण करवामा आव्यु डे

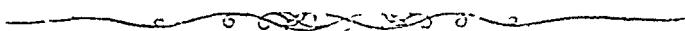
अमो आशा राखीए उग्रीएके, जैन श्रावका जूदा जूदा आचायाए उपका रना हेतुथी उनावेला आ प्रकरणने वाचवानो तथा अभ्यास करवानो लाभ लइ ते आचार्योंनो उपकार भूली जशे नही

आ पुस्तक छपानी वखते जे काड दृष्टिदोषथी अथवा मतिदोषथी भूल थइ छे तेनु शुद्धिपत्र पालल दाखल करयु छे उता कोड भूल रही होय तो ते सज्जन पुरुषोण माफ करी मुधारी लेवी

लो प्रसिद्धकर्ता

## अनुक्रमणिका.

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
१ जीवविचार.	१	१६ तपकुलक.	१५७
२ नवतत्त्व.	१३	१७ ज्ञावकुलक.	१६१
३ दंडक.	३४	१८ उपदेशरत्नकोश.	१६५
४ संग्रहणी.	४४	१९ शाश्वताजिन नामादि संख्या स्तवन.	१७०
५ चैत्यवंदन ज्ञाप्य.	५१	२० त्रणालोकना चैत्यविंव संख्या यंत्र.	१७६
६ गुरुवंदन ज्ञाप्य.	६४	२१ शत्रुंजय लघुकछप.	१७८
७ पञ्चरकाण ज्ञाप्य.	७८	२२ रत्नाकरपचीशी.	१८५
८ ईङ्गियपराजयशतक.	९२	२३ समाधिशतक.	१८२
९ वैराग्यशतक.	११४	२४ सज्जनचित्तवद्वन.	२१७
१० अनन्तव्यकुलक.	१३४	२५ श्रीवीरजीन स्तवन.	२१७
११ पुण्यकुलक.	१३४	२६ श्रीमंधरस्वामोनुंस्तवन११९	
१२ पुण्यपापकुलक.	१४१	२७ गुरुप्रदक्षिणा.	२३१
१३ गौतमकुलक.	१४४	२८ जीवोनुं शास्तीकुलक.	२३४
१४ दानकुलक.	१४९		
१५ शोलकुलक.	१५३		



॥ श्री महावीरस्वामीन नमः ॥

## ॥ प्रकरणमाला ॥

॥ जीवविचार प्रकरण पहेलुं ॥

ग्रथकर्त्ता मगजाचरणपूर्वक प्रयोजन मूर्चंरे

न्नुवण्णपर्वतं वीरं, नमिजण्ण न्नणामि अबुह घोहत्तं ॥  
जीवसरूपं किचिवि, जह न्नणियं पुष्पसूरीहिं ॥ १ ॥

अवधार्थ—त्रणन्नुवनमा दीपा समान श्री वीरप्रभुने नमस्कार  
करने जेम पूर्वना आचायोए कहु रे तेम अज्ञानि जीवोने बोध  
थपाने अथे काढक पण जीवनु स्वरूप हुं कहु दु ॥ १ ॥

इवे जोपना भेदो रहे छे

जीवा मुत्ता संसा-गिणो य तस थावग य मंसागी ॥  
पुढिवि जल जलाण वाऊवाणस्सर्ड थावग नेत्रा ॥ २ ॥

अवधार्थ—जीवो वे प्रकारना रे एक मुक्तिना अने वीजा स-  
सारी, संसारी जीवो वे प्रकारना एक त्रस अने वीजा स्थावर  
पृथ्वीकाय, अप्काय, तेत्रजाय, वाऊवाय अने वनस्पतिकाय ए  
पाच स्थावर जाणवा ॥ २ ॥

दो पृथ्वीतापना भेदो रहे ते

फलिहमगिरथाविहुम ॥ हिंगुलहम्याल्मणसिलगमिंदा  
कणगाङ्घात मंडी, वन्नि अराणेष्ट्रय पंखवा ॥ ३ ॥

अप्स्रय तूरी ऊरं, मही पाहाणजाइ एँगा ॥  
सोवीरंजण खूणा—इ पुढविनेअआइ इच्छाई ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—स्फटिक, मणि, रत्न, प्रवालां, हिंगलो, हरताल, मणसिल, पारो, सोनादि सात धातुर, खडी, रमजी, पापाणनी साथे मखेली धोली माटी, पारेवो पापाण, पांच वर्णनो अवरख, तेजंतुरी, खारीमाटी, माटी, अनेक पापाणनी जातियो, सुरमो अने सिंधव आदि, इत्यादि पृथ्वीकायना नेदो जाणवा. ४  
हवे अप्कायना भेदो कहे छे.

जोमंतरिखमुदगं, उसा हिम करग हरितण् महिअ ॥  
हुति घणोदहिमाई, नेया एगा य आउस्स ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—पृथ्वीनुं पाणि, आकाशनुं पाणि, उसनुं पाणि, हिमनुं पाणि, करानुं पाणि, लीला धास उपरनुं पाणि, धुवरनुंपाणि अने घनोदधिनुं पाणि, इत्यादि अप्कायना अनेक नेदो होय रे. ५  
हवे अयिकाय जीवोना भेदो कहे रे.

झगालजालमुम्मुर—उक्कासणिकणगविज्जुमाईअ ॥  
अगणिजिअणं नेअ, नायवा निउणबुद्धीए ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—अंगारानो अग्नि, जालनो अग्नि, झरसाडनो अग्नि, उछकापातनो अग्नि, वज्रनो अग्नि, कणियानो अग्नि अने विजलीनो अग्नि, इत्यादि अग्निकाय ( तेजकाय ) जीवोना नेदो सूक्ष्म बुद्धियी जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे वायुकायना भेदो कहे छे.

उज्ज्वामगउक्कलिया, मंमलिमहसुद्धगुंजवाया य ॥

घणतणुवायाईया, नेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—उज्ज्वामकवायु, उत्कलितवायु, मंडलिवायु, महावायु, शुद्धवायु, गुंजारव करतो वायु अने घनवायु तथा तनवायु

विगेरे वायुकायना नेदो निश्चे जाणवा ॥ ७ ॥

हवे वनस्पति कायना भेदो कहे छे

साहारणपत्तेया, वणसद्गीवा डुहा सुए नणिअा ॥

जेसिमण्ठाणं तणु, एगा साहारणा तेझ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—साधारण अने प्रत्येक एवा वनस्पतिकाय जीवोना वे जेदो सूत्रमा कह्हा रे तेमा जे अनत जीवोनु एक शरीर होय ते साधारण जाणवा ॥ ८ ॥

हवे साधारण वनस्पतिकायना भेदो कहे छे

कंदा अंकुरकिसल यपणगा सेवाल न्नूमिफोमा य ॥

अल्पतियगङ्गरभो—ठ वहुला येगपल्वंका ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—सूरण विगेरे सर्व जातिना कद, अकुरा, कुंपलो, पाचवर्णनी लोलफुल, सेवाल, बोलाडोना टोप अने त्रण जातनु आङु, गाजर, मोथ, वहुलो, थेक, पछ्कानी जाजी ॥ ९ ॥

कोमलफलं च सध्वं, गूढसिराइ सिणाइपत्ताङु ॥

थोहरिकुआरिगुगुलि—गलोयपमुहा य ठिन्नरुहा ॥१०॥

शब्दार्थ—वली सर्व जातिना कोमल फल, जेनो कणसदो, नसो, साधो प्रगट न देखातो होय ते, शण विगेरेना पादडा, सर्व जातनो थोर, गुगल, गलो ए विगेरे जे ठेद्या रत्ता फरी उगे ते. १०  
इच्छाइणो आणोगे, हवंति नेया अणेतकांयाणं ॥

तेसि परिजाणणत्रं, लखणमेयं सुए नणियं ॥११॥

शब्दार्थ—इत्यादि अनतकाय जीवोना अनेक जेदो होय रे, तेमने जाणवा माटे आ नीच लखेलु लकण सूत्रमा कह्हु रे ॥११

हवे अनतकाय वनस्पति जीवोनु लकण कहे छे

गूढसिरसंधिपवं, समञ्जंगमहीरुगं च ठिन्नरुहं ॥

साहारणं सरीरं, तविवरीयं च पत्तेयं ॥ १२ ॥

**शब्दार्थ—जेनां कणसला, सांधा के गांड्यो न देखाती होय, ज्ञागी नाखवाथी जेना सरखा वे ज्ञाग अता होय, जे रेसा विनाना होय, तथा जे ठेढ़ीने वावीएतो पण फरीने उगे ते साधा-रण वनस्पति कायनां शरीर कहेवाय अने तेनाथी विपरीत लक्षणवाली वनस्पति होय ते प्रत्येक जाणवी. ॥ १४ ॥**

हवे प्रत्येक वनस्पतिकायनुं लक्षण कहे छे.

**एगशरीरे एगो, जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया ॥**

**फलफूलठस्त्रिकषा, मूलगपत्ताणि वीयाणि ॥ १३ ॥**

**शब्दार्थ—वखी जेमनां एक शरीरने विपे एक जीव होय ते प्रत्येक जाणवा. ते प्रत्येक वनस्पति कायना सात ज्ञेद भे. सर्व जातिनां फल, फुल, ठाल, लाकडां, मूल, पांडडां अने वीज ए सर्व प्रत्येक वनस्पतिकाय जाणवा. ॥ १३ ॥**

हवे पांच स्थावर सूक्ष्मनुं वर्णन करे छे.

**पत्तेयतरु सुत्तं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए ॥**

**सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताऊ अहिस्सा ॥ १४ ॥**

**शब्दार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकायने मूकीने चौद राजलोकने विपे सूक्ष्म एवा पांचे पृथ्वीकायादि निश्चे अंतमुहूर्तनां आयुष्य-वाला अने अहृदय ( चर्मचक्रुथी न देखी शकाय तेवा ) होयरे.**

हवे वे इंद्रिय जोवोना भेद कहे छे.

**संखकवद्य गंडुल—जखोयचंदणगञ्च्रलसखहगाई ॥**

**मेहरिकिमिपूञ्चरगा, बेझंदिय माइवाहाई ॥ १५ ॥**

**शब्दार्थ—शंख, कोडा, गंकोला, जखो, चंदनक ( अस्त्रिया ) अखसिया, लालीया, मेर, ( लाकमाना कीमा ) करमीया, पोरा अने चूडेल विगेरे वेंडिय जीवो जाणवा. ॥ १५ ॥**

हवे तेद्रिय जीवोना भेद कहे छे

गोमीमंकणजूआ, पिपीलि उहेहिया य मकोमा ॥  
उद्धियघयमिल्लीउ, सावय गोगीमजाईउ ॥ १६ ॥  
गहहय चोरकीमा, गोमयकीमा य धन्नकीमा य,  
कुथुगुवालियझस्त्रिया, तेइंद्रिय इंदगोवाई ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—कानखजूरा, माकड, जू, कीमोयो, उधइ, वली  
मंकोमा, एलो, धीमेलो, सवा, गीगोमानी जातियो गवैया, घो-  
रकोडा, शाणनाकोडा, धान्यनाकोडा, कुयुआ, गोपालिका, एलो  
ग्रने उड्डोप ए सर्वे तेरिंद्रिय जीवो जाणवा ॥ १६-१७ ॥

हवे चउरिंद्रिय जीरोना भेद कहे छे

चउरिंद्रिया य विच्छू, ढिकुणज्ञमरा य ज्ञमस्त्रिया तिमा  
मत्तियमसा मसगा, कंसारो कविलमोलाई ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—वली विच्छी, वगाई, ज्ञमरा तेमज ज्ञमरी, तीम,  
माखी, डास, मच्चर, कमारी, कपिल अने खदमारुमी ए चउरि-  
ंद्रिय जीवो जाणवा ॥ १८ ॥

हवे पचेंद्रिय जीरोना भेद कहे छे

पंचिंद्रिया य चउहा, नारयतिरिया मनुस्सदेवा य ॥

नेरङ्गया सत्तविहा, नायव्वा पुढविन्नेष्टण ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—वली पचेंद्रिय जीवो चार प्रकारना रे तेमा १ ना-  
रकी, २ तिर्यंच, ३ मनुप्प्य अने ४ देवता. तेमा नारकी जीवो र-  
त्तमन्नादि पृथ्वीना ज्ञेयश्री सात प्रकारना जाणवा ॥ १९ ॥

हवे पचेंद्रिय तिर्यंचना भेद कहे छे

जलयरथलयरथयग, तिविहा पंचेंद्रिया तिर्यंक्षय ॥

सुमुमारमन्नकन्नव—गाहा मगगड जलचारी ॥ २० ॥

शब्दार्थ—वली तिर्यंच पचेंद्रिय जीवो त्रण प्रकारना रे ते

जलचर, अलचर अने खेचर तेमाँ 'सुसुमार, माठला, काचवा  
कुम अने मगर ए विगेरे जलचर जीवो जाणवा. ॥ ४० ॥

हवे यलचर जीवोना भेदो कहे छे.

चउपयउरपरिसिप्पा, ज्ञुयपरिसिप्पा य यलयरा तिविहा॥  
गोसप्पनउखेपमुहा, वोधवा ते समासेण ॥ ४१ ॥

**शब्दार्थ**—अलचर जीवो त्रण प्रकारना ठे. ते <sup>१</sup> चतुष्पद, <sup>२</sup> उ-  
रपरिसिर्प अने <sup>३</sup> ज्ञुजपरिसिर्प. ते अनुक्रमे गाय, सर्प अने नोदीया  
विगेरे संक्षेपश्री जाणी लेवा. ॥ ४१ ॥

हवे खेचर जीवोना भेदो कहे छे.

खयरा रोमयपखी, चम्मयपखी य पायमा चेव ॥

नरखोगाउ वाहिं, समुग्गपखी विययपखी ॥ ४२ ॥

**शब्दार्थ**—खेचर जीवो वे प्रकारना ठे. १ 'रोमजपक्षी, २ 'च-  
र्मजपक्षी. ते प्रसिद्धज ठे. वली मनुष्यलोकनो वहार संकोचेली  
पांखोवाला अने विस्तारेली पांखोवाला एम वे जातना पक्षीयोरे.

हवे जलचर थलचर अने खेचरना ववे भेदो कहे छे

सधे जलंथलखयरा, संमुच्चिसा गप्पया डुहा हुंति ॥

**कम्माकम्मगन्नूमि**—अंतरदीवा मणुस्सा य ॥ ४३ ॥

**शब्दार्थ**—सर्वे जलचर, अलचर अने खेचरजीवो समूर्द्धिम  
तथा गर्जज एवा वे प्रकारना ठे. वली मनुष्यो कर्मन्नूमिना, अ-  
कर्मन्नूमिना अने अंतर्दीपना एम त्रण प्रकारना वे. ॥ ४३ ॥

हवे वार निकायना देवोना भेदो कहे छे-

दसहा नवणाहिवई, अञ्चविहा वाणमंतरा हुंति ॥

जोझसिया पंचविहा, डुविहा वैमाणिया देवा ॥ ४४ ॥

१ आ जीवो पाढाना आकारे थाय छे. २ चार पगवाला. ३ पेटवती चालनारा.  
४ हाथवती चालनारा. ५ रुवालानी पांखोवाला, ६ चांमडानी पांखोवाला.

शब्दार्थ—ज्ञवनपति देवता दश प्रकारना, वार्णव्यंतर देवतां  
आठ प्रकारना, ज्योतिषी देवता पाच प्रकारना अने वैमानिक दे-  
वता वे प्रकारना होय रे ॥ ७४ ॥

हवे मिदना भेद कहे छे

सिद्धा पनरसन्नेया, तिड्डातिड्डाइसिद्धन्नेएण ॥  
एए संखेवेण, जीवविगप्ता समरकाया ॥ ७५ ॥

शब्दार्थ—तीर्थकर अने अतोर्थकरादि सिद्धा न्नेदे करीने  
सिद्धो पदर प्रकारना रे आ सकेपे करीने जीवना न्नेदो कह्या रे  
हवे आगली बात कहे छे

एएसिं जीवाणं, सरीरमाङ् ठिइ सकायंमि ॥  
पाणा जोणिपमाणं, जेसि जं अत्रि तं न्नणिमो॥७६॥

शब्दार्थ—ए जीवोनु शरीर, आयुष्य, पोतानी कायामा  
स्थिति, प्राण, योनिनु प्रमाण ए जेने जेट्लु रे ते कहीये ठीये.

हवे सात गाथाथी सर्वे जीवोना शरीरनु प्रमाण कहे छ  
अगुलअसंखन्नागो, सरीरमेगिदियाण सधेसि ॥

जोयणसहस्रमहियं, नवरं पत्तेयहस्तकाणं ॥ ७७ ॥

शब्दार्थ—सर्व एकेंद्रिय जीवोनु शरीर अंगुलना असरव्या-  
तमा न्नाग जेट्लु रे तेमा एट्लु विशेष जाणवानु रे के, प्रत्येक  
वनस्पतिकायनु शरीर एक हजार योजनथो काङ्क अधिक होयरे.  
वारसजोयणतिन्ने—वगाउच्चा जोयणं च अणुकमसो ॥  
वेझंदियतेझंदिय—चउरिंदिय देहमुच्यतं ॥ ७८ ॥

शब्दार्थ—वार जोजन, त्रण गाउ अने एक जोजन एम अ-  
नुकमे वेडिय तेंडिय अने चउरिंदियना शरीरनु उच्चपणु जाणवु  
धणुसयपचपमाणा. नेगङ्या सत्तमाङ्गुढवीए ॥  
तत्तो अद्विणा, नेया रयणप्पहाजाव ॥ ७९ ॥

**शब्दार्थ—सातमी तमस्तमःप्रज्ञा पृथ्वी आदिकमां रहेनारा**  
**नारको जीवो पाचसो धनुष्यनां शरीर प्रमाणवाला रे. त्यार परी**  
**अर्द्धा अर्द्धा उंडा शरीर प्रमाणवाला जीवो रत्नप्रज्ञा नामनी प-**  
**हेलो नरक सुधी जाणवा.** ॥ ४५ ॥

**जोयणसहस्रमाणा, महा उरगा य गन्धाया हुंति ॥**  
**धणुञ्च्रपुहुत्तं परिखसु, न्युयचारी गाउञ्च्रपुहुत्तं ॥ ३० ॥**

**शब्दार्थ—गर्भज** एवा मत्स्य अने सर्पादि उरपरि सर्प एक  
**हजार जोजन शरीर प्रमाणवाला होय रे.** पक्षीयोनां शरीरनुं  
**प्रमाण बे धनुष्यथो मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय ठे अने नो-**  
**लीया विगेरे न्युजपरि सर्पनुं शरीर प्रमाण बे गाउथो नव गाउ**  
**सुधीनुं होयठे.**

**खयरा धणुञ्च्रपुहुत्तं, भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं ॥**  
**गाउयपुहुत्तमिता, समुद्धिया चउपया न्यणिया ॥ ३१ ॥**

**शब्दार्थ—समूर्धिम** एवा खेचर ( पक्षीयो ) नां शरीरनुं प्र-  
**माण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय ठे अने ल-**  
**पर्पादि उरपरि लर्पनां शरीरनुं प्रमाण बे जोजनथी मांडीने नव**  
**जोजन सुधीनुं होय रे. समुर्धिम हाथी विगेरे चार पगवाला**  
**जीवोनां शरीरनुं प्रमाण बे गाउथी नवगाउ सुधीनुं कहुं रे.** ३१

**ठच्चेव गाउञ्च्राइं, चउपया गन्धया मुण्णेयदा ॥**  
**कोसतिं च मणुसा, उक्कोससरीरमाणेण ॥ ३२ ॥**

**शब्दार्थ—गर्भज** चार पगवाला हाथी विगेरे जीवो उ गा-  
**उनां शरीर प्रमाणवाला मनाय ठे अने मनुष्यो उत्कृष्ट शरीरना**  
**प्रमाणे करीने त्रण गाउ होय ठे.** ॥ ३२ ॥

**ईसाणंतसुराणं, रयणीचे सत्त हुंति उच्चतं ॥**

दुग दुग दुग चन्तुरेवि—ज्ञाणुत्तरे इक्किकपरिहाणी ॥३३॥

शब्दार्थ—वीजा ईशान देवलोकना अत सुधीना ज्वनपति, व्यंतर, ज्योतिषी देवोना शरीरनी उंचाइ सात हाथनीरे त्यार पठी वे, वे, वे, चार, नव ग्रैवेयक अने पांच अनुजर ए देवलोकोमा अनुक्रमे एक एक हाथ शरीर प्रमाण उंडु जाएबु ॥३३॥

हवे छ गाथावडे सर्वे जीवोनु आयुष्य कहे रे

वावीसा पुढीए, सत्य आउस्स तिन्नि वाउस्स ॥

वाससहसा दस तरु—गणाण तेउ त्तिरित्ताउ ॥३४॥

शब्दार्थ—पृथ्वीकायनु वावीस हजार वर्षनु, अप्कायनु सात हजार वर्षनु, वायुकायनु त्रण हजार वर्षनु, प्रत्येक वनस्पतिकायनु दश हजार वर्षनु अने तेउकायनु त्रण अहोरात्रनु उक्कष्ट आयुष्य होय रे ए सर्वे जीवोनु जघन्यथी अत्मुहूर्तनु आयुष्य होय रे वासाणि वारसाऊ, वेझंदियाणि तेझंदियाणि तु ॥

अउणापन्नदिणाइ, चउरिदीणि तु ठम्मासं ॥३५॥

शब्दार्थ—वडिय जीवोनु आयुष्य वार वर्षनु, तेरिंडिय जी-वोनु उगणपचास दिवसनु अने चतुरिंडिय जीवोनु व मासनु होय रे आ सर्व उक्कष्ट आयुष्य जाएबु अने ए सर्वे जीवोनु जघन्यथी अंत्मुहूर्तनु आयुष्य जाएबु ॥३५॥

सुरनेरझ्याण ठिई, उकोसा सागराणि तितीसं ॥

चउपयतिरियमणुस्सा, तिन्नियपलियोवमा हुंति ॥३६॥

शब्दार्थ—देवता अने नारकीयोनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति तेब्रीस सागरोपमनी होय रे अने चार पगवाला तिर्यच तथा मनुष्योनी उक्कृष्ट आयुष्यस्थिति त्रण पछ्योपमनी होय रे ॥३६॥

जखयरञ्जुयगाणि, परमाऊ होइ पुष्पकोमीउ ॥

परखीणि पुण जणिउ, असंखज्जागो अ पलियस्स ३७

**शब्दार्थ—**सुसुमार विगेरे जलचर, सर्प विगेरे उरपरिसर्प  
अने नोकीया विगेरे ज्ञुजपरिसर्प ए सर्वेनुं उत्कृष्ट आयुष्य एक  
पूर्वकोडीनुं होयठे. तेमज पक्षीयोनुं उत्कृष्ट आयुष्य पछ्योपमना  
असंख्यातमां ज्ञाग जेटलुं कह्युं ठे. ॥ ३७ ॥

सदे सुहुमा साहा—रणा य संमुच्चिमा मनुस्सा य ॥

**उक्तोसजहन्नेण,** अंतमुहुतं चिय जियंति ॥ ३७ ॥

**शब्दार्थ—**पृथ्वीकायादि पांचे सूहम तथा साधारण जीवो  
तेमज समृद्धिम मनुष्यो उत्कृष्ट अने जघन्यथी एक अंतमुहूर्त  
निश्चे जीवे ठे. ॥ ३७ ॥

उगाहणाउमाणं, एवं संखेवउ समख्कायं ॥

जे पुण इत्र विसेसा, विसेसमुत्ताउ ते नेया ॥ ३८ ॥

**शब्दार्थ—**एवी रीते अवगाहणा अने आयुष्यनुं मान संके-  
पथी कह्युं. वली एमां जे कांइ विशेष जाणवानुं होय ते विशेष  
सूत्रथी जाणी लेवुं. ॥ ३८ ॥

हवे वे गाथाथी त्रीजुं स्वकायस्थितिद्वार कहे छे.

एगिंदिया य सदे, असंखउस्सपिणी सकायंमि ॥

**उववज्जंति** चयंति अ, अणंतकाया अणंताउ ॥ ४० ॥

**शब्दार्थ—**वली सर्वे एकेंद्रिय जीवो पोतानी कायामां असं-  
ख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल सुधी उत्पन्न थाय ठे अने चवे  
ठे तेमज अनंतकाय जीवो पण अनंतीवार पोतानी कायामां  
उत्पन्न थाय ठे अने चवे ठे. ॥ ४० ॥

संखिङ्गसमा विगला, सत्तच्छ्ववा पणिंदितिरिमण्या ॥

**उववज्जंति** सकाये, नारयदेवा अ नो चेव ॥ ४१ ॥

**शब्दार्थ—**विगलेंद्रिय जीवो संख्याता वर्ष सुधी लागट पो-

तानी कायामां उत्पन्न थाय पंचेद्रिय, तिर्यच अने मनुष्यो सात  
आठ ज्ञव तेज गतिमा लागट उत्पन्न थाय अने नारकी तथा  
देवता तेज ज्ञवमा लागट वे बखत पश उत्पन्न थता नथी ॥४१॥

दशहा जियाण पाणा, इंदि उसासाज जोग बलरूपा ॥  
एगिदिएसु चउरो, विगलेसु रसत्तथ्रेव ॥४२॥

शब्दार्थ-जीवोने इंडिय, श्वासोच्चास, आयुष्य, मन, वचन  
अने काया ए त्रण जोगना त्रण बख मली दश प्राणो होय ठे  
तेमा एकेडियने चार, तथा विगलेडियने व, सात अने आठ प्राण  
अनुक्रमे होय ठे ॥ ४३ ॥

असन्निसन्निपंचि-दिएसु नवदश कमेण वोधवा ॥  
तेहिं सह विष्पञ्जगो, जीवाणं ज्ञणए मरणं ॥४३॥

शब्दार्थ-असङ्की पंचेडिय अने सङ्की पंचेडिय जीवोने विषे  
अनुक्रमे नव अने दश प्राणो होय ठे ते प्राणोनी साथे जे वियोग  
थवो ते जीवोनु मरण कहेवाय ठे ॥ ४३ ॥

एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि ज्ञीमंमि ॥

पत्तो अणांतखुतो, जीवेहि अपत्तधम्मेहि ॥४४॥

शब्दार्थ-धर्मने नहि पामेला जीवोए ए प्रमाणे अपार अने  
ज्ञयकर एवा संसार समुद्रमा अनतीवार जन्ममरण प्राप्त करयु  
तह चउरासी लखका, संखा जोणीण होइ जीवाणं ॥  
पुढवाईण चउएह, पत्तेयं सत्तसत्तेव ॥४५॥

शब्दार्थ-तेवीज रीते जीवोनी योनीनी सख्या चोरासी  
खाख ठे तेमा पृथ्वी आदि चार निकायना दरेक जीवोनी योनी-  
नी सख्या सात सात खाखनी ठे ॥ ४५ ॥

दस पत्तेयतरुणं, चउदसलखका हवंति इयरेसु ॥  
विगलिदिएसु दोदो, चउरो पंचिदितिरियाणं ॥४६॥

शब्दार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवोनी दशलाख योनी  
अने माधारण वनस्पतिकायनी चौदशलाख योनी होय ठे. वली वि-  
गलेंडिय जीवोनी ववे लाख योनी जाणवी तेमन्न पंचेंडितियंच-  
नी चार लाख योनी जाणवी. ॥ ४६ ॥

चञ्चुरो चञ्चुरो नारय—सुरेसु मणुआण चञ्चदस हवंति ॥  
संपिंमियाय संवे, चखसीखस्काउ जोगोण ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—नारकी अने देवतानी चार चार लाख तथा मनु-  
प्यनी चौड लाख योनी होय ठे. ए सर्व एकठी करीये तो सर्व मली  
योनीनी चोरासी लाखनी संख्या आय ठे. ॥ ४७ ॥

सिद्धाण न त्रि देहो, न आउ कम्मं न पाणजोणीउ ॥  
साइअणांता तेसिं, ठिई जिणांदागमे ज्ञणिया ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—सिद्धोने देह नशी, आयुष्य नशी, कर्म नशी, प्राण  
नशी अने योनी पण नशी. वली तेउनी सादि अनंतस्थिति जिने-  
श्वरना आगममां कही ठे. ॥ ४८ ॥

काले अणाइनिहणे, जोणीगहाणमि ज्ञीसणे इठ ॥  
ज्ञमिया ज्ञमिहंति चिरं. जीवा जिणावयामखहंता ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ—अनादि अनंत एवा कालने विषे जिन वचनने नहि  
पामेला जीवो चोराशी लाख योनिये करीने गहन अने ज्ञयंकर  
एवा आ संसारने विषे बहुकाल ज्ञम्या ठे अने बहुकाल ज्ञमझे. ॥

ता संपइ संपत्ते, मणुआत्ते उद्घाहेवि सम्मते ॥

सिरिसंतिसूरिसिठे, करेह ज्ञो उङ्गमं धम्मे ॥ ५० ॥

शब्दार्थ—ते कारण माटे हे ज्ञव्यजनो! हवणा उद्घान्न एवुं  
मनुष्यपणुं प्राप्त थये ठते अने सम्यक्तव पण प्राप्त थये ठते श्री  
शांतिसूरिये उपदेश करेला धर्मने विषे उद्यम करो. ॥ ५० ॥

एसो जीववियारो, संखेवरुईणजाणणाहेऊं ॥  
संखितो उद्धरिति, रुद्धात् सुयसमुद्धात् ॥५१॥

शब्दार्थ-आ जीवविचार श्रीडी बुद्धिवाला जीवोने जाणवा  
माटे विस्तारवत एवा श्रुतसमुइ थकी सहेपे उद्धत्यो रे, ॥५१॥  
॥ इति जीवविचार प्रकरण पेहेलुं समाप्त ॥

ओ

॥ नवतत्त्व प्रकरण वीजुं ॥

( आर्यावृत्तम् )

प्रथम गायामा नवतत्त्वना नाम गणावे छे  
जोवाऽजीवा पुसां, पावासवसंवरो य निङ्करणा ॥  
वंधो मुख्को य तहा, नवतत्ता हुंति नायद्वा ॥ १ ॥

शब्दार्थ-जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आत्रव, सवर अने  
निङ्करा वली वध तेमज मोक्ष ए नवतत्त्वों जाणवा योग्य रे ॥  
हवे नवतत्त्वना भेदनी सख्या कहे छे

चउदस चउदस वाया-खीसा वासी अ हुति वायाला ॥  
सत्तावन्नं वारस, चउ नव ज्ञेया क्षमेणोसिं ॥ २ ॥

शब्दार्थ-पहेला तत्त्वना चौद, वीजाना चौद, त्रीजाना बै-  
तालीश, चोथाना व्यासी अने पाचमाना बैतालीस, चैताना सत्ता-  
वन, सातमाना वार, आठमाना चार अने नवमाना नव एवा  
अनुक्रमे करीने ज्ञेदो थाय रे, ॥ २ ॥

हे जीर्णोनो छे जाति कहे छे.

एकविहङ्गविहतिविहा, चउविहा पंचरविहा जीवा ॥  
चेयणतसङ्गरेहि, घेयगर्डकरणकाएहिं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—चेतना, त्रस अने स्थावर ए नेदोए करीने वली त्रण वेद, चार गति, पांच इंडिय अने ठ काये करीने जोवो एक प्रकारना, वे प्रकारना, त्रण प्रकारना, चार प्रकारना, पांच प्रकारना अने ठ प्रकारना जाणावा. ॥ ३ ॥

हवे वीजा प्रकारथी जीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे.

**एगिंदिय सुहुमियरा, सन्नियरपणिंदियाय य सवितिचक्का॥  
अपजत्ता पञ्जत्ता, कम्बेण चल्लदस जियघाणा ॥ ४ ॥**

शब्दार्थ—सूहम अने वादर एवा एकेइय, वादर वेईइय, ते-रिंडिय अने चउरिंडिय, संझो अने असंझी पंचेइय ए सात नेद पर्याप्ता अने अपर्याप्ता. जेथी अनुक्रमे जीवना चौद नेद होय ॥

हवे जीवनुं लक्षण कहे छे.

( अनुष्टुप् वृत्तम् )

नाणं च दंसणं चेव, चरितं च तवो तहा ॥

वीरियं उवउगो अ, एच्चं जीवस्स लखणम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने तप तेमज वीर्य अने उपयोग ए प्रकारे जीवनुं लक्षण डेहे. ॥ ५ ॥

हवे पर्याप्तिनुं स्वरूप कहे छे.

( आर्यवित्तम् )

आहार शरीर इंदिय, पञ्जत्ती आणपाणज्ञासमणे ॥

चउ पंच पंच ठपित्र, इग विगलासन्नि सन्निणं ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—आहारपर्याप्ती, शरीरपर्याप्ती, इंदियपर्याप्ती, श्वासो वृासपर्याप्ती, ज्ञापापर्याप्ती, मनपर्याप्ती. तेमां चारपर्याप्ती एकेइयनी, पांच पर्याप्ती विकलेइयनी, पांच पर्याप्ती असंझीनी अने ठ पर्याप्ती संझो जीवोनी होय डेहे. ॥ ६ ॥

हवे प्राणनु स्वरूप कहे छे.

पणिंदिअत्तिबलूसा-साउ दश पाण चउ र सग अष्ट॥  
इगडतिचउरिदीएं, असन्निसन्नीएं नव दस य ॥४॥

शब्दार्थ—पाच इङ्गिय, त्रण वल, श्वासोश्वास अने आयुष्य ए  
दश प्राणे रे तेमा एकेइयने चार प्राण होय रे वेंडियने र प्राण  
होय रे, तेरिइयने सात प्राण होय रे चउरिइयने आठ प्राण होय  
रे अने असंझी तथा सङ्झीने नव तथा दश एम अनुकमे प्राण हो-  
य रे ॥ ४ ॥ इति जीवतत्त्व ॥

हरे अजीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे

धम्माधम्मागासा, तियतियज्जेया तहेव अद्धा य ॥  
खंधादेसपयेसा, परमाणु अजीव चउदसङ्गा ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने आकाशास्ति-  
काय ए त्रणना खव, देश अने प्रदेश एवा त्रण त्रण ज्ञेदो रे.  
एटले ते नव ज्ञेद धया तेवोज रीते वलो काल, अने पुज्जलना  
खंध, देश, प्रदेश तथा परमाणु ए प्रमाणे अजीवतत्त्व चौद  
प्रकारे रे ॥ ५ ॥

अजीवतत्त्वना पाच मूलभेद अने तेना लक्षण कहे छे

धम्माधम्मा पुग्गल, नह कालो पंच हुंति अजीवा ॥  
चलाणसहावो धम्मो, यिर संठाणो अहम्मो अ ॥ ६ ॥  
अवगाहो आगासं, पुग्गलजीवाण पुग्गला चउहा ॥  
खंधा देसपएसा, परमाणुं चेव नायद्वा ॥ १० ॥

शब्दार्थ—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, पुज्जलास्तिकाय,  
आकाशास्तिकाय, काल ए पाच अजीव इव्य होय रे तेमा च-  
लन स्वज्ञाव गुणवालो धर्मास्तिकाय रे अने स्थिर स्वज्ञाव गुण-  
वालो अधर्मास्तिकाय रे अवकाश आपवाना स्वज्ञाववालो आ-

काशास्तिकाय जाणवो. पुज्जदो चार प्रकारनाडे. ते खंध, देश,  
प्रदेश तथा परमाणुं निश्चयशी जाणवा. १०

पुद्गलनुं लक्षण कहे छे.

( अनुष्टुम् वृत्तम् )

सहंधयार उज्जोअ, पञ्चा ग्राया तवेहि आ ॥

वस्मगंधरसा फासा, पुग्गलाणं तु लखणाणं ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—शब्द, अंधकार रत्नादिकनो प्रकाश, चंड विगेरेनो  
कांति, ग्राया तडको अथवा वर्ष, गंध, रस अने स्पर्श ए वली पु-  
ज्जलोनुं लक्षणाडे. ॥ ११ ॥

हवे एक मुहूर्तनुं स्वरूप कहे छे.

एगा कोमि सतसठि—लखका सत्तहुतरी सहस्राय ॥

दोयसया सोखाहिया, आवलिया इगमुहुतम्मि ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—एकक्रोड, सडसठलाख, सत्योतरहजार अने वसो  
उपर सोल अधिक एटली आवलोयो एक मुहूर्तने विवे थाय डे. ॥

तेज बातने बीजी रीते कहे छे

तिन्निसहस्राया सत्त, यसयाणि तेहुतरं च उस्सासा ॥

इस मुहुतो नणीड, सद्वेहिं अणंतनाणीहिं ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—सर्व अनंत ज्ञानियोए त्रणहजार, सातझो अने तों-  
तेर एटला श्वासोश्वास थाय. एटले काल मुहूर्त कह्यो डे. ॥ १३ ॥

हवे कालनुं स्वरूप कहे छे.

समयावली मुहुता, दीहा परकाय मास वरिसाय ॥

नणीड पलिया सागर, उस्सप्पिणी सप्पिणी कालो ॥

शब्दार्थ—समय, आवली, मुहूर्त, दिवस, पक्ष, मास, वर्ष,  
पछ्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी अवृत्सर्पिणी ए प्रमाणे काल क-  
ह्यो डे. ॥ १४ ॥ इति अजीवतत्त्व.

( १४ )

हवे पुण्यतत्त्वना वेतालीश भेद कहे छे

सा उच्चगोत्र मणुष्णुग, सुरङ्ग पंचेदिजाऽपणदेहा ॥  
आश्वितपणुष्णुवगा, आश्विमसधयणसंघणा ॥१५॥

शब्दार्थ—सातावेदनी कर्म, उच्चगोत्र, मनुष्यविक, सुरचिक,  
पंचेदि जाति अने पाच देह तेमा पहेला त्रेष शरीरना अँग अने  
चूपांग, अने पहेलु [ वज्रशपननाराच ] सधयण तथा पहेलु  
[ समचतुरस्त्र ] संस्थान ॥ १५ ॥

वसु चञ्जकागुरुखहु, परघा ऊसास आय बुज्जोत्रा ॥  
सुन्नखगइ निमिण तसदस, सुरनरतिरिआउ तिर्थयरं ॥

शब्दार्थ—वर्णचतुष्क नामकर्म, अगुरु लघु, परघात, श्वासो-  
श्वास, आताप, उद्योत, हंस वृपननी पेरे सारी चालते शुन्न  
विहायोगति, सुघाट रूप निर्माण, त्रसदसक, देव, मनुष्य अने  
तिर्थचनु आयुष्य अने तीर्थकर नामकर्म ॥ १६ ॥

हवे तस दशकनु स्वरूप कहे छे  
तस वायर पज्जत्तं, पत्तेय यिर सुन्नं च सुन्नगं च ॥

सुस्सर आझज्ज जसं, तसाइदसगं इमं होइ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—त्रस, वाढर, पर्याप्ती प्रत्येक, स्थिरता, शुन्न, सौन्ना-  
ग्य, सुस्सर, आदेय अने जस पुण्यना नेदमा आ त्रस विगेरे दशा  
नाम कर्म होयरे ॥ १८ ॥ इति पुण्यतत्त्व

हवे पापकर्मना वासी भेद कहे छे  
नाणंतरायदशगं, नव वीए नीअसायमिन्नतं ॥  
यावरदस नरयतिगं, कसायपणवीस तिरियज्जुग ॥१८॥

\* औदारिक, वैकिय, आहारक • ये हाथ, ने पग, पीठ, मम्तक, उटर  
अने हृदय. ३ आगला चिगेरे ४ आ त्रस दशनु स्वरूप आगली गाथामां कहेशे

**शब्दार्थ—ज्ञानावरणीनां पांच अने अंतरायनां पांच एम वन्ने मखीने दशा पापकर्मना न्नेद, वीजा दर्शनावरणी कर्मना नवन्नेद, नीच गोत्र पापकर्म, अशातावेदनी पापकर्म, मिथ्यात्व पापकर्म, स्थावर दशक पापकर्म, नरकत्रिक पापकर्म, पञ्चीश कपाय रूप पापकर्म, तिर्यंचद्विक पापकर्म. ॥ १७ ॥**

**इगवितिवज्जाईऽ, कुख्यगङ् उवधाय हुंति पावस्स ॥  
अपसर्वं वसुचक्षु, अपदम संघयणसंराणा ॥१८॥**

**शब्दार्थ—एकेंडिय, वैङ्गिय, तेरिंडिय अने चोरेंडिय जातिरूप पापकर्म, उंट विगेरेनी पेरे अशुज्ज विहायोगति पापकर्म, उपधात नाम पापकर्म, मारा एवा रूप, रस, गंध अने स्पर्शरूप पापकर्म, तेमज पहेला संघयण अने पहेला संस्थान विनाना वीजा संघयण अने संस्थान रूप पापकर्म. ॥ १८ ॥**

हवे स्थावर दशकनुं स्वरूप कहे छे.

**थावर सुहुम अपज्ञं—साहारणमयिरमसुज्जउज्जगाणि ॥  
इस्सरणाइज्जजसं, थावरदशगं विवज्ञहुं ॥१९॥**

**शब्दार्थ—स्थावर नामकर्म, सूक्ष्म नामकर्म, अपर्याप्त नाम कर्म, साधारण नामकर्म, अस्थिर नामकर्म, अशुज्ज नामकर्म, दौर्जन्य नामकर्म, इःस्वर नामकर्म, अनादेय नामकर्म, अजश नामकर्म. आ स्थावर दशक त्यजी देवाना अर्धरूप थे. ॥१९॥**

हवे वीजा दर्शनावरणी कर्मना नव भेद कहे छे.

**चकुदिति अचकु, सेसिंदित्यपत्ति केवलेहिं च ॥  
दंसणमिह सामन्नं, तस्सावरणं तयं चउहा ॥२०॥**

**शब्दार्थ—चकुदर्शन, अचकुदर्शन, अवधिदर्शन अने केवल**

१ आ स्थावर दशकनुं स्वरूप आगली गाथामां कहेशे.

२ नरकत्रिक, नरकानुपूर्वि अने नरकायु.

दर्शन आ ठेकाणे दर्शन ते सामान्यज्ञान ते ज्ञाननुं जे आवर्ण,  
ते आवर्ण चार प्रकारनु रे ॥ ७१ ॥

सुहपमिवोहा निष्ठा, निष्ठानिष्ठा य उखपमिवोहा ॥  
पयला ठि उवविष्टस्स, पयलपयलाउ चंकमउ ॥७३॥

**शब्दार्थ—**सुखे जगाय ते निष्ठा, डुखे जगाय ते निष्ठा निष्ठा,  
उज्जा उज्जा तथा वेगा वेगा उघे ते प्रचला अने हालता चालता  
उघे ते प्रचला प्रचला कहेवाय ॥ ७३ ॥

दिणचितिअरुकरणी, ब्रीणदी अद्वचकिअद्वचला ॥  
एवं जिणेहि जणियं, वित्तिसमं दंसणावरणं ॥७४॥

**शब्दार्थ—**दिवसे चितवेळा कार्यने [ सात्रोये उघमा ] करना-  
री ब्रीणदी नामनी निष्ठा अद्वचक्री वासुदेवथी अर्ज वलवाली रे  
आ प्रमाणे जिनेश्वरोए ईमीदार समान दर्शनावरण कह्यु रे ॥७४॥

द्वे कपायनी स्थिति तथा फल कहे ते

जावजीववस्तुचञ्जमा—स पग्कग्निरयतिरियनरअमग॥  
समाणुं सद्व विरइ—अहरकायचरित घायकरा ॥७५॥

**शब्दार्थ—**अनतानुवधो कपायनी स्थिति जीवीत सुपी,  
अप्रत्याख्यान कपायनी स्थिति एकवर्ष सुधी, प्रत्याख्यान कपाय  
नी स्थिति चारमास सुधो, सजलना कपायनी स्थिति एक पग्ब-  
वाढीया सुधी दोय रे तेमा अनंतानु वंधी कपाय नरक गतिरूप  
फल आपे रे अप्रत्याख्यानी कपाय तिर्यच गतिरूप फल आपे रे,  
प्रत्याख्यानी कपाय मनुप्य गतिरूप फल अने संजलनो कपाय  
देवगतिरूप फल आपे रे वसी ते चारे कपायो अनुक्रमे समझी-  
तने, अणुप्रतने, मर्द विरतने अने यथाख्यात चाग्निने घात फ-  
रनाग रे. ॥ ७५ ॥

जलरेणु पुढवि पवय—राईसरिसो चउबिहो कोहो ॥  
तिणसखायाकछीआ—सेखत्रंनोवमो माणो ॥४६॥

शब्दार्थ—जलमां, रजमां, पृथ्वी उपर अने पर्वत उपर क-  
रेखी रेखा सरखो कोध चार प्रकारनो रे अने तृणना, सखीना,  
काष्ठना, हाडकाना अने पछ्यरना स्थंन सरखो मान रे. ४६

माया बलेहिगोमुत्ति—मिंडसिंगघणवंसिमूखसमा ॥

लोहो हलिदखंजण—कदमकिमिरागसारिढो ॥४७॥

शब्दार्थ—माया वांसनी ठाल, वृपन्ननुं मूत्र, बोकडानुं सिं-  
गनुं अने नीविड एवा वांसना मूल सरखो रे. बली लोन्न हलदर,  
गामानी मली, कादव अने करमजी रंग सरखो रे. ४७॥

जस्मुदया होइ जिए, हासरझरईसोगञ्जयकुडा ॥

सनिमित्तमन्नहावा, तं इह हासाईमोहणियं ॥४८॥

शब्दार्थ—जीवने जेना उदयथी निमित्त सहित अथवा नि-  
मित्त विना हास्य, रति, अरति, शोक, नय अने डुङ्गडा होय रे.  
तेने अहिं हास्यादिक मोहनीय जाणवुं. ॥ ४८ ॥

पुरिसि ढीतझन्यंपइ, अहिखासो जबसा हवइ सोउ ॥

ढीनरनपुंवेउदउ, फुंफुमतणनगरदाहसमो ॥४९॥

शब्दार्थ—जे कर्मना वशीष्टी पुरुषनो, स्त्रीनो अने ते बनेनो  
पण अनिलाष होय रे. ते अनुक्रमे स्त्रीवेद, पुरुषवेद अने नपुंसकवेद,  
बकरानो दींडी, धास अने नगरना दाह सरखो जाणवो. ॥४९॥

हवे मंधयणनां नाम तथा स्वरूप कहे छे.

संघयणमठिनिचउ, तं ढष्टा वज्ञरिसहनारायं ॥

तह रिसहनारायं, नारायं अर्घनारायं ॥५०॥

शब्दार्थ—संघयण ते हाम्कानो समूह. ते उ प्रकारनो रे. १  
वज्ञरिसहनाराच तेमज २ क्षषनाराच, ३ नाराच, ४ अर्घनाराच.

कीलिअ ठेवठं इह, रिसहो पट्टो अ कीलिया वज्ञां॥  
उन्नत मक्कमवधो, नारायं इम मुरालिंगे ॥३०॥

**शब्दार्थ—**५ कीलिका, ६ सेवार्त, आदि रूपन्ननाराच ते खी-  
लो रहित पाटो अने मर्कटवध ते जाणवो वन्ने वाजुए मर्कटवंध  
ते नाराच जाणवु ए उदासिक शरीरवालाने दोय ॥ ३० ॥

हवे सस्थानना नाम तथा स्वरूप कहे छे  
समचन्नरंस निगोह, साझ वामण खुङ्क हुँमे अ ॥  
जीवाण ठ सराणा, सबूत सुखरक्षणं पढमं ॥३१॥

**शब्दार्थ—**समचतुरस्त्र, न्यग्रोध, सादि, वामन, कुञ्ज अने  
हुँक जीवोने ए ठ सस्थान होय वे तेमा सर्व प्रकारे उन्नम ल-  
क्षणवालु पहेलु सस्थान चे ॥ ३१ ॥

नाहिनुवरि बोअ्रं, तइअ्रं मुह पिठिअरउरवज्ञं ॥  
सिरगिवपाणीपाए, सुखरक्षणं तं चउर्चं तु ॥३२॥

**शब्दार्थ—**नाज्ञीना उपरनो ज्ञान सारा लक्षणवालो होय ते  
बोजु सस्थान जाणवु अने मुख, पीठ, पेट तथा भाती वर्जीने  
वाको जे सुखरक्षण अग ते त्रीजु सस्थान वसी माथुकठ, हाथ तथा  
पग ए सर्व सारा लक्षणवालु होय ते चोथुं सस्थान जाणवु ॥३२॥

विवरियं पंचमंगं, सबूतखरक्षणं नवे ठषं ॥

संघाणविहा न्नणिअ, जिएंदवरवीयरागेहि ॥३३॥

**शब्दार्थ—**उपर कहाश्री जे विपरीत ते पाचमु अने सर्व प्र-  
कारे खोटा लक्षणवालु दोय ते उतु होय आ प्रमाणे सामान्य  
केवलीनो मध्ये उन्नम एवा वीतराग पुरुपोए सस्थानना प्रकारो  
कह्या वे ॥ ३३ ॥ इति पाप तत्त्व ॥

हवे आश्रय तन्नना वैतालीश भेद कहे छ

इंदित्रकसायत्रव्य—जोगा पंच चतुर्पंचतिनि कमा ॥  
किरिआउ पणवीसं, इमा उ ताउ अणुक्कमसो ॥३४॥

शब्दार्थ—इंडिय, कपाय, अव्रत अने जोग ते अनुक्रमे पांच, चार, पांच अने त्रय रे अने क्रियाउ पञ्चवीश रे. ए सर्वे मरीने आश्रवना वेतालीश ज्ञेद थया. वली क्रियाउ अनुक्रमे आ हवे पर्वी कहेवाशे ते जाणवी. ॥ ३४ ॥

हवे पञ्चीस क्रियाओ कहें छे.

काइअ अहिगरणीया, पाऊसिया पारितावणी किरिया॥

पाणाइवाया रंजिय—परिग्रहिया मायवत्तीया ॥३५॥

शब्दार्थ—कायिकी, अविकरणिकी, प्राष्ट्रेपिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपातिकी, आरंभिकी, पारिग्रहिकी अने माया प्रत्ययिकी. मिहादंसणवत्तो, अप्पच्चरक्काण दिठि पुष्टिअ ॥

पाङुच्चिअ सामंतो—वणीअ नेसत्यिसाहत्यी ॥३६॥

शब्दार्थ—मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, अप्रत्याख्यानिकी, हृषिकी, स्पृष्टिकी, प्रातित्यकी, सामंतोपनिपातिकी, नैशस्त्रिकी अने स्वहस्तिकी. ॥ ३६ ॥

आणवणिविअरणिअ, अणन्नोगा-अणवकंखपञ्चइअ  
अन्ना पञ्चगसमुदा—णपिङ्गदोसेरिअवहिअ ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—आनयनिकी, विदारणिका, अनाज्ञोगिकी, अनवकांक्ष प्रत्ययिकी, ए विना बीजी ते प्रायोगिकी, समुदानकी, प्रेमिकी, द्वेषिकी अने इर्यापथिकी ॥ ३७ ॥

हवे संवरतत्त्वना सज्जावन भेद कहे रे.

समिइ गुत्ति परीसह, जइधम्मो ज्ञावणा चरित्ताणि ॥

पण तिड्डवीस दसबार—पंच ज्ञेएहिं सगवन्ना ॥३८॥

शब्दार्थ—समिति, गुप्ति, परीसह, यतिधर्म, ज्ञावना अने चा-  
रित्र ते अनुकूले पाच, त्रण, वावीश, दश, वार अने पाच एवा ज्ञे  
दोए करीने संवरना सज्जावन न्नेदो छे ॥ ३७ ॥

हवे पाच समिति अने नण गुप्ति कहे छे  
( अनुष्टुप् वृत्तम् )

ईरिया ज्ञासेसणादाणे—उच्चारे समिइसु अ ॥

मणगुप्ति वयगुप्ति, कायगुप्ति तहेव य ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—इर्यासमिति, ज्ञापासमिति, एपणासमिति, आदा-  
नसमिति, उच्चारसमिति ए पाच समिति वली मनगुप्ति, वचन-  
गुप्ति तेमज कायगुप्ति ए त्रण गुप्ति जाणवी ॥ ३८ ॥

हवे वावीस परीसह कहे छे

खुहा पिवासा सी उएह, दसा चेला रईच्छिउ ॥

चरित्रा निसिहिया सिझा, अकोस वह जायणा ४०

शब्दार्थ—कुधा, पासा, सीत, उपण, दंस, अचेल, अरति, स्त्री,  
चर्या, निपद्या, सख्या, आकोश, वध अने याचना ॥ ४० ॥

अखाज्जरोगतणफासा, मलसकार परीसहा ॥

पन्नाज्जाणसम्मत, उत्र वावीस परीसहा ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ—अखाज्ज, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार, प्रङ्गा,  
अङ्गान अने सम्यक्त्व ए प्रकारे वावीस परिसह जाणवा ॥ ४१ ॥

हवे दश प्रकारे यतिधर्म कहे छे

खती मदव अज्जव, मुत्ती तवसजमे अ बोधवे ॥

सज्ज सोउत्र आकि—चण च वज्ज च जङ्घधम्मो ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ—कृमा, मार्दव, आर्जव, मुक्ति, तप, सयम, सत्य,  
शोच अकिंचन अने वह्यचर्य ए दश प्रकारे यतिधर्म जाणवो

हवे वार भावनानु स्वरूप कहे छे

पठमंमणिच्च मसरणं, संसारो एगया य अन्वर्तं ॥

असुइत्तं आसव सं—वरो अ तह णिङ्गरा नवमी ४३

शब्दार्थ—पहेली अनित्य, बीजी असरण, त्रीजी संसार, चोथो एकत्व, पांचमी अन्यत्व, ठगे असुचित्व, सातमी आश्रव, आठमी संवर, तेमज नवमी निर्झरा ज्ञावना जाणवी. ४३

लोगसहावो बोधी, उत्स्वरा धम्मस्स साहगा अरिहा॥  
एआउ ज्ञावणाउ, ज्ञावेअद्वा पयत्तेण ॥४४॥

शब्दार्थ—दशमी लोक स्वज्ञाव, अग्यारमी बोधी, वारमी धर्मनी साधक अरिहंत ज्ञावना उर्ध्वज्ञ ठे. ए ज्ञावना प्रयत्ने करीने ज्ञाववी. ॥ ४४ ॥

हवे पांच प्रकारनां चारित्रनुं वर्णन करे छे.

सामाइ अरु पढमं, ठेउवष्टावणं ज्ञवे बीचं ॥

परिहारविसुधीचं, सुहुमं तह संपरायं च ॥४५॥

शब्दार्थ—अहिं पहेलुं सामायक, बीजुं ठेदोपस्थापनीय, त्रीजुं परिहार विशुद्धि, अने तेमज चोथुं सुहुमसंपराय चारित्र. ४५  
ततो अ अहस्कायं, खायं सद्वंमि जीवलोगंमि ॥

जं चरिकण सुविहिया, वच्चंति अयरामरं ठाणं ॥४६॥

शब्दार्थ—वाली त्यारपठी सर्व लोकमां प्रसिद्ध एवुं पांचमुं यथारव्यात चारित्र ठे के, जे चारित्रने पाली सुविहित पुरुषो मोक्ष स्थानने पामे ठे. ॥ ४६ ॥

हवे निर्जरातच्चना वार भेद छे.

अणसणमुणोअरिया, वित्तीसंखेवणं रसच्चाउ ॥

कायकिल्लैसा संलो—णया य बज्जो तवो होई ॥४७॥

शब्दार्थ—अनशन, उनोदरिका, वृत्तिसंकेप, रसत्याग, काय

( ४५ )

खेश, अने सखीनता ए व प्रकारे वाह्य तप होय रे. ॥ ४७ ॥

पायच्छ्रितं विणञ्ज, वेयावच्चं तहेव सज्जाञ् ॥

जाणं उस्समग्गोवि अ, अप्नितरञ्ज तवो होइ ॥४८॥

शब्दार्थ—प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, तेमज स्थाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग ए आज्ञ्यंतर तप होय रे ॥४८॥

हवे आभ्यतर तपमाना प्रायश्चित तपनु स्वरूप कहे छे

( अनुष्टुपूवृत्तम् )

आलोयण पमिक्कमणो—ज्यविवेगमुसग्गो ॥

तवहेयमूलञ्चणव—ठयाय पारंचिय चेव ॥४९॥

शब्दार्थ—आलोयण लेवी, पडिक्कमण करवु, आलोयण अने पडिक्कमण ए बने करवा, विवेक राखवो, कायोत्सर्ग करवो, वली तप, व्रत पर्यायहेद, सर्व व्रत पर्यायहेद अने गच्छार, केत्रव्यार, तथा लीगव्यार रहेवुं ॥ ४९ ॥

हवे विनयनु स्वरूप कहे छे

( आर्यावृत्तम् )

नत्ती वहुमाणो व—सुजणणं ज्ञासणमन्नवायस्स ॥

आसायणपरिहाणो, विणञ्ज संखेवञ्ज एसो ॥५०॥

शब्दार्थ—नत्ती करवी, हृदयमा प्रेम राखवो, गुण गावा, अवर्णवादनु गोपववुं, आज्ञातनानो त्याग करवो ए प्रमाणे संकेपथी विनय कह्यो रे ॥ ५० ॥

हवे दश प्रकारे वैयावृत्य कहे छे

आयरियञ्जवज्ञाय—तवस्सिससेहे गिलाणसाहुसु ॥

समणुन्नसंघकुलगण—वेयावच्चं हवइ दसहा ॥५१॥

शब्दार्थ—आचार्यनी, उपाध्यायनी, तपस्वीनी, शिष्यनी, रोगीनी, साधुनी, साधर्मीनी, सधनी, एक साधुनी अने गणनी

एम वैयावच्च दश प्रकारे आय रे. ॥ ५१ ॥

हवे ध्यानना भेद कहे छे.

शाणं चउविहं खलु, अत्तं रुद्दं तहेव धर्मं च ॥

सुकुं पुण पत्तेयं, चक्रविहं चेव नायवं ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ—ध्यान निश्चय चार प्रकारनुं रे. आर्तध्यान, रौ-  
ध्यान तेमज धर्मध्यान अने शुक्रध्यान. वली ते प्रत्येक चार प्र-  
कारनुं निश्चय जाणवुं. ॥ ५२ ॥

हवे निर्जरा तत्त्वनो विचार कहे छे.

वारसविहं तवो नि-ज्ञराय वंधो य चउविगप्पोय ॥

पयइरीइअणुन्नागो—पयेसन्नेएहिं नायवो ॥ ५३ ॥

शब्दार्थ—आ उपर कहेलुं वार प्रकारनुं तप ते निर्जरा  
जाणवो. अने वंध ते चार प्रकारनो रे, ते प्रकृतिवंध, स्थितिवंध,  
अनुन्नागवंध अने प्रदेशवंध एवा न्नेदोये करीने जाणवो. ॥ ५३ ॥

पूर्वे कहेला वंधतत्त्वना चार भेदनुं वर्णन करे छे.

( अनुष्टुप् वृत्तम् )

पयइ सहावो वुत्तो, रिइ कालावहारणं ॥

अणु न्नागो रसो होउ, पएसो दखसंचउ ॥ ५४ ॥

शब्दार्थ—प्रकृतिवंध ते स्वन्नाव, स्थितिवंध ते कालनो  
निश्चय, अनुन्नागवंध ते रस जाणवो अने प्रदेशवंध ते दखसमूह  
जाणवो. ॥ ५४ ॥

हवे आठे कर्मनी प्रत्येके उत्तर प्रकृतीनी संख्या कहे छे.

( आर्यावृत्तम् )

इह नाणदंसणांवर—एवेयमोहाक्नामगोत्राणि ॥

विग्धं च पणनवद्धुअ—घवीसचउ तीसयद्धुपणविहं ॥ ५५ ॥

शब्दार्थ—अहिं ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनी, मोहनी,

आयु, नाम अने गोत्र वली अतराय ए आठ कर्मनी पाच, नव, वे,  
अगवीश, चार, एकसो त्रण, वे अने पाच एम अनुक्रमे प्रकृति  
जाणवी सर्व मली १५८ थाय. ॥ ५५ ॥

हवे आठे कर्मनो उत्कृष्ट स्थितिवध कहे छे.

नाणे अ दंशाणावर-ए वेअणिए चेव अंतराए अ ॥  
तीसं कोमाकोमी, अयराणं ठिड अ उकोसा ॥५६॥

अद्वार्थ—ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वेदनी, अतराय, ए  
चारे घाती कर्मनी उत्कृष्ट स्थिति त्रीश कोमी कोमी सागरोपम-  
नी जाणवी ॥ ५६ ॥

सत्तरी कोमाकोमी, मोहणीए वीस नामगोएसु ॥  
तित्तीसं अयराइं, आउठिडवंध उकोसा ॥५७॥

अद्वार्थ—मोहनी कर्मनी सीनेर कोमी कोमी सागरोपम-  
नी स्थिति जाणवो नामकर्म तथा गोत्रकर्मनी वीश कोडा कोडी  
सागरोपमनी स्थिति जाणवी वली आयु कर्मनी स्थितिनो उ-  
त्कृष्ट वध तेत्रीज सागरोपमनो जाणवो ॥ ५७ ॥

हवे आठे कर्मनो जघन्य स्थितिवध कहे ते

वारस मुहुत्त जहन्ना, वेयणिए अछ नामगोएसु ॥  
सेसाणंतमुहुत्तं, एयं वंधठिई माणं ॥५८॥

अद्वार्थ—वेदनीय कर्मनी स्थिति जघन्य वार मुहुर्ननी ते  
अने नामकर्म तथा गोत्रकर्मनी स्थिति आउ मुहुर्ननी जाणवी.  
वाझीना कर्मनी अंतमुहुर्ननी जाणवो. ए प्रमाणे वध स्थितिनु  
मान ते ॥ ५८ ॥ इति वंधतत्त्व ॥

हवे मोक्षतत्त्वना नव भेद कहे ते

सतपयपरुवाणाया द्वपमाणं च खित्त कुमाणाय ॥  
कालो अ अतर्गज्ञाग—जावे अप्पावहु चेव ॥५९॥

**शब्दार्थ—सत्पदप्ररूपणा, इव्यप्रमाण अने खेत्रमान.** वली स्पर्शना, काल, अंतर, ज्ञाग, ज्ञाव अने अल्पवहुत्व. ए प्रमाणे मोक्षतत्त्वना निश्चे नव द्वार बे. ॥ ५८ ॥

हवे प्रथम सत्पदप्ररूपणा द्वार कहे छे.

**संतं सुष्वपयत्ता, विश्वंतं खकुसुमंव न असंतं ॥**

**मुखति पर्यं तस्सञ्जे, परूपणा मगणार्थहिं ॥६०॥**

**शब्दार्थ—मोक्ष ए पद शुद्ध एटले एक पदपणाश्री सत् (विद्यमान) बे. आकाश फुलनी पेरे असत्य नथी. ते सत्पदरूप मोक्षनी प्ररूपणा गत्यादि मार्गणा द्वारे करवी. ॥ ६० ॥**

हवे सत्पद प्ररूपणा द्वारना पेटामां मार्गणा द्वार कहे छे.

**गद्य इंदीए काए, जोए वेए कसाय नाए य ॥**

**संजम दंसणखेसा, ज्ञवसम्मे सन्निअहारे ॥६१॥**

**शब्दार्थ—चार गति मार्गणा, पांच इंडिय मार्गणा, उ काय मार्गणा, त्रण योग मार्गणा, त्रण वेद मार्गणा, चार कषाय मार्गणा, आठ ज्ञान मार्गणा, सात संयम मार्गणा, चार दर्शन मार्गणा, उ लेद्या मार्गणा, वे ज्ञव्य मार्गणा, उ सम्यक्त्व मार्गणा, वे संझी मार्गणा अने वे आहार मार्गणा. ए सर्व मली वासठ मार्गणा थाय.**

हवे सिद्धिपद आपनारी मार्गणानां नाम कहे छे.

**नरगद्य पणिंदि तसज्जव, सन्निअहस्कायखद्यअसम्मते॥**

**मुख्योणाहारकेवद्य—दंसणनाए न सेसेसु ॥६२॥**

**शब्दार्थ—मनुष्य गति, पंचेंडी जाति, त्रस, ज्ञव्यत्व, संझी, यथाख्यात चारित्र, क्षायिक सम्यक्त्व, अणाहारी, केवलदर्शन अने केवलज्ञान. एटली मार्गणावाला जीवो मोक्ष पामे बे. वीजी मार्गणाउने विषे मोक्ष नथी. ॥ ६२ ॥**

हवे द्व्यप्रमाणादि वे द्वार कहे छे.

द्वपमाणे सिद्धाणं जीवद्वाणि हुंति एंताणि ॥  
ज्ञागस्स असंखिङे, ज्ञागे एको य सद्वेवि ॥६३॥

शब्दार्थ—इय प्रमाण द्वार विचारे ठते सिद्धना जीवइय  
अनता रे वली लोकाकाशना असख्यातमे ज्ञागे एक सिद्ध रे.  
अथवा सर्व सिद्ध पण होय रे ॥ ६३ ॥

हे स्पर्शनादि तण द्वार कहे छे

कुसणा अहिया कालो, इग सिद्ध पडुच्च साइरण्टो ॥  
पमिवाया ज्ञावाउ, सिद्धाणं अंतरं नहि ॥६४॥

शब्दार्थ—सिद्धना जीवोनी स्पर्शना अधिक रे एक सिद्धने  
आश्रोने काल सादि अनत रे अने सर्वने आश्री अनादि अनत  
रे वलो सिद्धोने चववानो अज्ञाव रे, माटे सिद्धोने अतर नथी ॥

हे भागद्वार अने जागद्वार कहे छे

सद्वजियाणमण्टे, ज्ञागे ते तेमि दंसणं नाणं ॥

खद्दए ज्ञावे परिणा-मिए अ पुण होइ जीवतं ॥६५॥

शब्दार्थ—सर्वे ससारी जीवोना अनतमे ज्ञागे ते सिद्धना जी-  
वो रे वली ते सिद्ध जीवोने क्षायिक ज्ञावने विषे केवलदर्शन अने  
केवलज्ञान होय रे. वली परिणामिक ज्ञावने विषे ए सिद्धना  
जीवोने जीवितपणुं पण होय रे ॥ ६५ ॥

हे मिद्दना पदर भेद कहे छे

जिणअजिणतिरुतिर्वा, गिहिअन्नसलिगयीनरनपुंसा ॥  
पत्तेयसयबुद्धा, बुद्धोहियसिद्धणिकाय ॥६६॥

शब्दार्थ—जिनसिद्ध, अजिनसिद्ध, तीर्थसिद्ध, अतीर्थसिद्ध,  
गृहस्यलिगसिद्ध, अन्यलिगसिद्ध, सलिगसिद्ध, खीसिद्ध, पुरुषसिद्ध,  
नपुमकसिद्ध, प्रत्येकबुद्ध सिद्ध, स्वयबुद्धसिद्ध, बुद्धोधित सिद्ध,  
एकसिद्ध अने अनेक सिद्ध ए सिद्धना पंदर ज्ञेद जाणवा. ॥६६॥

हवे ए पंदर भेदना उदाहरण कहे छे.

**जिणसिद्धा अरिहंता, अजिणसिद्धाय पुंमरित्रापमुहा ॥**  
**गणहारि तिढ्डसिद्धा, अतिढ्डसिद्धाय मरुदेवी ॥६५॥**

शब्दार्थ—जिनसिद्ध ते अरिहंतो, अजिनसिद्ध ते पुंडरिक विगेरे गणधर जाणवा. तीर्थसिद्ध ते गणधर अने अतीर्थसिद्ध ते मरुदेवी जाणवा. ॥ ६५ ॥

**गिहिलिंगसिद्ध न्नरहो, वट्कलचीरीय अन्नलिंगम्मि ॥**  
**साहु सलिंगसिद्धा, थीसिद्धा चंदणापमुहा ॥६६॥**

शब्दार्थ—गृहस्थलिंग सिद्ध नरत, अन्यलिंग सिद्ध वट्कल चीरी, स्वलिंग सिद्ध साधु अने स्त्री सिद्ध चंदनवाला विगेरे जाणवा. ॥ ६६ ॥

**पुंसिद्धा गोयमाई, गांगेयपमुह नपुंसया सिद्धा ॥**

**पत्तेय सयंबुद्धा, नणिया करकंडुकविलाई ॥६७॥**

शब्दार्थ—पुरुष सिद्ध ते गौतम विगेरे, नपुंसक सिद्ध ते गांगेय विगेरे, प्रत्येकसिद्ध ते करकंडु अने स्वयंबुद्धसिद्ध ते कंपील जाणवा.

तह बुद्धवोहि गुरुवो—हिय इगसमय इगसिद्धाय ॥

**इगसमयेवि अणेगा, सिद्धा ते ऐगसिद्धाय ॥६८॥**

शब्दार्थ—तेमज बुद्धवोधित सिद्ध ते गुरुथी वोध पामेला, एक समयमां सिद्ध अनाराना एक सिद्ध अने एक समयमां अनेक सिद्ध थाय ते अनेकसिद्ध कहेवाय. ॥ ६८ ॥

हवे नवमुं अल्पवहुत्वद्वार कहे छे.

**थोवा नपुंससिद्धा, थीनरसिद्धा कमेण संखगुणा ॥**

**इथ्र मुखतत्तमेयं, नवतत्ता लेसउ नणिया ॥६९॥**

शब्दार्थ—नपुंसक सिद्धो थोकावे. स्त्री पुरुष सिद्धो अनुक्रमे

सख्यात गुणा रे ए प्रमाणे मोक्षतत्व कहुं आ नवतत्वो लेश  
मात्र कहां रे ॥ ७१ ॥

हवे नव तत्वने जाणवानु फल कहे रे  
जीवाइनवपयरे, जो जाणइ तस्स होइ सम्मतं ॥  
ज्ञावेण सद्वहंतो, अयाणमाणेवि सम्मतं ॥७२॥

शब्दार्थ—जे प्राणी जीवादि नव पदार्थने जाणे रे, तेने स-  
म्यक्त्व होय रे वली ज्ञावे करीने सद्वहणा राखवाशी जीवादि  
नव तत्वना अजाणने पण सम्प्रकृत्व होय रे ॥ ७३ ॥

हवे सम्यक्त्वनु स्वरूप कहे रे  
सब्बाइ जिणेसर ज्ञा—सिच्छाइ वयणाइ नन्हहा हुंति ॥  
छइ बुद्धि जस्स मणे, सम्मतं निच्छिलं तस्स ॥७३॥

शब्दार्थ—‘ सर्व जिनेश्वरे कहेला वचनो खोटा न होय ”  
एवी बुद्धि जे माणसनामनमा होय रे तेनु सम्यक्त्व निश्चल रे,  
एम जाणवु ॥ ७३ ॥

हवे सम्यक्त्व पाम्यानु फल कहे रे  
अंतोमुहुत्तमितं—पि फासिच्छ्रं हुज जेहि सम्मतं ॥  
तेसि अवहृपुगल, परिअद्वो चेव संसारो ॥७४॥

शब्दार्थ—जेन्हए एक अंतमुहूर्त मात्र पण सम्यक्त्व फरस्यु  
रे, तेमने ससार अद्वपुजल परावर्त निश्चे थाय रे ॥ ७४ ॥

हवे आठ प्रकारे पुद्गल परावर्त कहे रे  
दधे रिक्ते काले, ज्ञावे चञ्चह दूह वायरो सुहमो ॥  
होइ आणंतुस्सप्पिणि, परिमाणो पुगलपरद्वो ॥७५॥

शब्दार्थ—ज्ञय, केत्र, काल अने ज्ञाव ए चार ज्ञेद, ते चार-  
ज्ञेदना सूक्ष्म अने वादर एवा वे ज्ञेदथी अनत उत्सप्पिणी परि  
माण एवो जे काल ते पुजल परावर्त होय रे ॥ ७५ ॥

उरखाइसत्तरेण, एग जिउ मुअङ्ग फुसिय सव्वआणु ॥  
जित्तिअकालि स यूलो, दबे सुहुमो सग्गनयरा ॥४६॥

**शब्दार्थ—**एक जीव उदारादिक सातेनी वर्गणाने स्पर्श करीने सर्व प्रमाणु प्रत्ये जेटलो काल मूके, ते थूल इव्य पुज्जल परावर्त काल आय. इव्यथी सूक्ष्म सात वीजी वर्गणा जाणावी.

**लोगपएसोसपिणि—**समया आणुज्ञाग वंधद्वाणे य ॥  
तहतह कममरणेण, पुष्टा खित्ताइ थुलियरा ॥४७॥

**शब्दार्थ—**खोकाकाशना प्रदेश, उत्सपिणीना समय अने अणुज्ञाग वंधना सर्व स्थानक. तेम तेम अनुक्रम मरणे करीने ते केत्रादि स्पर्शेला होय ते केत्रादि स्थूल सूक्ष्म पठ्योपम आय.

हवे पुढ्हल परावर्तनु मान कहे छे.

उस्सपिणी अणांता, पुगलपरिअद्वृत मुण्णेअद्वो ॥  
ते णांतातीअद्वा, अणागयद्वा अणांतगुणा ॥४८॥

**शब्दार्थ—**अनंती उस्सपिणी अने अवस्पिणी जाय ए पुज्जल परावर्त काल जाणावो. अनंत एवा ते पुज्जलपरावर्त काल गया अने अनंतगुणा जाणो. ॥ ४८ ॥

हवे छ द्रव्य दश द्वारे कहे छे.

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एक खित्त किरिआय ॥  
णिच्चं कारण कत्ता, सव्वग दमिदिरहि अपवेसे ॥४९॥

**शब्दार्थ—**परिणामि, जीव, मूत्ति, सप्रदेश, एक, केत्र, क्रिया, नित्यपणु, कारण, कर्ता. ए सर्वमां रहेला विचारथी अप्रवेशपणे रह्यारे. ॥ ४९ ॥

॥ इति नवतत्त्व. ॥

## अथ चोवीश दडकः

मगलाचरण पूर्वक कर्त्तव्य रहे छे

नमिन्तं चउवीसजिणे, तस्मुत्तवियाग्लेसदेसाण्ड ॥

दंमगपएहि ते चिय, थोसामि सुणेह ज्ञोन्नद्वा ॥ १ ॥

शब्दार्थ—चोवीश जिनेश्वरोने नमस्कार करीने तेमना सू-  
त्रना विचारना लेठ मात्रने कहेवाथी दडकना पदे करीने ते जि-  
नेश्वरोने निश्चे हु स्तवन करु तु, माटे हे जब्यजनो! तमे साज्जलो १

हप चोवाश दडक गणावे छे

नेरइया असुराइ, पुढवाई वेंटियादनु चेव ॥

गप्पयतिर्ग्नियमणुसा, वंतरजोइसियवेमाणी ॥ २ ॥

शब्दार्थ—३ सात नारकीनु, १० असुरकुमारादिना, ५ पृथ्वी-  
कायादिकना, ३ विग्लेंडियना, ७ गर्जजतिर्यच अने मनुष्यना,  
३ व्यतर, ज्योतसि अने वैमानीकना ॥ २ ॥

द्वे द्वार रहे छे

संखितयरीउ इमा, सरीर मोगाहणा य मंधयणा ॥

सन्ना संठाण कसा—य खेस उंडिय इसमुग्धाया ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—आ सघयणी सकेप मात्र थे शरीर ५, अवगाहना  
३, सघयण ६, सज्जा ८-१०, संस्थान ६, ऊपाय ४, नेस्था ६, इडिय  
५, वे ज्ञेदे समुद्रयात ३ ॥ ३ ॥

दिहीउंसानाणो, जोगुवउगोववायचवाणिड ॥

पङ्कतिकिमाहारे, मन्नी गइ आगड वेय ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—टाई ३, बर्डन ८, क्लान ५, योग १५, उपयोग ७,  
उपपात १, चबन १, स्त्रिति३, पर्याप्ति६, रिमादार १, मक्का ३,  
गनि१, आगति१, चेव ३ ॥ ४ ॥

हवे छ गाथाथी शरीरद्वार तथा अवगाहनाद्वार कहे छे.

चतु गप्ततिरियवाक्सु, मणुञ्चाणं पंच सेस निसगीरा ॥  
थावरचन्गे डुहञ्ज, अंगुल असंखनागतण् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—गर्भजतिर्यच अने वाउकायने विषे चार शरीर, मनुष्यने पांच शरीर, वाकीना त्रण शरीरवाला होय. (इनि शरीर द्वार) आवर चतुष्कने विषे उत्कृष्ट तथा जघन्यथी अंगुलना असंख्य नागवालुं शरीर जाणावुं. ॥ ५ ॥

सधेसिंपि जहन्ना, साहाविय अंगुलस्ससंखंसो ॥

उकोस पणसयधण्, नेरङ्घा सत्तहवृ सुरा ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—वाकीना वीडा इंमकने स्वाज्ञाविक जघन्यथी अंगुलनो असंख्यातमो नाग शरीर होयठे, नारकी जीवो उत्कृष्टा पांचसो धनुष्य उंचा होयठे. देवता उत्कृष्टे सात हाश्र होयठे. ६

गप्ततिरि सहसजोयण, वणस्सर्झ अहियजोयणसहस्सं ॥

नर तेझंदि तिगाउ, वेझंदिय जोयण वार ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—गर्भज तिर्यच एक हजार जोजन, बनस्पति एक हजार जोजनथी कांशक अधिक, मनुष्य अने तेरिंडि त्रण गाउ अने वेझंडिय वार योजनना उत्कृष्ट शरीर प्रमाणवाला होयठे.

जोयणमेगं चउरिं—दिदेहमुच्चतणे सुप नणियं ॥

वेउवियदेहं पुण, अंगुलसंखं सयारंन्ने ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—चउरिंडिनुं शरीर उंचपणे एक जोजन सूत्रने विषे कह्युं ठे. वली उत्तर वैक्रिय देह हमेशां आरंन्ने अंगुलनो असंख्या तमो नाग होयठे. ॥ ८ ॥

देवनरथ्यप्रहित्यप्रखरं, तिरियाणं नवयजोयणसयाइ ॥

डुगुणं तु नारथाणं, नणियं वेउवियसरिरं तु ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—देव अने मनुष्योनु वैक्रिय शरीर एक लाख जोज  
नथी काइक अधिक होय रे तिर्यचोनु नवसो योजननु होय रे  
बखी नारकीनु पोताना शरीर प्रमाणाथी बमणु कहुं रे ॥ १६ ॥

अंतमुहुत्तं निरये, मुहुत्तचत्तारि मणुत्रिरिएसु ॥

देवेसु अद्भुतासो, उकोसविज्ञप्ता कालो ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—नरकमा एक अंतर मुहूर्त, मनुष्य अने तिर्यचमा  
चार मुहूर्त अने देवताने विषे अद्वै भास ए उल्कृष्ट उत्तर वैक्रिय  
शरीरनो काल जाणावो (इति अवगाहनाद्वार) ॥ १७ ॥

इने एक गाथाथी सघयण द्वार कहे छे

यावरसुरनेरझ्या, असंघयणा य विगलिरेवठा ॥

संघयणरगं गप्त्य—नरतिरिएसु मुणेअद्वं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—पाच आवर, देवता अने नारकी ए सर्व सघयण  
रहित रे विगलेद्विधने सेवार्त सघयण होय रे गर्जज मनुष्य  
अने तिर्यचने विषे उ सघयण जाणावु ( इति सघयणद्वार ) ॥ १८ ॥

इने वे गाथायो सज्जा तथा मस्थानद्वार कहे छे

सद्वेसि चउ दह वा—सणा सद्वे सुरा य चउरंमा ॥

नरतिरिवसठाणा, हुंमा विगलिदिनेरझ्या ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—सर्व दम्कोने चार अथवा दश सज्जा रे ( इति मज्जाद्वार )  
अने सर्व देवताउ समचतुरख रे मनुष्य अने तिर्यच उ संस्थान-  
वाला होय रे तथा विगलेद्वि अने नारकी हुम संस्थानवाला होय रे  
नाणाविहधयसूर्झ—बुद्धुयवणवाउतेउच्चपकाया ॥

पुढवी मसूरचदा—कारा संगाणउ जणिया ॥ २० ॥

शब्दार्थ—वनस्पतिकाय जीवो नाना प्रकारना संस्थानवा-  
ला रे वाउकाय जीवो ध्वजा सरखा संस्थानवाला रे, अग्निकाय  
जीवो सुइयाना समूह सरखा संस्थानवाला अने अप्काय जीवो

परपोटाना सरखा संस्थानवाला होयठे. पृथ्वीकाय जीवो मसूरनी दाल अने चंडना सरखा संस्थानवाला कहा ठे. (इनि मंस्थानद्वार)

हवे चार गाथाधी कपाय, लेड्या, इंद्रिय अने समूद्रघात द्वार कहे छे.

सबेवि चउकसाया, लेसरुगं गङ्गतिरियमणुएसु ॥  
नारयतेउवाञ—विगलाविमाणियतियलेसा ॥१४॥

शब्दार्थ—सर्वे एवा जीवो पण चार कपायवाला होय ठे.  
(इति कपायद्वार) गर्जज तिर्यच अने मनुष्य ठ लेद्यावाला होय ठे.  
वली नारकी, अग्निकाय, वाञकाय, विगलेंझी अने वैमानिक देवता ए सर्वे त्रण लेद्यावाला होय ठे. ॥ ४ ॥

जोऽसियतेउलेसा, सेसा सबेवि हुंति चउलेसा ॥

इंद्रियदारं सुगमं, मणुआणं सत्त समुग्घाया ॥१५॥

शब्दार्थ—ज्योतसि तेजो लेद्यावाला ठे. वाकीना सघला पण चार लेद्यावाला होय ठे. (इति लेद्याद्वार) इंद्रियद्वार सुगम ठे.  
(इति इंद्रियद्वार) मनुष्यने सात समुद्रघात होय ठे. ॥ १५ ॥

वेयणकसायमरणे, वेऊवियतेयएय आहारे ॥

केवलिषसमुग्घाए, सत्त इमे हुंति सन्नीणं ॥१६॥

शब्दार्थ—वेदना, कपाय, मरण, वैक्रीय, तेजस, आहारक, अने केवली ए सात समुग्घात संझी मनुष्यने होय ठे. ॥ १६ ॥

एगिंदियाण केवलि—तेऊआहारगविणु चत्तारि ॥

तेऊवियवज्ञा, विगला सन्नीण ते चेव ॥१७॥

शब्दार्थ—एकेंद्रियने, केवली तेजस अने आहारक वर्जिने चार समुद्रघात होय ठे. ते पूर्वे कहेला त्रण अने वैक्रिय ए चार विना वाकीना त्रण समुद्रघात विकलेंडिने जाणवा अने असंझीने पण ते त्रणज समुद्रघात निश्चे होय ठे. ॥ १७ ॥

हवे वे गाथाधी हाटि अने दर्शनद्वार कहे छे.

पण गप्ततिरिसुरेसु, नारयवाङ्मु चउर तिय सेसे ॥  
विगलद्विष्टी यावर-मिहृत्ति सेस तियदिष्टी ॥१७॥

शब्दार्थ—गर्जज तिर्यच अने देवताने विषे पाच, नारकी अने वाउकायने विषे चार अने वाकीनाने विषे त्रण समुद्धात होयरे। ( इति समुद्धातद्वार ) विकलेडि वे हृषिवाला रे. यावर मिथ्यात्वी रे अने वाकीना त्रण हृषिवाला रे ॥ १७ ॥ ( इति हृषिद्वार )

यावरवितिसु अचकु, चउरिदिसु तहुग सुए जणिय ॥  
मणुआ चउदसणिणो, सेसेसु तिगं तिगं जणिय ॥१८॥

शब्दार्थ—स्थावर, वेझडिय अने तेरिडियने विषे एक अचकु दर्शन होयरे चौरिडिने विषे चकुदर्शन अने अचकुदर्शन सूत्रमा कहु रे मनुष्यो चार दर्शनवाला होयरे अने वाकीनाने विषे त्रण त्रण दर्शन होयरे ॥ १८ ॥ ( इति दर्शनद्वार )

इने एक गायाधो ज्ञानद्वार कहे छे

अन्नाणनाणतियतिय, सुरतिरिनिरये थिरे अन्नाणडुगं  
नाणनाण डुविगले, मणुए पणनाणतिअन्नाण ॥१९॥

शब्दार्थ—देवता, तिर्यच अने नारकोने विषे त्रण अङ्गान अने त्रण ज्ञान होयरे धावरमा वे अङ्गान होयरे विकलेडियने विषे वे ज्ञान अने वे अङ्गान होयरे. मनुष्यने विषे पाच ज्ञान अने त्रण अङ्गान होयरे ॥ १९ ॥ ( इति ज्ञानद्वार )

इने एक गायाधी योगद्वार कहे छे

इकारस सुरनिरये, तिरिएसु तेर पन्नर मणुएसु ॥

विगले चउ पण वाए जोगतिगं थावरे होइ ॥२०॥

शब्दार्थ—देवता अने नारकीने विषे ग्रगीयार, तिर्यचने विषे तेर, मनुष्यने विषे पंदर, विकलेडियने विषे चार, वाउकायने विषे पाच अने स्थावरने विषे त्रण योग होयरे ॥२०॥ ( इति योगद्वार )

हवे एक गाथाथी योगनां नाम कहे छे

सच्चेत्रमीसत्त्रसच्च—मोस मणवयवेन्विअहारे ॥  
उरखंमिसा कमण, इय जोगा देसिया समए ॥४७॥

शब्दार्थ—सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, सत्यामृषा मनोयोग, असत्यामृषा मनोयोग, ए प्रमाणे मन अने वचनना योग जाणवा. वैक्रिय योग, आहारक योग तेमज औदारिक योग ए त्रण मिश्र सहित. अने वली कार्मण योग, ते साते, कायाना योग आगमने विषे कह्यारे. ॥ ४७ ॥ ( इति योगद्वार )

हवे वे गाथाथी उपयोग द्वार कहे छे.

तिअन्नाण नाणपण, चउदंसंण बार जिअलखणुवउगा ॥  
इअ बारस उवउगा, नणिअ तिलुकदंसीहिं ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—त्रण अङ्गान, पांच झान, चार दर्शन, ए बार जीवना लक्षणरूप उपयोग रे. ए बार उपयोग त्रीखोक दर्शी एवा श्री जिनेश्वरोए कह्यारे. ॥ ४८ ॥

उवउगा मणुएसु, बारस नव निरय तिरय देवेसु ॥

विगलडुगे पण ठकं, चउरिंदिसु थावरे तिअगं ॥४९॥

शब्दार्थ—मनुष्यने विषे बार, नारकी, तिर्यंच अने देवताने विषे नव, बेङ्डिय अने तेरिंडिने विषे पांच, चोरिंद्रिने विषे ठ अने थावरने विषे त्रण उपयोग होय छे. ॥४९॥ ( इति उपयोगद्वार )

हवे दोह गाथाथी उत्पत्ति अने चवनद्वार कहे छे.

संखमसंखा समए, गप्पयतिरिविगलनारय सुराय ॥

मणुअ नियमा संखा, वणणांता थावर असंखा ॥५०॥

शब्दार्थ—एक समयने विषे गर्जजतिर्यंच, विकलेंद्रि, नारकी अने देवता संख्याता अने असंख्याता उत्पन्न थाय रे.

नियमथी मनुष्यो संख्याता उत्पन्न थाय रे वनस्पतिकाय अनती  
उत्पन्न थाय रे अने आवर असख्याता उत्पन्न थाय रे ॥४५॥

असन्नीनर असंखा, जह उवाच तहेव चवणेवि ॥

इवे चार गाथाधी स्थितिद्वार कहे छे

वावीससगतिदसवा—ससहस्र सुक्रित पुढवाइ ॥४६॥

शब्दार्थ—असङ्गी मनुष्यो असंख्याता उत्पन्न थाय रे जे-  
वो रीते उत्पन्न थवानी वात कही तेवीज रीते चवनपणु जा-  
एवु ( इति उत्पत्ति चवनद्वार ) पृथ्वीकाय, अप्काय, वानकाय अने  
वनस्पतिकायनु आयुष्य अनुक्रमे वावीस हजार, सात हजार,  
त्रण हजार अने दस हजार वर्षनु उत्कृष्ट होय रे- ॥ ४६ ॥

तिदिणगिंग तिपल्लाउ, नरतिरि सुरनिरय सागरतित्तीसा॥

वंतर पल्लं जोइस, वरिसलखाहियं पलियं ॥४७॥

शब्दार्थ—त्रण दिवस अधिकायनु आयुष्य होय रे- मनु-  
ष्य अने तिर्यच त्रण पछ्योपम आयुष्यवाला होय रे देवता अ-  
ने नारकी तेत्रीस सागरोपमना आयुष्यवाला होय रे व्यतर  
देवता एक पछ्योपमना आयुष्यवाला अने ज्योतसी देवता एक  
दाख वर्ष अधिक एवी एक पछ्योपमना आयुष्यवाला होयरे

असुराण अहियत्रयर, देसूणुपल्लयं नवनिकाए ॥

वारसवासूणपणदिण—रमास उक्रित विगलाऊ ॥४८॥

शब्दार्थ—असुर कुमारोनु एक सागरोपमथी काइक अ-  
धिक आयुष्य होयरे नव निकायनु देसे त्रण वे पछ्योपमनु, वि-  
कलेडिय [ वेशडि, तेरिडि अने चौरिडिनु ] अनुक्रमे वारवर्ष, उगणप-  
चास दिवस अने ठ मासनु ए सर्व उत्कृष्ट आयुष्य जाणेवु ४८

पुढवाइदसपयाण, अंतमुहुत्तं जहन्नआजठिड ॥

दससहसवरसरिझआ नवणाहिवनिरयवतरिया ४९

**शब्दार्थ-**पृथ्वी कायादि [ पांच स्थावर, त्रण विकलेंद्रिय, तिर्यंच अने मनुष्य ] ए दशनी जघन्यथी आयुष्यनी स्थिति एक अंतमुहूर्तनी डे, न्नवनपति, नारकी अने व्यंतर देवताउ दश हजार वर्षनी जघन्य स्थीतिवाला डे. ॥ ४४ ॥

**वैमाणिय जोइसिया, पह्नुतयछंसआउआ हुंति ॥**

हवे त्रण गाथाथी पर्यासि, किमाहार अने संज्ञा ए त्रण द्वार कहे छे.

**सुरनरतिरिनिरएसुं, डपज्जती थावरे चउगं ॥३०॥**

**शब्दार्थ-**वैमानीक अने ज्योतसी देवताउ एक पट्ट्योम अने तेनो आरमो न्नाग एम अनुक्रमे आयुष्यवाला होयडे. (इति स्थीति द्वार ) देवता, मनुष्य, तिर्यंच अने नारकीने विषे ठ पर्याप्ती होयडे. तथा आवरने विषे चार पर्याप्ती होयडे. ॥ ३० ॥

**विगले पंच पज्जती, डहिसि आहार होइ सबेसिं ॥**

**पणगाइपए न्नयणा, अह सन्नीतिय न्नणिस्सामि ३१**

**शब्दार्थ-**विकलेंद्रियने विषे पांच पर्याप्ती होयडे. (इति पर्याप्ति द्वार) सर्वे जीवोने ठ दिशाने विषे आहार होयडे. पांच दिशा आदि पदने विषे न्नजना डे. (इति किमाहारद्वार) हवे त्रण संज्ञा न्नणीश. ॥

**चउविहसुरतिरिएसु, निरएसु य दीहकालगी ससा ॥**

**विगले हेउवएसा, सन्नारहिअरा थिरा सबे ॥३२॥**

**शब्दार्थ-**चार प्रकारना देवता, तिर्यंच अने नारकीने विषे दीर्घकालिकी संज्ञा होयडे. विगलेंद्रियने विषे हेतुपदेशिकीसंज्ञा होयडे अने सर्वे आवरो संज्ञा रहित होयडे. ॥ ३२ ॥

**मणुअराण दीहकालिअ, दिछिवाउवएसिअरा केवि ॥**

हवे साडा छ गाथाथी गति संज्ञा कहे छे.

**पज्जपणतिरि मणुअर चिय, चउविहदेवैसु गहुंति ॥३३॥**

**शब्दार्थ-**मनुष्यने दीर्घकालिकी संज्ञा होयडे अने केटलाक

तेजवाञ्जगमणं, पुढवीपमुहंमि होइ पयनवगे ॥  
पुढवाइगणादसगा, विगलाइ तिअ तहिं जंति ॥३७॥

शब्दार्थ—तेजकाय अने वाजकायनुं जवुं पृथ्वी कायादि नव पदने विषे होयरे. पृथ्वीकायादि दश स्थानकना जीवो त्रण विकलेंडिय थायरे अने ते त्रण विकलेंडिय ते पृथ्वीकायादि दश पदमां जायरे. ॥ ३७ ॥

गमणागमणं गप्रय, तिरियाणं सयखजीवगणेसु ॥  
सवड जंति मणुआ, तेजवाञ्जसु नो जंति ॥३८॥

शब्दार्थ—गर्जज तिर्यचोनुं सर्वे दंमकोने विषे जवुं आववुं थायरे. मनुष्यो सर्वे दंमकोने विषे जायरे. पण तेजकाय अने वाजकायने विषेशी मनुष्यो न थाय. (इति गतिद्वार) ॥ ३८ ॥

हवे त्रण गायाथी आगति द्वार कहे छे.

अंतरदीवा जुअला, तैसिं गईउ हवंति इकारा ॥

दशन्नवणा इकवणे, आगईउ मणुअतिरिएसु ॥४०॥

शब्दार्थ—अंतरदीपना युगलीयानुं आववुं दश न्नवनप ति अने एक व्यंतर एम अग्यारमां होयरे, अने ए अंतरदीपना जुगलीयामां उत्पन्न थवुं मनुष्य अने तिर्यचशी होयरे. ॥४०॥

असन्नितिरिए गईउ, बावीसा जोइसविमाणविणा ॥

आगईउ यावरपंच, विगलपंचिंदितिरियनरा ॥४१॥

शब्दार्थ—असन्नि तिर्यचनी गति ज्योतसी अने वैमानीक विना बावीश दंमकमां होयरे अने असन्नि तिर्यचमां उत्पन्न थवुं ते पांच यावर, त्रण विकलेंडिय, पंचेंडियतिर्यच अने मनुष्यो मांशी होयरे. ॥ ४१ ॥

संमुहिम मणुआणं, दह गईउ पंचयावरा विगला ॥  
पंचिंदिप तिरियनरा, आगईउ तेजवाञ्जविणा ॥४२॥

( ४३ )

शब्दार्थ-समुर्द्धिम मनुष्योनी गति पांच आवर, त्रण विक  
लेंद्रिय, पचंदिय तिर्यच अने मनुष्य ए दशमा आयरे अने समुर्द्धि  
म मनुष्यमा उत्पन्न थवुं ते तेजकाय अने वात्तकाय विना ते आठ  
माथी आयरे ॥ ४२ ॥ ( इति आगतिद्वार )

हे एक गाथाधी वेदद्वार कहे छे.

वेयतिय तिरियनरेसु, ईर्वीपुरिसो चतुविहसुरेसु ॥  
यिरविगलनारएसु, नपुंसवेऽ हवइ एगो ॥४३॥

शब्दार्थ-तिर्यच अने मनुष्यने विषे त्रण वेद होय चार प्र  
कारना देवताने विषे स्त्रीवेद अने पुरुषवेद होय पाच आवर, त्रण  
विकलेंद्रिय अने नारकीने विषे एक एक नपुसकवेद होय रे, ४३

हे व गाथाधी अल्प बहुत्वद्वार कहे छे

पङ्कमणुवायरग्गी, वेमाणीअञ्जवणनिरयवंतरिया ॥  
जोइसचउपणतिरिञ्चा, वेझंदितेइदिन्ज्ञूआक ॥४४॥

शब्दार्थ-पर्याप्ता मनुष्य सर्व दडकथी थोका, तेथी असख्या  
त गुणा बादर अग्निकाय, तेथी असख्यात गुणा वैमानीक, तेथी  
असख्यात गुणा ज्वनपति, तेथी असख्यात गुणा नारकी, तेथी  
असख्यात गुणा व्यतर, तेथी असख्यात गुणा ज्योतसी, तेथी  
सख्यात गुणा चतुरिड्य, तेथी अधिक पचंदिय तिर्यच, तेथी  
अधिक वेझंदिय, तेथी अधिक तेरिडिय, तेथी असंख्यात गुणा पृ  
थ्वीकाय, तेथी असख्यात गुणा अप्काय रे ॥ ४४ ॥

वाऊवणस्सइ चिय, अहिया अहिया कमेणिमे हुंति ॥  
सवेवि इमे ज्ञावा, जिणा मये णत्तसो पत्ता ॥४५॥

शब्दार्थ-तेथी असख्यात गुणा वात्तकाय अने तेथी अनति  
गुणा वनस्पतिकाय रे, निश्चे ए सबे अनुक्रमे अधिक अधिक होय  
रे हे जिनेश्वर! आ सबे पण ज्ञावो मैं अनतीगार प्राप्त करथा रे,

हवे एक गाथाथी प्रार्थना करे छे.

संपश्च तु महं ज्ञतस्य, दंमगपयज्ञमणज्ञग्हियस्य ॥  
दंमतियविरयसुखहं, लहु मम दिंतु मुखपयं ॥४६॥

शब्दार्थ—हवणां चोवीस दंमकना स्थानने विषे ज्ञमवाथी निवृत्तथयुं भे मन जेनुं, एवा तमारा ज्ञक्त एवा मने, मन वचन अने कायाना त्रण दंमना विरामथी सुखज्ञ एवुं मोक्षपद ऊट आपो.

हवे एक गाथाथी ग्रंथकर्त्ता पोतानुं नाम जणावे छे.

सिरिजिणहंसमुणीसर, रज्जे सिरिधिवल्खचंदसीसेण ॥  
गजसारेण लिहिअ, एसा विन्नति अप्पहिअ ॥४७॥

शब्दार्थ—श्री जिनहंस मुनीश्वरना राज्यने विषे श्री धवल चंद्रना शिष्य एवा गजसार मुनिये आ आत्महितकारी विनंती लखी छे. ॥ ४७ ॥ इति चोवीश दंमक समाप्तः ॥

## लघु संग्रहणी.

एक गाथाथी मंगलाचरण पूर्वक कर्त्तव्य कहे छे.

नमिय जिणं सध्वन्नुं, जयपूजा जयगुरु महावीरं ॥  
जंबूदीवपयर्दे, बुद्धं सुत्ता सपरहेउं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—सर्वज्ञ, जगत्‌ने पूज्य, जगत्‌ना गुरु एवा श्री महावीर जिनश्वरने नमस्कार करी सूत्रने अनुसारे जंबूदीपना शाश्वता पदार्थोने हुं पोताना अने परना माटे कहुं बुं. ॥१॥

एक गाथाथी दश द्वार कहे छे,

खंमा जोयण वासा, पव्य कूमा य तिड्ड सेढीउ ॥  
विजय द्वह सखिखाउ, पिंमोसिं होइ संघयणी ॥ २ ॥

• शब्दार्थ—१ खंडवा, २ जोजन, ३ क्षेत्र, ४ पर्वत, ५ कूट, ६

तीर्थ, उ श्रेणी, ए विजय, ए इह अने १० नदीयो ए दश द्वारना  
समूहथी संग्रहणी थाय वे ॥७॥

इवे त्रण गाथाथी पहेलु द्वार कहे छे.

नजुअ सयं खंमाणं, ज्ञरहपमाणेण ज्ञाईए लखके ॥

अहवा नजुअसयगुण, ज्ञरहपमाण हवइ लखके ॥८॥

शब्दार्थ—एक लाख जोजनने ज्ञरतकेत्रना प्रमाणे [ ४२६  
जोजन ६ कलाथी ] ज्ञागाकार करीय त्यारे एकसोने नेवुं खाडवा  
थाय. अथवा ज्ञरतकेत्रना प्रमाणने एकसोन नेवु गुणा करे तो  
पण लाख जोजन थाय ॥८॥

अहविगखंमं ज्ञरहे, दो हिमवंते अ हेमवई चउरो ॥

अष्ट महाहिमवंते, सोलसखमाइ हरिवासे ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—अथवा एक खामवानु ज्ञरतकेत्र, वे खामवानो हि-  
मवत पर्वत, चार खाडवानु हेमवत केत्र, आठ खामवानो महा-  
हिमवंत पर्वत अने सोल खामवानुं हरिवर्ष केत्र वे ॥४॥

वत्तिसं पुण निसछे, मिलिया तेसछि वीयपासेवि ॥

चउसठिउ विदेहे, ति रासि पिडेइ नजुअसय ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—वली वत्रीश खाडवानो निपध पर्वत ए सर्व म-  
लीने त्रेसठ खामवा थाय एवा वीजा पासाने विपे पण त्रेसठ  
खामवा जाणवा तेमज महाविदेहकेत्रने विपे चोसठ खामवा  
वे ए त्रणे एकठा करीये त्यारे एकसो नेवुं खामवा थाय ॥ ५ ॥

इवे पाच गाथाथी नीजु द्वार कहे छे

जोयणपरिमाणाइ, समचउरसाइ इत्र खंमाइ ॥

लखकस्सयपरिहीए, तप्पाय गुणेणाय हुतेव ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—सुमचतुरख जोजनना परिमाणे खामवा करवा.

एकदाख जोजनना परिधीने तेना चोथे न्नागे [ पञ्चिसहजारे ]  
गुणवाशी गणीत पद आय भे. ॥६॥

विस्कंञ्जवग्गदहगुणा—करणी वट्स्स परिभु होइ ॥

विस्कंञ्जपाय गुणिभ, परिभु तस्स गणियपयं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—विष्कंञ्ज( पोहोलाइ )ना वर्गने दश गुणा करीने ते  
आंकनुं वर्गमूल काढवुं, तेथी गोल परिधी आय. पठी विष्कंञ्जने  
तेना चोथे न्नागे गणीये तो तेनुं क्षेत्रफल आय. ॥७॥

परिही तिलखसोलास—सहस्स दोयसय सत्तवीस हिया  
कोसृतिं अघावीसं, धणुसय तेरंगुलध हियं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—त्रेणाखाख, सोलहजार, वसो सत्तावीस जोजन;  
त्रण गाऊ; एकसो अघावीस धनुष्य अने सामातेर आंगल एटली  
जंबूद्धीपनी सर्वपरिधीआय. ३१६४४७जोण३गाप१२७८०१३। आंण  
सत्तेवयकोमिसया, नऊअग्रा भप्पन्नसयसहस्साई ॥  
चउसाउयं च सहस्सा, सयंदिवहुं च साहियं ॥ ९ ॥  
गाऊअभेगं पन्नरस, धणुसया तह धणूणि पन्नरस ॥  
सांचि च अंगुलाई, जंबूद्धीवस्स गणियपयं ॥१०॥

शब्दार्थ—सातसो ने नेवुं क्रोम, भप्पन्न लाख, चोराणुं हजार  
अने एकसो पञ्चास जोजन;—एक गाऊ; पंदरसो पंदर धनुष्य अने  
साठ आंगुल, एटलुं जंबूद्धीपनुं गणितपद जाणवुं. ॥ १०-११ ॥

हत्रे वे गाथाथी क्षेत्रद्वार अने पर्वत संख्याद्वार कहे छे.

ज्ञरहाई सत्तवासा, वियहुं चउचउरतिंस वट्टियरे ॥

सोलास वस्कारगिरि, दो चित्तविचित दोजमगा ॥११॥

शब्दार्थ—ज्ञरत विगोरे सात क्षेत्र भे, (इति ३ क्षेत्रद्वार) वैताढ्य  
चार वाटला अने चोत्रीश लांवा, सोल वखारा पर्वत, वे चित्र

विचित्र पर्वत अने वे जमग समग पर्वत रे ॥ ११ ॥

दो सय कण्ठगिरीणं, चउ गयदंता य तह सुमेरु य ॥  
ठ वासद्वारा पिंमे, एगुणसत्तरि सयाङ्गन्नि ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—वसो कंचन पर्वत, चार गजदंता पर्वत, तेमज एक सुमेरु अने उ क्षेत्रमयदा धारक पर्वत, ए सर्व एकठा करता व सोने नगणोन्नेर थाय रे. ॥ १२ ॥

इवे पाच गाथायी कुट (शिखर) द्वार कहे छे

सोलस वर्कारेसु, चउचउ कुमाय हुति पत्तेयं ॥

सोमणस गंधमायण, सत्तद्वय रूप्पिमहाहिमवे ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—सोल वर्कारा पर्वतने विषे दरेक उपर चार चार शिखर रे, सोमनस अने गंधमादन ए वे गजदंता पर्वत उपर सात सात शिखर रे, अने रूपी तथा महा हिमवंत ए वे पर्वत उपर आठ आठ शिखरो रे. ॥ १३ ॥

चउतीस वियहेसु, विद्युप्पहनिसहनिलवतेसु ॥

तह मालवंतसुरगिरि, नव नव कुमाइ पत्तेयं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—वैताण्ड्य पर्वत उपर चोत्रीस, विद्युत्प्रज्ञगजदतो, नैपध, नीलवंत, मालवंतगजदतो अने मेरु ए दरेक पर्वतो उपर नव नव शिखरो रे ॥ १४ ॥

हिमसिहरिसु इकारस, इय इगसघी गिरिसु कुमाणं ॥

एगत्ते सवधणं, सयचउरो सत्तसठीय ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—हिमवत अने शिखरी ए प्रत्येक पर्वत उपर अगीयार अगीयार शिखरो रे एम एकसठ पर्वत उपर सर्व भक्तीने चारसो समंसठ शिखरो थाय रे. ॥ १५ ॥

चउ सत्त अछ नवगे—गारसकुमेहि गुणह जहसंखं ॥

सोलस उड्ड गुणयालं, उवेय सगसठ सयचउरो ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—चार, सात, आठ, नव अने अगीयार एटला शि  
खरोनी संख्याये करीने अनुक्रमे सोल बे, बे, उगणचालीस अने  
बे ए पर्वतोने गुणतां सर्व मली चारसो सम्मत शिखरो आये।

चउतीसं विजयेसु, उसुकुमा अष्ट मेरुजंबूमि ॥

अष्टय देवकुराइं, हरीकुमहरिस्सहे सधी ॥१५॥

शब्दार्थ—चोत्रीस विजयने विषे ऋषजशिखर चोत्रीस रे।  
मेरु अने जंबूबृक उपर आठ आठ शिखर रे। देवकुरुने विषे आठ  
शिखर, हरिशिखर अने हरिसशिखर ए सहित साठ ज्ञूमीशिखर रे।

हवे एक गाथाथी तीर्थद्वार कहे छे।

मागहवरदामपन्ना—सं तिढ्ड विजयेसु ऐरवयन्नरहे ॥

चउतीसा तिहिंगुणिया, डुरुत्तरसयं तु तिढ्डाणं ॥१६॥

शब्दार्थ—वत्रीस विजय, ऐरवत अने नरत ए चोत्रीसमां माग  
ध, वरदाम अने प्रन्नास एवा एक नामनां चोत्रीस तीर्थ रे। तेथी ते  
चोत्रीसने त्रण गुणा करतां सर्व मलीने एकसोने बे तीर्थ आय रे।

हवे एक गाथाथी श्रेणीद्वार कहे छे।

विजाहर अन्निडगी—य सेढीडु डुन्नि डुन्नि बेअहे ॥

इय चउगणा चउतीसा, भत्तीससयं तु सेढीणो ॥१७॥

शब्दार्थ—दरेक वैताळ्य पर्वत उपर विद्याधर अने अन्नियो  
गीकदेव तेमनी दरेकनी बवे बवे श्रेणीयो रे; तेथी ते चार श्रेणीयो  
ने चोत्रीस गुणी करतां एकसो वत्रीस श्रेणीयो आय रे। ॥१७॥

हवे एक गाथाथी विजयद्वार अने द्रहद्वार कहे छे।

चक्रीजेयवाइं, विजयाइं इडु हुंति चउतीसा ॥

मह दह डु पउमाईं, कुरुसु दसगं ति सोल्खसगं ॥१८॥

शब्दार्थ—आहिं चक्रवर्तीये जीतेली विजया चोत्रीस रे। तेम  
ज अहि पन्नादि म्होटा इहो ड रे अने कुरुक्षेत्रमां दझ इह रे।

सर्व मली सोल इह थाये ॥ १० ॥

इवे छ गाथाधी नदीद्वार कहे छे

गंगा सिधु रत्ता, रत्तवर्द्ध चउ नझु पत्तेयं ॥

चउदसहि सहस्रसेहि, समग्र वज्रंति जखहिमि ॥४१॥

शब्दार्थ—गगा, सिधु, रक्ता अने रक्तवती ए चार नदीयो रे ते दरेक नदी चौदहजार परिवार सहित समुझमा जाये. चारे नदीयोनो परिवार उपन्न हजारे ॥ ११ ॥

एवं अप्स्रंतरिया, चउरो पुण अष्टविस सहस्रसेहि ॥

पुणरवि उप्पन्नेहि, सहस्रसेहिं जंति चउसलिला ॥४२॥

शब्दार्थ—वली एवीज रीत हिमवतादिकनी अन्यतर चार नदीयो प्रत्येक अठावीस हजार नदीयोनो परिवार सहित जाये. [चार नदीयोनो परिवार ११७०००] अने हरिवर्ष केत्रनी अने रम्यक केत्रनी चार नदीयो प्रत्येक उपन्न हजार नदीयोना परिवार सहित जाये [चार नदीयोनो परिवार—३७४०००]

कुरुमझे चउरासी, सहस्रा तहय विजय सोलसेसु ॥

वत्तीसाण नर्दण, चउदस सहस्राइं पत्तेयं ॥४३॥

शब्दार्थ—देवकुरु उत्तरकुरुमा उनदीयोनो सर्व परिवार चोरासी हजारनो रे अने सोल विजयमा वत्रीस नदीयो रे, तेमा दरेकने चौदहजार नदीयोनो परिवार रे ॥ ४३ ॥

चउदस सहस्र गुणिया, अम्लीस नझु विजयमश्लिला ॥  
सीञ्जयाए निवमति, तहय सीयाइएमेव ॥४४॥

शब्दार्थ—ए वत्रीस नदीयोने चौड हजारे गुणता चारलाख आमत्रीस हजार थाये रे तेमज विजयमादेली आमत्रीस नदी योने पण चोदहजारे गुणता सर्व मली पाचलाख वत्रीस हजार थाय. एटली नदीयो सीतोदामा तेमज सोतामा मले रे. ४४

सौया सौत्याविय, बत्तीस सहस्र पंचलरक्षेहि ॥  
सद्वे च जदस लखा, उप्पन्न सहस्र मेलविया ॥४५॥

शब्दार्थ—सीता अने सीतोदा ए वे नदीयो प्रत्येक पांचला  
ख बत्तीस हजारना परिवारवाली डे. ते सर्वे एकठी करतां चौड  
लाख उप्पन्नहजार आय. [ १८५६००० ] ॥ ४५ ॥

छ जोयण सकोसे, गंगासिधूण विद्वरो मूले ॥  
दसगुणित पद्यंते, इय उड्डगुणणेण सेसाण ॥४६॥

शब्दार्थ—गंगा अने सिंधु नदीनो मूलमां विस्तार सवा ब  
जोजन डें. तथा डेमे तेथी दश गुणो [ ६४॥ जोजन ] विस्तार डे  
ए प्रमाणे बीजी नदीयोनो तेथी बर्मणे विस्तार जाणवो. ४६

जोयणसयमुच्चिष्ठा, कण्यमया सिहरिचुद्ध्रहिमवंता ॥  
रूपिमहाहिमवंता, उसु उच्चा रूपकण्यमया ॥४७॥

शब्दार्थ—सुवर्णमय शिखरी अने लघुहिमवंत ए वे पर्वतो  
एक सो योजन ऊंचा डे. रूपानो रूपीपर्वत अने सुवर्णनो महाहि  
मवंत पर्वत ए वे वसो जोजन ऊंचा डे. ॥ ४७ ॥

चत्तारि जोयण सए, उच्चिष्ठो निसढनोलवंतो य ॥  
निसढो तवणिष्ठमउ, वेरुलित नीलवंतो य ॥४८॥

शब्दार्थ—नैषध अने नीलवंत ए वे पर्वतो चारसो जोजन  
ऊंचा डे. तेमां नैषध तपावेला सुवर्ण सरखो अने नीलवंत लीला  
रत्नना वर्ण सरखो डे. ॥ ४८ ॥

सद्वेवि पद्ययरा, समयखीतंमि मंदरविहुणा ॥

धरणीतले मुवगाढा, उस्सेय चउड न्नायंमि ॥४९॥

शब्दार्थ—फक्त अहीन्दीपना मेरु विना काल अयवा केत्र ए वेयने  
विषे सर्वे साश्वतापर्वतो ऊंचपणाना चोथान्नागेपृथ्वीमां उमाहोयडे.

(५१)

खंमाई गाहाहिं, दसहिं दारेहिं जंबूधीवस्स ॥

संघयणी सम्मता, रझ्या हरिन्नहसूरिहि ॥३०॥

शब्दार्थ—खानवादिकनी गाथाए करीने दश घारथी हरिन्न  
इसूरिये रचेली जंबूधीपनी सग्रहणी समाप्त थइ ॥३०॥

### चैत्यवदन भाष्य.

वंदितु वंदाणिङ्गे, सवे चिङ्वंदणाश्सुविचारं ॥

वहुवित्तिज्ञासचुणी—सुयाणुसारेण बुद्धामि ॥ १ ॥

शब्दार्थ—वदन करवा योग्य एवा सर्वे ( पाच ) परमेष्ठीने  
वादीने चैत्यवदन, गुरुवदन अने पञ्चखाणाना उत्तम विचारने वहु  
वृत्ति, ज्ञाप्य अने चूर्णिरूप सूत्रना अनुसारे हु कहीश ॥१॥

चार गाथायी २४ द्वार कहेछे

दहतिगञ्चहिगम पणां, दुदिसितिहुग्गहतिहाऊवंदणया  
पणिवायनमुक्तारा, वणा सोलसयसीयाला ॥ २ ॥

शब्दार्थ—१ नैपधिक आदि दशत्रिक, २ पाच अज्ञिगम, ३  
खी पुरुषने उज्जा रहेवानी वे दिशा, ४ जघन्य अध्यम, उत्कृष्ट  
त्रण अवश्रद, ५ त्रण प्रकारनुं चैत्यवंदन, ६ पाच अगे प्रणिपात,  
७ नमस्कार, ८ नवकार प्रमुख नव सूत्रना सोलसोने सुन्तालो  
श अकर—॥ २ ॥

झासीइसयं तु पया, सगनउइसंपयाऊ पणदमा ॥

वारअहिगार चउवं—दणिङ्गसरणिङ्गचउहजिणा ॥३॥

शब्दार्थ—वली ए नवकार प्रमुख नव सूत्रना एकसोने एका  
सी पद, १० ए नवसूत्रनी सत्ताणु सपदा, ११ नमुबुणादि पाच  
दड, १२ वार अधिकार, १३ चादवायोग्य, १४ शरण करवा योग्य,  
१५ नामस्थापनादिक चार प्रकारना जिन—॥३॥

चउरो थुइ निमित्तष्ठ—वारहहेउथ्रा सोलुआगारा ॥  
गुणवीसदोसउस्स—गगमाणथुतं च सगवेला ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—१६ चार प्रकारनी स्तुति, १७ पापक्षपणादिक आठ निमित्त, १८ फल साधवाना वार हेतु अने १९ अपवादथ्री सोलु आगार, २० काउस्सगमां उगणीङ्ग दोप, २१ काउस्सगमनुं प्रमाण, २२ वीतरागनीस्तुति अनेश्वदररोज सात वखत चैत्यवंदन दस आसायणाचाउ, सबे चिइवंदणाइं गणाइं ॥

चउवीसदुवारेहिं, दुसहस्सा हुंति चउसयरा ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—२४ देरामां चैत्यवंदन वखते तांबुल प्रसुख दश आशातनानो त्याग. आ उपर चारे गाथामां कहेला चोवीश हारे करीने सर्वे मली चैत्यवंदननां स्थानको बे हजार अने चुमो तेर थाय हे. ॥ ५ ॥

हवे दश त्रिकनां नाम कहेछे.

तिन्नि निसिहि तिन्निउ, पयाहिणा तिन्नि चेव य पणामा तिविहा पूया य तहा, अवर्तियन्नावणं चेव ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—१ त्रण निसिही, २ त्रण प्रदक्षिणा अने ३ त्रण प्रणाम, ४ त्रण प्रकारी पूजा, वली तेमज ५ त्रण अवस्थानुं ज्ञाववुं-तिदिसिनिरस्कणविरई, पयन्नूमिपमज्जाणं च तिखुत्तो ॥ वन्नाइतियं मुद्दा—तियं च तिविहं च पणिहाणं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—६ त्रण दिशामां जोवानुं विरमण अने ७ त्रणवार पग मूकवानी नूमिनुं प्रमार्जन, ८ वर्णादिकनुं आलंबन, ९ वलो त्रण मुझ अने १० त्रण प्रकारनुं प्रणिधान. ए दश त्रिकनां नाम जाणावा. ॥

त्रण निसिही कये कये टेकाणे कहेवी ते कहेछे.

घरजिणहरजिणपूञ्चा—वावारच्चायउ निसिहितिर्ग ॥  
अग्गद्वारे मज्जे, तइया चिइवंदणासमये ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—घर, जिनमंदिर अने जिनपूजाना व्यापारना त्या  
गथी त्रण निसिहि थायरे तेमा प्रथम जिनमंदिरना आगला वा  
रणामा, गजारामा अने चैत्यवंदनने अवसरे एम त्रण निसिहि  
साचववी ॥ ७ ॥

इवे प्रणाम त्रिक कहेछे

अंजलिवचो अष्टो—एनु अ पचगञ्ज अ तिपणामा ॥  
सद्बुद्ध वा तिवारं, सिराइनमणे पणामतियं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—१अजलीवद्ध प्रणाम, २अर्घ्यवनत प्रणाम, ३पचाग  
प्रणाम ए त्रण प्रणाम जाणावा अथवा सर्व प्रणाम करवाने व  
खते त्रणवार मस्तक नमावबु ए पण त्रण प्रणाम जाणावा ४

इवे पूजा त्रिक कहेछे

अगग्नावज्जेया, पुष्काहारयुद्धहि पूयतिगं ॥

पचोवयारा अष्टो—वयारसद्वोवयारा वा ॥ १० ॥

शब्दार्थ—पुष्प केशरादिके करीने अगपूजा, फलादि मूकवा  
थी अग्रपूजा अने स्तुतिथी ज्ञावपूजा एम त्रण जातनी पूजा  
थायरे अथवा पचोपचार पूजा, अष्टोपचार पूजा अने सर्वोपचार  
पूजा ए पूजात्रिक थायरे ॥ १० ॥

इवे अवस्था त्रिक कहेछे

जाविङ्ग अवरुतियं, पिमठपयत्ररूवरहियतं ॥

ठउमठुकेवलितं, सिद्धत चेव तस्सठो ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—हे ज्ञवजीव! तु ज्ञगवतनी पिमस्थादि त्रण अव  
स्था ज्ञव्य तेमा पिमस्थावस्थाने उद्धस्थावस्थाये, पदस्थावस्था  
ने केवलीङ्गानावस्थाये अने रूपरदितावस्थाने सिद्धावस्थाये  
ज्ञाववी, एज निश्चे ते पिदस्थावस्थानो अर्थरे ॥ ११ ॥

ए त्रण अवस्था क्या भाववो तेनां नाम कहेते

एहवणचगोहिं ठउम—ठवव्रु पमिहारगोहिं केवलियं ॥  
पलियं कुस्सगगोहि य, जिणस्स ज्ञाविङ्ग सिष्टतं ॥१४॥

शब्दार्थ—जिनराजनी न्हवण, पखाल अने पूजाये करीने  
ठझस्थावस्था ज्ञाववी; आठ प्रातिहार्ये करीने केवली अवस्था ज्ञा-  
ववी अने पलोंगीवालीने काउस्सगने आकारे करीने सिष्टव  
स्था ज्ञाववी. ॥ १४ ॥

हवे छ दिशामां जोवाथी निवर्तवानुं चिक कहेछे.

उडाहोतिरियाणं, तिदिसाणनिरखणं चझङ्गहवा ॥  
पर्छिमदाहिणावामण, जिहामुहनहृदितिजुउ ॥१३॥

शब्दार्थ—चंचे, नीचे अने आडुं अवलुं ए त्रण दिशाए जोवुं  
त्यजी देवुं. अथवा पोतानी पाठल, जमणीवाजु अने डावीवाजुं  
जोवुं त्यजी इइ फक्त जिनेश्वरनां मुखने विषे हृष्टि राखवी. १३

हवे आलंवन अने मुद्रा चिक कहेछे.

वन्नतियं वन्नडा—लंबणमालंबणं तु पमिमाई ॥

जोगजिणमुत्तिसुत्ती—मुदाज्ञेषणं मुद्दतियं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—वर्णलंबन, अर्थालंबन, अने प्रतिमालंबन ए त्रण  
वर्णचिक जाणवा. तेमां प्रतिमादिक शब्दयी ज्ञाव अरिहंतादिनुं  
तथा स्थापनादिकनुं य्रहण करवुं. वली योगमुद्दा, जिनमुद्दा अने  
मुक्तासुक्तिमुद्दा एवा मुद्राना ज्ञेदयी मुद्राचिक जाणवुं. १४

प्रथम योगमुद्रानुं स्वरूप कहे छे.

अन्नुसंतरिअंगुलि—कोसागरेहिं दोहिं हड्डेहिं ॥

पिटोवरि कुप्परिसं—ठिएहिं तह जोगमुद्दति ॥१५॥

शब्दार्थ—परस्पर बन्ने हाथनी दसे आंगुली अंतरित करेला  
कमलना ढोमाना आकारवाला तेमज पेटनी उपर बन्ने कोणीउ  
मूकेली एवा वे हाथ करीने रहेवुं. ते जोगमुद्दा कहेवाय रे. १५

(५५)

हवे जिनमुद्रानु लक्षण कहें छे

चत्तारि अंगुखाइँ, पुरउ ऊणाइँ जड़ पच्चिमउ ॥  
पायाणं उस्सग्गो, एसा पुण होइ जिणमुदा ॥१६॥

शब्दार्थ—वली जेमा पगना आगला पहोचाने परस्पर चार  
आगलनो आतरो राखीने अने पावली पानीनी बाजुनो काइ  
नुगे आतरो राखीने जे काउस्सग्ग करवो ए जिनमुद्रा होयरे.

हवे मुक्का शुक्कि मुद्रा कहें छे

मुत्तासुत्तीमुद्रा, जड़ सुमा दोवि गन्निअा हड्डा ॥  
ते पुण निलाम्बदेसे, लग्गा अन्ने अलग्गति ॥१७॥

शब्दार्थ—जेमा वन्ने पण हाथ सरखी रीते गन्नित राखी अ  
ने ते वन्ने हाथ लखाटना मध्ये लगाउया होय (अहि कोइ आचा  
यने मते) न लगाउया होय तोपण मुक्काशुक्किमुद्रा कहेवाय रे

हवे कइ मुद्राये कइ क्रिया करवी ते कहे छे

पंचंगो पणिवाउ, थयपाठो होइ जोगमुद्राए ॥

वंदण जिणमुद्राए, पणिहाणं मुत्तिमुद्राए ॥१८॥

शब्दार्थ—जोगमुद्राये करीने पचाग प्रणिपात अने स्तवपाठ  
थायरे, जिनमुद्राये वदन अने मुक्काशुक्किमुद्राये प्रणिधान थायरे  
हवे प्रणिधानत्रिकनु स्वरूप कहे ते

पणिहाणतिगं चेइय—मुणिवंदणपञ्चणासरूप वा॥

मयवयकाएगत्तं, सेसतियत्रो उ पयडुत्ति ॥१९॥

शब्दार्थ—चैत्यवदन, मुनिवदन अने प्रार्थनास्वरूप ए त्रण  
प्रणिधानत्रिक जाणवु अथवा मन, वचन अने कायानुं एकाग्र  
पणु करवु ते पण प्रणिधानत्रिक कहेवाय वाकी बीजा अने सा  
तमा त्रिकनो अर्थ तो प्रगटज रे ॥२०॥

हवे त्रीजुं पांच प्रकारसुं अभिगमद्वार कहे छे.

**सचित्तदब्दमुज्जण—मचित्त मणुज्जणं मणेगतं ॥**

**एगसामित्तरासं—ग अंजलि सिरसि जिणदिठे प४**

**शब्दार्थ—१ सचित्त इयनो त्याग, २ अचित्त वस्तुने न त-  
जवानी अनुज्ञा, ३ मनसुं एकाग्रपणुं, ४ एकसाडी उत्तरासंग अने  
५ जिनेश्वरनां दर्शन थये माथा उपर अंजलि जोमवी. ए पांच  
अन्निगम जाणवा. ॥ ४० ॥**

**इय पंचविहान्निगमो, अहवा मुच्चंति रायचिन्हाई ॥**

**खगं ठतोवाणह, मञ्चं चमरे अ पंचमए ॥४१॥**

**शब्दार्थ—ए पूर्वे कहेला पांच प्रकारना अन्निगम देवगुरु  
पासे आवता साचववा. अथवा राजचिन्ह त्यजी देवां. ते राजचि-  
न्ह आ प्रमाणे. १खड्ह, २ठत्र, ३मोजडी, ४मुकुट, अने ५चामर.**

हवे वे दिशिनुं त्रीजुं अने त्रण अवग्रहनुं चोयुं द्वार कहे छे.

**वंदंति जिणे दाहिण—दिसि छिआ पुरिस वामदिसि नारी  
नवकरजहन्नु सष्ठि—करजिष्ठ मङ्गगहो सेसो ॥४२॥**

**शब्दार्थ—जिनेश्वरनी दिक्षिण दिशा एटले जमणी वाजुये  
उन्ना रहीने पुरुषो वंदना करे अने वामदिशा एटले डावी वाजुए  
उन्ना रहीने स्त्रीयो वंदना करे. प्रज्ञुथी नवहाथ दूर रहेवाथी ज  
घन्य, साठ हाय रहेवाथी उत्कृष्ट अने नव तथा साठनी अंदर उ  
ज्ञा रहेवाथी मध्यम अवग्रह आय रे. ॥ ४२ ॥**

हवे चैत्यवंदन करवानुं पांचमुं द्वार कहे छे.

**नमुक्कारेण जहन्ना, चिझवंदण मध्य दंमयुझुच्छला ॥**

**पणादंम युझचउक्कग—थयपणिहाणेहिं उक्कोसा ॥४३॥**

**शब्दार्थ—नवकार वोली नमस्कार करवाथी जघन्य, अरि  
हंत चेश्याणानुं युगल तथा चार स्तुति वोली नमस्कार करवाथी**

मध्यम अने पाच नमुद्दुणरूप दमक तथा आठ स्तुतिना स्तवन  
अने त्रण प्रणिधाने करीने उत्कृष्ट चैत्यवदना जाणवी. २३

अन्ने विति गेणं, सक्त्वएणं जहन्नवंदणया ॥  
तद्गतिगेण मप्पा, उक्तोसा चउहि पंचहि वा ॥४४॥

शब्दार्थ—केटखाक आचार्यों एम कहे ठेके, एकवार नमुद्दुण  
वोलवाथी जघन्य, वे अथवा त्रणवार नमुद्दुण वोलवाथी मध्यम अने  
चार अथवा पाचवार नमुद्दुण वोलवाथी उत्कृष्ट चैत्यवदन याय ठे

हवे उडु प्रणिपात तथा सातमु नमस्कार द्वार कहे ठे

पंचगो पणिवाड, दोजाणू करद्गुत्तमगं च ॥

सुमहञ्चनमुक्तारा, इग छुग तिग जाव अष्टसयं॥४५॥

शब्दार्थ—वे ढीचण वे हाथ अने मस्तक ए पाच अग पृष्ठवो  
ने अडानी नमस्कार करवा ते पचाग प्रणिपात कहेवाय तेमज  
एक, वे, त्रणथी मानी एकसो आठ नवकार कहेवा ते नमस्कार  
कहेवाय ॥ ४५ ॥

हवे अक्षर, पद जने संपदानो सख्याना तणद्वार एकठा कहे छे  
अमस्ति अष्टवीसा, नवनन्तयसयं च छुसयसगनञ्चया॥  
दोगुणतिस छुसष्ठा, छुसोलअमनन्तयसयछुवन्नसय ४६

शब्दार्थ—१ नवकारना अडसठ, २ इच्छामि खमासमणना अ  
घवीश, ३ श्रिया वहियाना एकसोने नवाणु, ४ नमुद्दुणना वसोने  
सन्नाणु, ५ अस्तिहत चेइयाणना वसो उगणत्रीस, ६ लोगस्तना व  
वोने सार, ७ पुरुक्तवग्दीना वसोने सोल, ८ सिद्धाण वुद्धाणना व  
एकसो अघाणु, ९ जावति चेइयाइ, जावति केविसाहु अने जयवि  
यराय ए त्रणना एकसो वावन अक्तर ठे सर्व मली १६४४ थायठे  
इथ्र नवकारखमासण—श्रियसक्त्वआइदमेसु ॥  
पणिहाणेसु अ अद्गस—तवन्नसोलसयसीयाखा॥४७॥

( ५७ )

शब्दार्थ—ए प्रेमाणे नवकार, खमासमण, इरियावहि, शक्तवादि दंडकमां अने प्रणिधानमां एम सर्व मली फक्त एकवार उच्चार करेला अक्षरो सोलसोने सुडताली थाय रे. ॥३७॥

नववत्तीसतित्तीसा, तिचत्तञ्चमवीससोलवीसपया ॥

मंगलइरियासक्क—ड्रयाइसु इगसीइसयं तु पदा ॥३८॥

शब्दार्थ—नवकार, इरियावहि अने नमुत्रुणादि सात पदमां नव, बत्रीश, तेत्रीश, तेतालीश, अठावीश, सोल अने वीश एट ला पदो होय रे. सर्व मलीने एकसो एकाशी पद थाय रे. ३७ अष्ट छ नव छ य अ—छवीस सोलसय वीस वीसामा ॥ कमसो मंगलइरिया—सक्कड्रयाईसु सगनऊई ॥३९॥

शब्दार्थ—नवकार, इरियावहि अने नमुत्रुणादिक सात सूत्र मां अनुकमे आठ, आठ, नव, आठ, अठावीस, सोल अने वीश एटला विसामा एटले संपदा होय रे. सर्व मलीने सज्जाणु थाय.

तेज वातने फरोथी कहे छे.

वण्ठसठि नवपय, नवकारे अष्टसंपया तव्र ॥

सयसंपय पयतुल्ला, सत्तरखरञ्चष्टमी डुपया ॥३०॥

शब्दार्थ—नवकारमां अमसठ अक्षर, नव पद तथा आठ संपदा होय रे. तेमां सात संपदा तो सात पदनी रे अने सत्तर अक्षरनी आठमी संपदा भेल्ला वे पदनी रे. ॥ ३० ॥

पणिवायअखराइ, अष्टावीसं तहा य इरियाए ॥

नवनज्ञयमखरसयं, दुतीसपय संपया अष्ट ॥ ३१॥

शब्दार्थ—इडामिखमासमणनां अक्षर अठावीश तेमज इरियावहिनां एकसो नवाणु अक्षर, बत्रीश पद अने आठ संपदा रे डुगडुगडुगचञ्चञ्चञ्चपण—इगारडुगडुरियसंपयादिपया ॥ इड्डाइरिगमपाणा—जेमेएगिंदिअन्नितस्स ॥ ३२ ॥

**शब्दार्थ—इरियावहिनी** आठ सपदाना अनुक्रमे वे, वे, एक चार, एक, पाच, अगीयार अने उ एटला पदो जाणवा अने आ दि पद तो श्वामि, इरियावहियाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, जे मे जीवा, एगिदिया, अभिह्या अने तस्सञ्चरी ए आठ जाणवा

हवे इरियावहिनी आठ सपदानां नाम कहे छे

**अप्पुवगमो, निमित्तं, उहेअरहेतुसंगहे पंच ॥**

**जीवविराहणपमि—कमण्ज्ञेयउ तिन्नि चूलाए ३३**

**शब्दार्थ—अन्ध्युपगम, निमित्त, उघ, इतरहेतु अने पाचमी सं ग्रह वली जीव, विराधना अने प्रतिक्रमणएवा ज्ञेदर्थी इरियावहिनी आठ सपदारे तेमा प्रथमनी पाच मूलसपदा अने पाठ्यनी त्रण चूलिका सपदा जाणावी ॥ ३३ ॥**

हवे नमुत्युणना प्रत्येक सपदाना पदनी सख्या तथा आदिपद फहे छे  
**उतिचउपणपणपणुच—उतिपदसक्त्यसपयाइपया॥**  
**नमुआइगपुरिसोलो—गच्छन्नयधम्मप्पजिणसवं ॥३४॥**

**शब्दार्थ—नमुत्तुणनी नवसपदामा अनुक्रमे वे, त्रण, चार, पांच, पाच पाच, वे, चार अने त्रण एटला पदनी सख्या होयचे तेमा दरेकनु आदि पद, नमुत्तुण, आइगराण, पुरिसुन्नमाण, लो गुन्नमाण, अन्नयदयाण, धम्मदयाण, अपमिह्यवरनाण, जिणाण, सव्वनूण, सव्वदरिसिण ए जाणावां ॥ ३४ ॥**

हवे नमुत्युणनी नव सपदाना नाम कहे छे

**योअवसंपया उह—इयरहेऊवउगतद्वेऊ ॥**

**सविसेसुवउगसरूव—हेऊ नियसमफल मुख्ये॥३५॥**

**शब्दार्थ—स्तोतव्य सपदा, सामान्य हेतु सपदा, विशेष हेतु सपदा, उपयोग संपदा, तद्हेतु सपदा, सविशेषउपयोगहेतु सपदा, स्वरूपहेतुसपदा, निजसमफलदसपदा अने मोक्षसपदा,**

ए नमुद्गुणनी नवसंपदानां नाम कह्यां ॥ ३५ ॥

हवे नमुत्थुणनां अक्षर, संपदा अने पदनो सर्वं संख्या कहे छे.

**दोसगनञ्जल्ला वस्ता,** नवसंपय पयतित्तीस सक्कथए ॥

**चेइयथयष्टसंपय,** तिचत्तपय वस्तुसयगुणतीसा ॥ ३६ ॥

**शब्दार्थ—**नमुद्गुणमां सर्वं मली वसोने सत्ताणुं अक्षर, नव संपदाअने तेत्रीश पद जाणवा. वली अरिहंत चेइयाणं मां सर्वं मली आठ संपदा, त्रेतात्रीश पद अने वसोने उगणत्रीश अक्षर जाणवा.

चैत्यस्तव (अरिहंत चेइयाणं नी) संपदाना पठनी संख्या तथा आदि पद कहे छे.

**उठसगनवतियष्टचल्ल—**उप्पयचिद्दुसंपयापया पठमा ॥

**अरिहंवंदणसिद्धा—**अन्नसुहुमएवजाताव ॥ ३७ ॥

**शब्दार्थ—**आठ संपदामां अनुक्रमे पहेलेथी वे, ठ, सात, नव, त्रण, ठ, चार अने ठ एटलां पदो होय छे. तेमज तेनां अरिहंत चेइयाणं, वंदण वत्तियाए, सद्धाए, अन्नठ उससिएणं, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, एवमाइएहिं, जाव अरिहंताणं अने तावकायं. ए नव आदि पदो जाणवां ॥ ३७ ॥

हवे चैत्यस्तवनो संपदानां नाम कहे छे.

**अप्पुवगभो निमित्तं, हेऊङ्गवहुवयंत्यागारा ॥**

**आगंतुगच्छागारा, उस्सग्गावहिसरूवठ ॥ ३८ ॥**

**शब्दार्थ—**अन्नयुपगम संपदा, निमित्त संपदा. हेतु संपदा, एक वचनांत आगार संपदा, वहु वचनांत आगार संपदा, आगंतु क आगार संपदा, कायोत्सर्गविधि संपदा अने रूप संपदा ए अरिहंत चेइयाणं नी आठ संपदालु जाणवी. ॥ ३८ ॥

हने नामस्तवादिकनां पद विगेरेनी संख्या कडे छे.

**नामययाइसु संपय—**पयसम अमवीस सोलवीस कमा॥

**अइरुत्तवस्तु दोसठ—**इसय सोलठ नज्ञासयं ॥ ३९ ॥

(६१)

शब्दार्थ—नामस्तवांदिकने विपे पद समान अघावीस, सोल  
अने वीस अनुक्रमे सपदा जाणवी तेमज वीजोवार नहि उचरे  
ला अक्षरो वसो साठ, वसो सोल अने एकसो अगणु अनुक्र  
मे जाणवा ॥ ३५ ॥

पणिहाण छवन्नसयं, कमेण सगति चउवीस तित्तीसा ॥  
गुणतीस अछवीसा, चउतीसिगतीस वार गुरुवस्ता ४०

शब्दार्थ—प्रणिधान सूत्रमा एकसो वावन अक्षरो जाणवा  
इवे नवकारमा सात, खमासमणमा त्रण, श्रियावहिमा चोवीस,  
नमुत्तुणमा तेत्रीस, अरिहत चेइयाणमा उंगणत्रीस, लोगस्तमा  
अघावीश, पुरकरवरमा चोत्रीस, सिद्धाणमा एकत्रीस अने प्रणि  
धान त्रणमा वार गुरु अक्षर जाणवा ॥ ४० ॥

इवे पाच इडकतु अने तेने विपे नेववाटवाना वार अगिकारनु  
११-१२ मुद्दार कहे डे

पणदमा सकर्त्तय, चेइच्छ्र नामसुच्छ्र सिद्धर्यद्ध्र ॥

दो इग दोदो पंचै य, अहिगारा वारस कमेण ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ—शक्तस्तव, चैत्यस्तव, नामस्तव, श्रुतस्तव अने सि  
क्षस्तव ए पाच दंडकरे तेमा वे, एक, वे, वे अने पाच एम अनु  
क्रमे सर्व मलीने वार अगिकाररे ॥ ४१ ॥

इवे ए वार अगिकारना प्रथम पद कहे डे

नमु जेइच्छ्र अरिहं, लोग सद्व पुख तम सिद्ध जोदेवा ॥  
उच्चि चत्ता वैच्छ्रा, वच्चग अहिगार पढमपया ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ—नमुत्तुण, जे अइआ, अरिहंत चेइयाण, लोगस्त,  
सव्वलोए, पुरकरवर, तमतिमिर, सिद्धाण बुद्धाण, जो देवा, उच्चित,

<sup>१</sup> लोगस्त, पुरुखरवरवदो अने सिद्धाण उद्धाण

<sup>२</sup> जापति चेडआइ, जावत केविमाहु अने आभवमग्वडा सुधीजय वीयराय

चत्तारि अष्ट, वेयावज्ज गराणं, ए वार अधिकारनां प्रथम पद जाणवा.

हवे कथा अधिकारे कोने वांदवा ते कहे छे.

पठम अहिगारे वंदे, ज्ञावजिणे वीयएउ दवजिणे ॥

इगचइय रवणजिणे, तइय चउडँमि नामजिणे ॥४३॥

शब्दार्थ—प्रथम पदना अधिकारमां ज्ञावजिनने, वीजा अधिकारमां इव्यजिनने, त्रीजा अधिकारमां एक चैत्य स्थापना जि नने अने चोआ अधिकारमां नामजिनने वांडु दुं. ॥ ४३ ॥

तिहुअणार्ववणजिणे पुण, पंचमए विहरमाण जिणार्वे॥

सत्तमए सुयनाणं, अष्टमए सब सिद्ध थुई ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—वली पांचमां अधिकारमां त्रेण न्मुवनना स्थापना जिनने, भग अधिकारमां विचरता जिनने, सातमा अधिकारमां श्रुतज्ञानने अने आरमा अधिकारमां सर्व सिद्धनी स्तुति जाणवी. तिड्डाहिव वीरयुइ, नवमे दसमे य उच्चयंतथुई ॥

अष्टवयाइ इगदिसि, सुदिठि सुरसमणा चरिमे ॥४५॥

शब्दार्थ—नवमा अधिकारमां तीर्थपति श्री वीरप्रभुनी स्तुति अने दशमा अधिकारमां रेवताचखनी स्तुति जाणवी. तथा अगीयारमा अधिकारमां अष्टापदादिकनी अने रेखा अधिकारमां सुदृष्टि देवताना स्मरणरूप स्तुति जाणवी. ॥ ४५ ॥

नव अहिगारा इह लखि-अविड्डरा वित्तिआइ अणुसारा तिसि सुयपरंपरया, वीयउ दसमो इगारसमो ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—ए वार अधिकारमां १-३-४-५-६-७-८-९-१०-११ ए नव अधिकार लखित विस्तार नामना ज्ञाष्यनी वृत्ति आदिना अनु सारे जाणवा अने १०-११, ए त्रेण श्रुतनी परंपराथी जाणवा.

आवस्सय चुस्सीए, जं ज्ञणियं सेसया जहिड्डाए ॥

तेण उच्चताइवि, अहिगारा सुयमया चेव ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—जेम आवश्यक सूत्रनी चूर्णीने विषे कहुं रे ते उं  
द्धितादि शेष अधिकार इत्ता प्रमाणे जाणवा ते कारण माटे उ  
द्धिंत सेख इत्यादिक गायाची पण ते सर्व अधिकार निश्चे श्रुत  
मय जाणवा ॥ ४७ ॥

वीरु सुयहृयाइ, अहुरु वन्निरु तहि चेव ॥

सकरुयंते पढिरु, द्वारिहवसरि पयम्हरो ॥४८॥

शब्दार्थ—वीजो श्रुतस्तवादि अधिकार अर्थयो श्रुतस्तवमा  
ज वर्णव्यो रे वली शक्रस्तवना अते जे कहेलो रे ते इव्य अरिह  
तने वादवाना अवसरे प्रगट अर्थपणे जाणवो ॥ ४८ ॥

असदाइन्नणवज्ञ, गोअहु अवारिअति मज्जरा ॥

आयरणावि हु आण, ति वयणउ सु वहु मन्त्रंति ॥४९॥

शब्दार्थ—“पापरहित अने गीतार्थोए नहि वारेला एवा मध्य  
स्थ परित गीतार्थ पुरुषोए करेली आचरणा पण निश्चे जगवत  
नी आळा जाणवी,” एवा वचनथी जखा पुरुषो ते आचरणने  
वहु माने रे ॥ ४९ ॥

इवे चार वादवा योग्यनु ३-१४-१५ मुद्दार कहे छे

चउ वदणिज्ञ जिणामुणि, सुयसिद्धा इह सुराइ सरणिज्ञा  
चउह जिणा नाम रवण, द्वज्ञावजिण न्नेण ॥५०॥

शब्दार्थ—जिन, मुनि, श्रुत अने सिद्ध ए चार वादवा योग्य रे  
अने ए जिनशासनना अधिष्ठायक सम्यक् दृष्टि देवता स्मरण क  
रवा योग्य रे वली नाम, स्थापना, इव्य अने ज्ञाव एवा जिनना  
न्नेदे करीने जिनेश्वरना चार ज्ञेद रे ॥ ५० ॥

इवे ए चार प्रकारना जिननु स्वरूप चार निषेपाधी कहे रे  
नामजिणा जिणानामा, रवणजिणा पुण जिणादपमिमाउ  
द्वजिणा जिणाजीवा, ज्ञावजिणा समवसरणत्रा ॥५१॥

शब्दार्थ - जिनेश्वरनां नाम ते नामजिन, जिनेश्वरनी प्रति  
मा ते स्थापनाजिन, जिन नामकर्म वांघनारा जीवो द्रव्यजीन  
अने समवसरणमां विराजित अयेला ज्ञावजिन जाणवा.

हवे चार स्तुतिनुं १६ मुं द्वार कहे छे.

**अहिगयजिण पढमयुई,** वीया सद्वाणतइच्छा नाणस्स॥  
**वेयावच्च गराण ज,** उवउगहुं चउउरथुई ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ - कृपज्ञादि मुख्य आदरेला जिनेश्वरनी प्रथम स्तु  
ति, सर्व जिनेश्वरोनी वीजी स्तुति, ज्ञाननी त्रीजी स्तुति अने  
शासननी वैयावच्च करनारा सम्यक् दृष्टि देवोनी उपयोगने अर्थे  
चोथी स्तुति जाणवी. ॥ ५७ ॥

हवे आठ निमित्तनुं १७ द्वार कहे छे.

**पावखवणाहु इरिआइ,** वंदणवत्तिआइ ठ निमित्ता ॥  
**पवयणसुरसरणहुं,** उसगो इच्छा निमित्तठ ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ - पाप खपाववाने अर्थे इरियावहिया पडिकमवी ए  
प्रथम निमित्त, वंदणवत्तियादि ठ निमित्त अने प्रवचनना देवता  
ना स्मरणने अर्थे कायोत्सर्ग ए सर्व मलीने आठ निमित्त थया.

हवे वार हेतुनुं १८ मुं द्वार कहे छे.

**चउ तस्स उत्तरीकरण—पमुह सधाइच्छा य पण हेऊ ॥**  
**वेयावच्चगरताइ,** तिन्नि इच्छा हेऊ वारसग्गं ॥ ५९ ॥

शब्दार्थ - ते पापनो नाडा करवा माटे उत्तरीकरण विगेरे  
चारे अने अद्वादिक हेतु पांचे रे. वली वैयावच्चगराण इत्यादि  
त्रण हेतु रे. ए सर्व मली वार हेतु चैत्यवंदनमां थाय रे. ५९

हवे सोल आगारनुं १९ मुं द्वार कहे छे.

**अन्नह्रयाइ वारस,** आगरा एवमाइया चउरो ॥  
**अगणिपणिदि रिंदण,** वोही खोज्ञाइ मकोय ॥ ५१ ॥

**शब्दार्थ-**अन्नद्वयादि वार आगार अने एवमादिक चार आगर त चारमा १ \*अग्निनो, २ पचेश्चिंडेन, ३ वोधि कोन्नादिक अने ४ सर्पकख विग्रे जाणावा ॥ ५५ ॥

हवे काउसगमा त्यजी देवा योग्य १९ टोपना नामनु २० मु द्वार कहे छे  
घोडगलय खंजाई, मालुदीनिअल सवरिखलिणवहू ॥  
खबूत्तर यण सजइ, जमुहंगुलि वायस कविठे ॥५६॥

**शब्दार्थ-**अश्व, लता, स्तन्न, माल, उधि, नियल, शवरि, खलिण, वधू, खबूत्तर, स्तन, सयति, जमुहंगुलो, वायस अने कोठ दोप ॥ ५६ ॥

सिरकप मूऱ्य वारुणि, पेहति चश्जा दोस उस्सगे ॥  
खंवूत्तर यण सजइ, नदोस समणीण सवहुसहीण ॥५७॥

**शब्दार्थ-**शिरकंप, मूक, मटीरा अने प्रेष्य ए उगणीस दोप कायोत्सर्गमा त्यजी देवा, पण खबूत्तर, स्तन अने सयति ए त्रण दोप साध्वीने न होय वली वधु दोप सहित उपर कहेला त्रण दोप अर्थात् चारे दोप श्राविकाने न होय ॥ ५७ ॥

हे काउस्सगना प्रमाणनु २१ मु तथा स्तवननु २२ मु द्वार कहे छे  
श्रिउस्सगपमाणि, पणवीसुस्सास अठ सेसेसु ॥

गन्नीर महुरसह, महर्जुतं हवइ युतं ॥ ५८ ॥

**शब्दार्थ-**श्रियावहिना काउस्सगनु प्रमाण पञ्चीश श्वासोश्वासनु जाणावु, वाकीना काउस्सगनु आठ श्वासोश्वासनु प्रमाण जाणावु वली मेघनी पेरे गन्नीर, मधुर शब्दवाला तेमज महा ग्रथवाला प्रभुना स्तवनो होय रे ॥ ५८ ॥

\* भग्निना भयर्थी, पचेश्चिंडेना चेंडेनना भयर्थी, धर्षनो हेन्नार्थी अने सर्पदशना भयर्थी भूर्मने पूजतो आयो ससे तो कायोत्सर्ग भागे नहि

हवे एक दिवसमां चैत्यवंदन करवानुं २३ मुं द्वार कहे छे.

**पमिकमणेचेइयजिमणा, चरिमपमिकमणसुअणपमिवोहे  
चिइवंदण इथ्रा जइणो, सत्तजवेला अहोरत्ते ॥५४॥**

**शब्दार्थ—प्रज्ञातना पमिकमण वखते, देहरे, ज्ञोजन वखते,  
ज्ञोजन करया परी, सांजना पमिकमण वखते सूति वखते, पा  
ठली रात्रीये जाग्या परी. एम रात्री दिवस मली साधुने सात  
वखते चैत्यवंदन करवुं. ॥ ५४ ॥**

**पमिकमिज गिहिणोवि हु, सग्गवेला पंचवेल इअरस्स॥  
पूअ्रासु तिसंजासु अ, होइ तिवेला जहन्नेण ॥६०॥**

**शब्दार्थ—पमिकमण करता एवा गृहस्थने पण सात वखत  
अने न करनाराने पांच वखत चैत्यवंदन करवुं. वली जघन्यथी  
तो त्रणे संध्याये पूजाना अवसरे त्रण वखत चैत्यवंदन करवुं.**

हवे आशातनानां नामनुं २४ मुं द्वार कहे छे.

**तंबोख पाण ज्ञोयण, वाहण मेहुस सुअणनिष्ठवणं ॥  
मुत्तुच्चारं जुअं, वज्जे जिणनाह ऊगईए ॥ ६१ ॥**

**शब्दार्थ—तंबोख खावुं, पाणी पीवुं, ज्ञोजन करवुं, जोमा  
पहेरवा, कामचेष्टा करवी, शयन करवुं, थुंकवुं, लघु नीति करवी,  
वमीनीति करवी अने जूवटुं रमवुं, ए दश आशातना जिनमं  
दिरमां त्यजवी. ॥ ६१ ॥**

हवे देव वांदवानो विधि कहे छे.

**इरिनमुकार नमुडुण, अरिहंत युई लोग सब युइ पुरक ॥  
युइ सिद्धा वेअा थुइ, नमुड जावंति थय जयवी ॥६४॥**

**शब्दार्थ—इरियावहि, नवकार, नमुडुण, अरिहंत चेइयाणं,  
कहो एक स्तुति कहेवो. परी लोगस्स, सब्बलोए कहो स्तुति  
कहेवी. परी पुरकरवर अने स्तुति कहेवी. परी सिद्धाणं बुद्धाणं,**

वेयावज्जगराण अने स्तुति कहेवी पर्गी नमुद्दुण, जावति चेइया  
इ अने स्तुति कहीने वेवट जयवीयराय पूर्ण कहेवा ॥ ६२ ॥

हरे समाप्त करता छता फज कहे छे

मघोवाहिविसुद्धं, एवं जो वंदए सया देवे ॥

देविदविदमहित्र्यं, परमपर्यं पावश लहुसो ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ—आ प्रमाणे सर्व उपाधिष्ठी रहित एवो जे माणस  
निरतर अस्त्रिहत देवनी वदना करे रे ते इझोना समूडे पूजेला  
परमपदने तुरत पामे रे ॥ ६३ ॥

### गुरुवदन भाष्य

हरे ने गाथाधी नण प्रकारना गुरुवदनना नाम अने तेमा ने प्रा  
रना वदननु स्वस्य कहे छे

गुरुवंदण मह तिविहं, त फिट्टा योज्ज वारसावत्त ॥

मिर नमणाइसु पढमं, पुण खमासमण डुगि वीत्र्यं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—हवे गुरुवदन त्रण प्रकारे रे ते फेटा वंदन, योज्ज  
वदन अने घाइशावर्ती वदन. तेमा मस्तकने नमाववादिकश्री पहेनु  
अने वे खमासमण देगाथी वीजु वदन थाय रे ॥ १ ॥

जह दूत रायाणं, नमिन्त कङ्ग निवेश्नु पत्रा ॥

वीमजिञ्जवि वंदित्र, गत्रश्च एमेव श्रवड्गं ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जेम दून प्रथम राजाने नमस्कार करीने पर्गी  
कार्य निवेदन करे रे अने राजाए रजा आपवायी ते द्रूत फरी न-  
मस्कार करी जाय रे तेम आ देववदनमा पण वेवार उदना जाणवी  
हरे वर्ण नरगानु कारण हो छे

आपरम्पर्तु मूलं. विण्डि सो गुणवत्त अ पन्दित्ती ॥  
सा य विहिवदााति, विही इमो वारसावत्ते ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—आचारनुं मूल विनय रे अने ते विनय गुणवंती सेवा रूप जाणावो. वली ते सेवा विधिवंदनाशी आय रे. ते विधि आ आगल द्वादशावर्त वंदनने विषे कहेशो. ॥ ३ ॥

इवे त्रीजुं द्वादशावर्त वंदन कहे छे.

तद्यं तु ठंडण डुगे, तड्डमिहो आद्यमं सयख्लसंघे ॥  
बीयं तु दंसणीण य, पयचित्ताणं च तद्यं तु ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—त्रीजुं द्वादशावर्त वंदन तो वे वांडणा देवाशी आय रे. ते पूर्वे कहेला त्रण वंदनमां पहेलुं फेटावंदन चतुर्विंध संघे परस्पर तेवा तेवा अवसरे करी शकाय अने त्रीजुं थोन्नवंदन गुणवंत मुनिने कराय अने त्रीजुं द्वादशावर्त वंदन तो आचार्य पढ़ने विषे रहेला मुनिने कराय. ॥ ४ ॥

इवे ए वंदणानां पांच नाम कहे छे.

वंदन चिइ किइकम्मं, पूञ्चाकम्मं च विणयकम्मं च ॥  
कायबं कस्स व के—णवावि काहेव कइखुतो ॥५॥

शब्दार्थ—वंदनकर्म, चित्तिकर्म, कृतिकर्म, पूजाकर्म अने विनयकर्म. ए पांच प्रकारे वंदन करवुं ते कोने? अने कोणे करवुं? वली क्यारे अने केटलीवार? ॥ ५ ॥

कइउण्यं कइसिरं, कइहिव आवस्सएहिं परिसुरं ॥  
कइदोसविप्पमुकं, किइकम्मं कीस कीरईवा ॥६॥

शब्दार्थ—केटलीवार नमवुं? केटलीवार मस्तक नमाववुं? वली केटला आवश्यके करी शुद्ध थवुं? केटला दोषथी मुक्त थवुं? अने कृतिकर्म शा माटे करवुं? ॥ ६ ॥

इवे त्रण गाथाथी वांडणाना वावीस द्वार कहे छे.

पणनाम पणाहरणा, अजुग्गपण जुग्गपण चउअदाया  
चउदाय पणनिसेहा, चउअणिसेह र कारण्या ॥७॥

शब्दार्थ—१ वंदणाना पाच नाम, २ पाच उदाहरण, ३ पास छादि पाच अयोग्य, ४ आचार्यादि पाच योग्य, ५ चारे वादणो देवराववाने अयोग्य, ६ चार देवराववाने योग्य, ७ पांच स्थानके वादणानो निषेध, ८ चार स्थानके वादणानो अनिषेध, ९ चांदणाना आठ कारण—॥ ७ ॥

आवस्सय मुहूरणतये, तणुपेह पणिस दोस वत्तीसा ॥  
बगुण गुरुवरण डुगगह, डुरवीसखर गुरुपणीसा ॥८॥

शब्दार्थ—१० आवश्यक, ११ मुहूरपञ्जीनी पमिलेहणा, १२ शरीरनी पमिलेहणा, ए त्रण पञ्जीश पञ्जीश करवा- १३ बत्रीस दोषनो निषेध, १४ व गुणनु उपजबु, १५ गुरु स्थापना, १६ वे अवग्रह अने १७ बस्तो बत्रीस अक्षरमा पञ्जीस गुरु वर्ण—॥८॥

पय अम्बवन्न ठ ठाणा, ठ गुरु वयणा आसायणतित्तीसं डुविहि डुवीसदारेहि, चउसया वाणउझवाणा ॥९॥

शब्दार्थ—१८ अघावन पद, १९ ठ स्थानक, २० ठ गुरुवचन, २१ तेत्रीस आशातना अने २२ वे प्रकारनो विधि ए सर्व मलीने चारस्तो वाणु स्थानकरे ॥ ९ ॥

इरे पाच नामनु १ लु द्वार कहे छे  
वदणय चिझकम्म, किझकम्म विणयकम्मपूअकम्म ॥  
गुरुवदणपणनामा, द्वे ज्ञावे डुहोहेण ॥ १० ॥

शब्दार्थ—१ वदनकर्म, २ चित्तिकर्म, ३ कृतिकर्म, ४ पूजा कर्म अने ५ विनयकर्म गुरुवदनना आ पाच नाम, इव्य अने ज्ञा व एम वे प्रकारना सामान्यथी जाएवा ॥१०॥ द्वा १

इवे पाच दृष्टात्तु २ जु द्वार कहे वे  
सीयज्जय सुहुए वी—र कन्ह सेवगडु पालए सधे ॥  
पचे ए दिवंता, किझकम्मे दब्बज्ञावेहि ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—वंदनकर्म उपर शीतलाचार्यनो, चित्कर्म उपर कुष्ठकाचार्यनो, कृतिकर्म उपर वीरा शालवीनो अने कृष्णनो, पूजाकर्म उपर राजाना वे सेवकनो अने विनयकर्म उपर पालक तथा शांवनो दृष्टांत जाणावो. आ पांच दृष्टांत कृतिकर्म उपर इव अने ज्ञावस्थी जाणावा. ॥ ११ ॥ द्वा. २

हवे पांच न वांदवा योग्यनुं ३ ऊँ द्वार कहे छे.

पासड्डो उसन्नो, कुसील संसत्तछ अहाळ्डो ॥  
दुग दुगतिदुगणेगविहा, अवंदणिज्ञा जिणमयमि ॥१४॥

शब्दार्थ—पासड्डो, उसन्नो, कुसीलीयो, संसत्तो अने यथा भंडो ए पांचेना अनुक्रमे वे, वे, त्रण, वे अने अनेक ज्ञेदो वे. जिन मतमां ते पांच अवंदनीय जाणावा. ॥१४॥ द्वा. ३

हवे पांच वांदवाने योग्यनुं ४ थुँ द्वार कहे छे.

आयरिय उवष्माए, पवत्तिथेरे तहेव रायणिए ॥

किइकम्मनिझरधा, कायव्व मिमेसि पंचन्हं ॥१५॥

शब्दार्थ—आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर अने तेमज रत्नाधिप. निर्झराने अर्थे ए पांचेने कृतिकर्म वंदन करवुं.

हवे चार पासे वंदणा न कराववी अने चार पासे कराववो तेनुं ५-६ द्वार कहे छे.

माय पित्रि जिउनाया, अउमावि तहेव सब्ब रायणिए ॥

किइकम्म न कारिज्ञा, चउसमणाई कुण्ठंति पुणो ॥१६॥

शब्दार्थ—माता, पिता, म्होटो ज्ञाइ तेमज वयथी न्हाना पण ज्ञानादिकथी मोटा. ए चार पासे वादणां देवराववानुं न करवुं. वली चार श्रेमण वांदणा आपे. ॥१६॥ द्वा. ५-६

हवे पांच स्थाने वांदणा न देवानुं उमुँ द्वार कहे छे.

विस्कित पराहुते, पमते मा कयाइ वंदिजा ॥

आहार नीहारं, कुणमाणे काउ कामे अ ॥१५॥

शब्दार्थ—गुरु व्यग्र चिन्तवाला, वीजी वाजु मुख करी बेरेला, क्रोधवाला अथवा सूतेला, तेमज आहार अने नीहार करता होय अथवा करवानी श्चा करता होय तो न वादवा १५

इवे चार स्थानके वादणा देवानु ए मु द्वार कहे छे.

( अनुष्टुप् वृत्तम् )

पसंते आसाण र्वे अ, उवसंते उवष्टिए ॥

अणुन्नवि तु मेहावी, किङ्कम्मं पञ्जङ्ग ॥१६॥

शब्दार्थ—शात चिन्तवाला, आसन उपर बेरेला, क्रोधादि र हित अने उदेण इत्यादि कहेवा तैयार होय एवा गुरुने बुद्धिमान पुरुषोए आज्ञा मागवा पूर्वक वदणा करवी ॥१६॥ द्वा ७

इरे आठ कारणे वादणा देवानु ए मु द्वार कहे छे

पमिकम्मणे सज्जाए, काउस्सग्गे वराह पाहुणए ॥

आलोयण सवरणे, उत्तमष्टे य वदणय ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—प्रतिक्रमणमा, स्वाध्यायमा, कायोत्सर्गमा अने अ पराय खमाववामा वादणा देवा वलो नवा आवेला साधुने, आलोचनामा अने मात्सखमणादि तपरूप सवरमा तथा अत सखेखना करता एम आठ कारणे वादणा देवा ॥ १७ ॥

इवे पञ्चीस आवश्यकनु १० मु द्वार कहे छे,

दोवणय महाजाय, आवत्ता वार चउसिर ति गुज्ज ॥

दुपवेसिग निखमाणं, पण्डवीसावसय किङ्कम्मे ॥१८॥

शब्दार्थ—वगार अवनत, एकवार यथाजात, वारवार आव नं, चारवार शिरनु अवनत, वण गुति, वेचार अवग्रहमा प्रवेश करयो अने एकवार निकलवुं ए पञ्चीस आवश्यक वादणामां

होय डे. ॥ १७ ॥ द्वा. ५

किञ्चकम्मंपि कुणांतो, न होइ किञ्चकम्मनिङ्गरा ज्ञागी ॥  
पणवीसामन्नयरं, साहुष्टाणं विराहंतो ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—ए पञ्चीस आवश्यकमाना एकनी पण विराघना करतो एवो साधु, कृतिकर्म करतो वर्तो पण ते कृतिकर्मनी निङ्गरानो ज्ञागी यतो नयी. ॥ १८ ॥ द्वा. १० ॥

हवे मुहपत्तिनी पञ्चीस पडिलेहणानुं १२ मुं द्वार कहे छे.

दिविपमिलेहण एगा, ठ उहृपप्फोमु तिगतिगंतरिया ॥  
अस्कोमु पमज्जणाया, नव नव मुहपत्ति पणवीसा ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—एक दृष्टि पमिलेहन; ठ उंचा पखोमा, त्रण अखोमा, त्रण प्रसार्जना. ए बेला वे त्रणने त्रणवार अंतरित करता एक एकना नव नव ज्ञेद थाय. सर्व मली मुहपत्तिनी पञ्चीस पमिलेहणा थइ. ॥ २० ॥ द्वा. ११

हवे शरीरनी पञ्चीस पडिलेहणानुं १२ मुं द्वार कहे छे.

पायाहिणेण तिअ तिअ, वामेअर बाहुसीसमुह हियए ॥  
अंसुहाहो पिहे, चउ उप्पय देह पणवीसा ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—प्रदक्षिणाये करीने डावी अने जमणी बाहुये, मस्तके, मुखे अने हृदये. ए पांच ठेकाणे त्रण त्रणवार; वे खज्जानी उपर अने नीचे, तेमज वे पीठ उपर अने ठ वन्ने पग उपर एम सर्व मली शरीरनी पञ्चीश पमिलेहणा थाय. ॥ २१ ॥

आवस्सपु सु जहजह, कुणय पयत्तं अहीण मझरितं ॥  
तिविहकरणो व उत्तो, तहतह से निङ्गरा होइ ॥ २२ ॥

शब्दार्थ—आवश्यक पडिलेहणामां जेम जेम प्रयत्नयो उग्गे अधिक न थयो उत्तो मन, वचन अने कायाये उपयोग राखो करे

तेम तेम ते करनारने निर्जरा थाय वे ॥२६॥ द्वा २६

हवे चार गाथाथी वरीस दोष त्यजवानु १३ द्वार कहे छे  
दोस अणाहिअ यहिअ—पविष्ठ परिपिमिअंच ढोखगइ  
अकुस कहुन्न रिगिअ. मत्रुबत्तं मणपउठं ॥२३॥

शब्दार्थ—१ आदर रहित वा दे, २ मद सहित वा दे, ३ आधो  
पावो फरतो वा दे, ४ सर्वने जेगा वा दे, ५ कुदतो वा दे, ६ रजो  
हरणने वे हाथे जालीने वा दे ७ काचवानी पेरे रिगतो वा दे, ८  
एकने वादतो बीजाने वा दे, ९ मनमा खेद पामतो वा दे. ॥२३॥

वेद्यवद् नयतं, नय गारव मित्र कारणा तिन्न ॥

पमिणीयसुर तजिअ, सरहीलिअ विपलिय चिअत्तं ॥४४

शब्दार्थ—१० वे पगमा वे हाथ राखीने वाद, ११ काइ लालच  
थी वादे, १२ नयथी वादे, १३ गारवथी वादे, १४ मित्र जाणी वा  
दे, १५ वस्त्रादि मखवानी इडाना कारणथी वादे, १६ चोरनी पेरे  
वादे, १७ आहारादि करतो वादे, १८ क्रोधथी वादे, १९ तर्जना क  
रतो वादे, २० कपटथी वादे, २१ अपमान करतो वादे, २२ विक  
था करतो वादे. ॥ २४ ॥

दिव्यदिव्य सिगं, कर तमोअण अणिष्ठणालिद् ॥

कणं उत्तर चूलिअ, मूत्रं ढहर चूमलिअ च ॥४५॥

शब्दार्थ—१३ दिवु अणदिवु वा दे, १४ मस्तकने एक देशे वा  
दे, १५ राजवेठनो पेरे वा दे, १६ वाया विना बुटको नथी एम  
जाणी वा दे, १७ मस्तके हाथ लगाउतो न लगाउतो वा दे, २८  
अकरादि उठा कहेतो वा दे, २९ पावलना शब्दो उतावला वोले,  
३० मूगानी पेरे वा दे, ३१ उचास्वरे वा दे, ३२ रजोहरण जमा  
कतो वा दे ॥ २५ ॥

बत्तीस दोसपरिसुई, किइकम्मं जो पञ्जजइ गुरुण ॥  
सो पावइ निवाणं, अचिरेण विमानवासं वा ॥४६॥

शब्दार्थ—जे माणस ए उपर कहेला बत्तीस दोष रहित गुरुने वांदणा करे ठे ते थोसा कालमां मोक्षने अथवा तो देवपदने पामे ठे. ॥ ४६ ॥ दा. १३

हवे छ गुण उपजवानुं १४ मुं द्वार कहे छे.

इह उच्च गुणा विणउ—वयारमाणाइन्नंग गुरुपूत्रा ॥

तिड्यराण य आणा, सुअधम्माराहणा किरिया ॥४७॥

शब्दार्थ—ए वांदणामां उ गुणो उपजे ठे. तेमां १ विनयनो उपचार, २ मानादिकनो नाश, ३ गुरुपूजा, ४ तोर्हकरनी आङ्गा, ५ श्रुतधर्मनी आराधना अने ६ मोक्ष. ए उ गुण उपजे. २७

हवे गुरु थापनानुं १५ मुं द्वार कहे छे.

गुरुगुणजुत्तं तु गुरुं, ठविज्ञा अहव तड अरकाइ ॥

अहवा नाणाइतियं, ठविज्ञ सखं गुरुअन्नावे ॥४८॥

शब्दार्थ—म्होटा गुणे करीने युक्त एवा गुरुने स्थापन करवा. अथवा साक्षात् गुरुनो अन्नाव होय तो तेमने ठेकाए थापनाचार्य स्थापन करवा. कदापि स्थापनाचार्य पण न होय तो ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनां पुस्तकादि उपकरण स्थापवां. २७

अरेके वराम्पए वा, कठे पुढे अचित्कम्मे अ ॥

सप्नावमसप्नावं, गुरुठवणा इतरावकहा ॥४९॥

शब्दार्थ—अक्ष, (स्थापनाचार्य) कोडा, डांसा, पुस्तक अथवा गुरुमूर्तिनी स्थापना करवी. स्थापना वे प्रकारनी ठे. एक सप्नाव अने बीजी असप्नाव. गुरुस्थापना पण वे ज्ञेदेहे. तेमां एक इत्वर एटले पुस्तक आदि थोसा कालनी अने बीजी यावत्कथिका एटले मूर्ति विगेरे बहुकालनी, ॥ ४९ ॥

गुरुविरहंमि रवणा, गुरुवएसोव दंसणाढं च ॥

जिणविरहंमि जिण वि—व सेवणामंतणं सहखं ॥३०॥

**शब्दार्थ—**गुरुनो अज्ञाव होय त्यारे गुरुनो उपदेश देखाए  
वा माटे स्थापना रे जेम हवणा जिनेश्वरनो विरह रता जिनवि  
वनी सेवना करी आमत्रण करवु ते सफल रे ॥ ३० ॥

इवे वे प्रकारना अवग्रहनु १६ मुद्रार कहे छे  
चउदिसि गुरुगगहो इह, अहुञ्च तेरस करे सपरपरेक ॥  
अणणुन्नायस्स सया, न कप्पए तड़ पविसेज ॥३१॥

**शब्दार्थ—**आ जिनशासनमां गुरुथी 'अवग्रह चारे दिशामा  
पुरुप पुरुपने अने पुरुप स्त्रीने साडा त्रण हाथ अने तेर हाथ जा-  
णवो ते अवग्रहमा प्रवेश करवाने आङ्गाविना क्योरे पण न कछ्ये.

इवे अझर सरयानु १७ मुद्रार तथा पद सख्यानु १८ मुद्रार कहे छे  
पण तिग वारस डुगतिग, चउरो रघाण पय इगुणतोसं ॥  
गुणतोससेस आव—ससयाइ सबपय अम्बन्ना ॥३२॥

**शब्दार्थ—**( प्रथम वदनक सूत्रना अक्षर १७६ रे तेमा लघु  
अक्षर वसो एक अने गुरु अक्षर पञ्चीस रे ) पाच, त्रण, वार, वे,  
त्रण अने चार एम ठ स्थानकमा उगणत्रोस पद रे वाकोना उगण  
त्रोस पद आवस्तियाएथी जाणवा सर्व मली अघावन पद थायरे

इवे वादणा आपनारना छ स्थाननु १९ मुद्रार कहे ते

इहायअणुन्नवणा, अघावाहं च जत्त जवणाय ॥

अवराहखामणाविय, वंदणदायस्स रघाणा ॥३३॥

**शब्दार्थ—**इहामि आदिमा पाच, अणुजाएहादिमा त्रण,  
अव्यावाव पूरवा माटे निसीदियादिमा वार, जताज्जे एमा वे,

\* साधु साधुने साडा त्रण हाथ, साधु श्रावकने साडा त्रण हाथ, माधु  
साधीने तेर हाथ, साधु श्राविकाने पण तेर हाथ

जवणिजंचन्ने एमां त्रण, अपराध खमाववा माटे खामेमि एमां  
चार. ए वांदणा करनारना ठ स्थानक जाणवा. ॥ ३३ ॥

हवे छ गुरु वचननुं २०मुं द्वार कहे ले

**ठंदेणणुज्ञाणामि,** तहत्ति तुप्रंपि वट्टग् एवं ॥

**अहमवि खामेमि** तुमं, वयणाई वंदणरिहस्स ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ—ठंदेण, अणुज्ञाणामि, तहत्ति, तुप्रंपि वट्टग्, एवं, अहमवि खामेमि तुमं. ए ठ वचन वांदणा देवा योग्य गुरुनां जाणवां.

हवे तेवीम आशातनानुं २१मुं द्वार कहे छे.

**पुरउ पखासन्ने,** गंता चिट्ठण निसिअणाय मणे ॥

**आलोयण पमिसुणणे,** पुवालवणे अ आलोए ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ—१ गुरुनी आगल चाले, २ पडखे चाले, ३ पठवाडे अडकतो चाले, वली एवी त्रण आशातना गुरुनी, तेटली ज्ञूमि ज्ञा गे उज्ञा रहेवाथी थाय अने वेसवाथी पण थाय एम ए आशातना जाणवी, २० थंडिले प्रथम पाणी ले, २१ गमलागमण पहेलुं आलो वे, २२ वोलाव्या रता न वोले, २३ कोइने गुरुनी पहेला वोलावे, २४ गुरु रता वोजा पासे ज्ञिकादि आहार आलोवे. ॥ ३५ ॥ तह उवदंस निमित्तण, खचा ययणे तहा अपमिसुणणे खक्ति य तड्गए, किं तुम तज्जाय नो सुमणे ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ—१५ आहारादि वीजाने देखासे, १६ वीजा साधुने प्रथम वोलावीने परी गुरुने वोलावे, १७ गुरु विना वीजाने मि ए खवरावे, १८ पोते मिष्ट खाय, तेमज १९ गुरु वोलावे रता, न सांजले, २० गुरुने कठण वचन वोले, २१ पोताने संथारे वेठो उ चर आपे, २२ शुं कहो गो ? एम कहे, २३ तमे करो, एम कहे, २४ तिरस्कार करे, २५ गुरुनो धर्मोपदेश सांजली हर्षित मनवा लो न थाय. ॥ ३६ ॥

नो सरसि कहं न्निता, परिसन्निता अणुष्ठियाइ कहे॥  
संथार पाय घट्टण, चिदुच्च समासणे आवि ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ—२६ तमने नयो साज्जरतुं? एम कहे, २८ कथा नो हेड करे, २७ सज्जानो जग करे, २९ गुरुये कहेली वात फरी पोते कहे, ३० गुरुना सथारे पग लगाने, ३१ गुरुनी शाय्या सथारा के आसन उपर बेसे, ३२ गुरुथ्री उच्चा आसने बेसे, ३३ गुरुना स मान आसने बेसे ॥ ३५ ॥

हवे ने विधिनु २२ पु द्वार कहे उ

इरिया कुसुमिणुस्सग्गो, चिइवंदण पुत्ति वंदणा खोयं॥  
वंदण खामण वंदण, संवर चञ्च ड्रोन्न डु सज्जाऊ ॥३६॥

शब्दार्थ—१ इरियावहि, २ कुसुमिणु डुसुमिणानो काउस्सग्ग, ३ चैत्यवदन, ४ मुहपन्नि पम्लिहेहण, ५ वे वादणा, ६ राइय आलोवे, ७ वे वादणा, ८ खमासमण, ९ वादणा, १० पञ्चरकाण, ११ चार खमासमण अने वे सद्याय एम अनुकमे करे ते प्रज्ञात वदन विधि जाणवो ॥ ३६ ॥

इरिया चिइवंदणपु—ति वंदणं चरिमवदणाखोयं ॥  
वंदण खामण चञ्च ड्रो—न दिवसुस्सग्गो डुसप्त्राऊ ॥३७॥

शब्दार्थ—१ इरियावहि, २ चैत्यवदन, ३ मुहपन्नि पडिलेहण, ४ वे वादणा, ५ दिवस चरिम पञ्चरकाण, ६ वे वादणा, ७ देवसि आलोवे, ८ वे वादणा, ९ देवसि खमावे, १० चार खमासण दइ जगवानादि चारने वा दे, ११ देवसिय प्रायश्चित माटे वे लोगस्स नो काउस्सग अने १२ वे सज्जाय ए सध्यावदन विधि ३७

एय किइकम्मविहिं, जुंजंता चरण करण माउत्ता ॥  
साढू खवति कम्मं, अणेगज्जवसचियमण्ठंत ॥४०॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे वादणानी विधिने करता तेमज चरण

सित्तरी अने करण सित्तरी सहित एवा साधुउ अनेक नवमां मे  
खेलां अनंतां कर्मने खपावे छे. ॥ ४० ॥

अप्पमङ्गनवोहड्हं, ज्ञासियं विवरियं च जमिह मए ॥  
तं सोहंतु गीयत्रा, अणन्निनिवेसि अमञ्चरिणा ॥४१॥

शब्दार्थ—अष्टप्रमति एवा भव्य जोवोना बोधने अर्थे में अहिं  
जे कांइ विपरीतपणे कहेलुं होय तेने कदाय्रह रहित अने मत्सर  
रहित एवा गीतार्थ पुरुषोए सुधारीने लेबुं. ॥ ४२ ॥

॥ इति गुरुवंदन ज्ञाष्य. ॥

## ॥ अथ पञ्चख्खाण भाष्य. ॥

पञ्चख्खाणनां ९ द्वार कहे छे.

दस पञ्चख्खाण चन्द्रविहि, आहार दुवीसगार अदुरुत्ता॥  
दस विगई तीस विगई, गयड्हहन्नंग ठ सुचि फलं ॥१॥

शब्दार्थ—१ दश पञ्चख्खाण द्वार, २ चार विधि द्वार, ३ आ  
हार द्वार, ४ बीजोवार न कहेला वावोस आगार द्वार, ५ दश वि  
गयद्वार, ६ त्रीस निवीयाद्वार, ७ मूल गुण उत्तरनुं नेदद्वार, ८ उ  
नेद शुद्धिनुं द्वार, ९ पञ्चख्खाण फल द्वार. ॥ १ ॥

हवे उत्तरगुण पञ्चख्खाणना दश भेद कहे छे.

अणागय मझकंतं, कोमीसहियं नियंटि अणागारं ॥  
सागार निरवसेसं, परिमाणकमं सके अचा ॥ २ ॥

शब्दार्थ—१ कारणे आगतथी तप करवुं, २ पाठलथी करवुं,  
३ एकनी जोमे बीजुं करवुं, ४ धारी राखेला दिवसे करवुं, ५ आ  
गार रहित करवुं, ६ आगार सहित करवुं, ७ चार आहारादिकनुं  
करवुं, ८ वस्तु विगरेनुं परिमाण करवुं, ९ संकेते करवुं अने १०  
काल पञ्चख्खाण करवुं. ॥ २ ॥

( ૪૯ )

હવે તેણા કાલ પચ્ચખાણના ભેદ કહે છે.

નવકારસહિય પોરિસિ, પુરિમહેગાસણેગઘણે અ ॥

આયવિલ અપ્રત્તાંઠે, ચરિમેઅ અન્જિંગહે વિગઝ ॥ ૩ ॥

શબ્દાર્થ—૧ નોકારસીનુ, ૨ પોરસીનુ, ૩ પુરીમઢનુ, ૪ એકાસણાનું, ૫ એકલગણાનુ, ૬ આબીલનુ, ૭ ઉપવાસનુ, ૮ દિવસ ચરિમનુ, ૯ અન્જિંગ્રહનુ અને ૧૦ વિગઝનુ એ દશ કાલ પચ્ચખાણ હે

હવે પચ્ચખાણ કરવાની વિધિ ચાર ભેદે કહે છે

ઉગ્ગાએસૂરે નમો, પોરિસિ પચ્ચરક ઉગ્ગાએસૂરે ॥

સૂરે ઉગ્ગાએ પુરિમિં, અન્જન્તાં પચ્ચરકા ઇતિ ॥ ૪ ॥

શબ્દાર્થ—નવકારસીના પચ્ચરકાણમા “ઉગ્ગાએ સૂરે નમોકાર સહિય” એવો પાર, પોરસિના પચ્ચરકાણમા “ઉગ્ગાએ સૂરે પોરિસિય” એવો પાર, પુરિમહના પચ્ચરકાણમા “સૂરે ઉગ્ગાએ પુરિમહ” એવો પાર, ઉપવાસના પચ્ચરકાણમા “અન્જન્તાં પચ્ચરકાઇ” એવો પાર જણાવો. ॥ ૪ ॥

હવે બીજા ચાર વિધિ કહે છે

નણાઇ ગુરુ સીસો પુણ, પચ્ચરકામિતિ એવ વોસિરઝ ॥

ઊવળિંગિનૃ પમાણ, ન પમાણં વજણન્નલણા ॥ ૫ ॥

શબ્દાર્થ—પ્રથમ પચ્ચરકાણ કરાવનાર ગુરુ “પચ્ચરકાઇ” એમ કહે, વદી પચ્ચરકાણ કરનાર શિષ્ય “પચ્ચરકામિ” એમ કહે, પર્યો ગુરુ “વોસિરઝ” એમ કહે એટલે શિષ્ય “વોસિરામિ” એમ કહે, અંદ્રી ધારેલો ઉપયોગજ પ્રમાણ રે, પરતુ અકૃતાની સ્થાનના પ્રમાણ નથી ॥ ૫ ॥

તેજ વાત વિશેષ કહે છે

પઢમે રાણે તેરસ, બીએ તિન્નિંદુ તિગાઇ તઝઅમિ ॥

પાણસ્સ ચર્ચરમિ, દેસાવગાઇ પંચમએ ॥ ૬ ॥

**शब्दार्थ-**पहेला स्थानकमां नवकारादि तेर, बीजा स्थान कमां विगइ विगेरे त्रण, त्रोजा स्थानकमां एकासणादि त्रण, चोया स्थानकमां पाणस्स लेवेणवादि उ अने पांचमा स्थानकमां देशावकाशादि भ्रेद जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे पहेला, बीजा अने त्रोजा स्थानकना जूदा जूदा भ्रेद कहे छे.  
नमु पोरिसि सह्या, पुरिम वहू अंगुठमाइ अडतेर ॥  
निवि विगइ अंवियतिय तिय इगासण एगठाणाइ ७

**शब्दार्थ-**नमुकारसी, पोरसी, साईपोरसी, पुरिमहू, अवहू अने अंगुष्ठसी विगेरे बीजा आठ. ए सर्व मलो प्रथम स्थानकना तेर भ्रेद थाय, बीजा स्थानकना निवि, विगइ अने आंबील ए त्रण भ्रेद जाणवा. त्रोजा स्थानकना वेसणुं, एकासणुं अने एकलराणुं ए त्रण भ्रेद जाणवा. ॥ ७ ॥

हवे उपवासने दिवसे पांच स्थानक करवानुं कहे छे.

पढमंमि चउत्राई, तेरस बीयंमि तइय पाणस्स  
देसवगासं तुरिए, चरिमे जह संज्ञवं नेयं ॥ ८ ॥

**शब्दार्थ-**पहेले स्थानके चोय विगेरे, बीजे स्थानके नवकारसी विगेरे तेर, तीजा स्थानके पाणीना, चोये स्थानके देसावगासि अने पांचमे दिवस चरिमादि जेम घटे तेम जाणवुं. ८

तह मध्यपञ्चरकाणे—सु नपिहु सूरगगयाइ वोसिरइ ॥  
करण विहीउ न जन्मइ, जहावसीयाइ वियठंदे ॥ ९ ॥

**शब्दार्थ-**तेमज मध्य पञ्चरकाणमां “सूरे उगे विगइत” इत्यादि पाठ वारंवार न कहेवो तेमज ‘वोसिरे’ ए पाठ पण वारंवार न कहेवो, एटला माटे करवानी विधि आचार्योए कहो नथी. जेम ‘आवस्त्रियाए’ ए पाठ बीजा वांदणामां कहेता नथी तेम,

(४१)

तह तिविह पञ्चखाणे, नन्नति अ पाणग र आगारा ॥  
दुविहाहारे अचित्-ज्ञोपणे तहय फासुजले ॥ १० ॥

शब्दार्थ—तेमज तिविहारना पञ्चखाणमा पाणीना र आगार कहे वे वलो दुविहार पञ्चखाणमा अचित् ज्ञोजन अने प्रासुक पाणीना र आगार कहे वे ॥ १० ॥

इत्तुचिय खवणंविल, निवियाइसु फासुयं चिय जलंतु ॥  
सह्नावि पियति तहा, पञ्चखंति य तिहाहार ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—एटलाज माटे उपवास, आविल अने निविआदि कमा श्रावकोए पण साधुनी पेरे निश्चे प्रासुक पाणी पीछु अने तिविहारनुं पञ्चखण करखु ॥ ११ ॥

चउहाहार तु नमो, रत्तिपि मुण्णिण सेसतिहचउहा ॥  
निसिपोरिसि पुरिमे—गा सणाइ सढाण दुतिचउहा ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—नोकारसीनु अने रात्रीनु पञ्चखाण मुनिने चउवि हारुज होय तथा वाकीना पोरसी आदि तिविहारां तथा चउवि हारा होय वली श्रावकने रात्रीनु, पोरसीनु, पुरिमहनुं अने एका सणादिकनु पञ्चखाण दुविहार, तीविहार अने चउविहार होय

इवे चार प्रकारना आहारनु ३ जु द्वार कहे छे.

खुहपसमखमेगागी, आहारिव एइदेइ वा साय ॥  
खुहित्वि खिवइ कुछे, जं पंकुवमतमाहारो ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—नूखने समाववाने समर्थ एवो एकज आहार, आहारमा श्रावता एवा लवणादी अथवा स्वाद आपनारा हिंग वि गेरे, वली जे नूस्व्यो वतो पण पेटमा नाखे एवो कादवना सर खो ते आहार ॥ १३ ॥

इवे ए आहारना मूळ चार भेद कहे छे

असणे मुग्गोयणस—तु मंद पय रुक्ष रव्व कंदाइ ॥  
पाणे कंजिय जव कयर, ककोमोदग सुराइजलं ॥१४॥

**शब्दार्थ—**अशनमां मग, नात, सत्रु, मांडा, दुध, खाजुं, राव अने कंद विगेरे जाणवा. तेमज पानमां कांजी, जवनुं, केर नुं अने काकडीनुं धोवण तथा मदिरादि जल जाणवुं ॥१४॥

खाइमे नत्तोस फखाइ, साइमे सुठि जीर अजमाइ ॥  
महु गुम तंबोखाइ, आणाहारे मोय निंवाई ॥ १५ ॥

**शब्दार्थ—**खादिममां शेकेलां धान्य तथा फखादि जाणवां अने स्वादिममां सुंव, जीरुं, अजमो विगेरे, वलो मध, गोल अने नागरवेलना पानादि जाणवुं. तेमज अनाहारने विपे मानुं तथा लींवका प्रसुख जाणवुं ॥ १५ ॥

हवे नवकारसी विगेरेना आगारनी संख्यानुं ४ थुं द्वार कहे छे,  
दो नवकार ठ पोरिसि, सग पुरिमढ झगासणे अष ॥  
सत्तेगठाण अंविल, अष पण चउन्हि ठप्पाणे ॥१६॥

**शब्दार्थ—**नवकारसीमां वे, पोरसीमां ठ, पुरिमह्मां सात, एकासणामां आठ, एकलठाणामां सात, आंवीलमां आठ, चोथ नक्कमां पांच अने पाणास्तना पञ्चरुक्काणामां ठ आगार जाणवा.

चउ चरिमे चउन्हिगगहि, पण पावरणे नवष निवीए॥  
आगारुखितविवेग, मुतु दवविगङ्गनियमिष ॥ १७ ॥

**शब्दार्थ—**दिवस चरिममां चार, अन्नियह्मां चार, वस्त्र मू कवामां पांच, निवीमां पांच अथवा आठ आगार जाणवा. वली इव्य विगङ्गनुं नियम करनारने ‘उखितविवेग’ ए आगारने मू कीने वाकीना आठ आगार जाणवा. ॥ १७ ॥

हवे हङ्क पञ्चखाणना आगारनां नाम कहे छे.

अन्नसहदुनमुकारे, अन्न सह पर्व दिसय साहु सब ॥  
पोरिसि ठ सहपोरिसि, पुरिमहे सत्त समहत्तरा ॥१७॥

शब्दार्थ—नमुकारसीमा अन्नत्रणाज्ञोगेण, सहस्तागरेण ए  
वे, तथा पोरसीमा अन्नत्रणाज्ञोगेण, सहस्तागरेण, पञ्चनकालेण,  
दिसामोहेण, साहुवयणेण, अने सब्बसमाद्विज्ञियागरेण ए ठ  
आगार जाणवा साठ पोरसीमा पण एज ठ अने पुरिमहमा उपरना  
ठ सहित एक महन्नरागरेण ए वधारवो जेथी तेमा सात श्राय  
इवे एकासणाना तथा एकलठाणाना आगार कडे उ

अन्न सहसागरिय, आजंटण गुरुअ पारिमहसब ॥  
एगवियासणि अठउ, सग इगराणे आजटविणा ॥१८॥

शब्दार्थ—अन्नत्रणाज्ञोगेण, सहस्तागरेण, सागारि आगरे  
ण, आजटण पसरेण, गुरु अमृषाणेण, पारिघवणियागरेण, म  
हन्नरागरेण, सब्बसमाद्विज्ञियागरेण ए आठ आगार एकास  
णामा अने वियासणामा जाणवा. अने तेमाथी एक आजटण  
विना सात आगार एकलठाणामा जाणवा ॥१९॥

इवे विगण, नारी भने आरीन्ना आगार कडे उ

अन्नसहलेवागिह, उस्कित पडुच्च पारिमहसबे ॥  
विगइ निविगण नव, पडुच्च विणु अविले अठ ॥२०॥

शब्दार्थ—अन्नत्र, सहस्ता, लेवालेवेण, गीद्धु समेष्टा, उ  
स्किन विपिगेण, पडुच्चमस्किणेण, पारिघ, महन्नरा, सब्बसमाहि  
ए नव विगइ तथा निविगइने विषे जाणवा अने तेमाथी एक प  
डुच्चमस्किण विना आठ आरीन्ना आगार जाणवा ॥२०॥

उ आगार भागार स्त्रे उ

अन्न सह पानि मह सब, पंच खवणे ठ पाणिलेवार्ड ॥  
घउ चरिम गुघाइ, जग्गहि अन्न सहमह सबे ॥२१॥

शब्दार्थ—अन्नदण्डा, सहस्रा, पारिषावणिया, महत्तरा, सब्ब  
समाहि. ए पांच आगार उपवासमां; तेमज लेवेणवा विगेरे ठ  
आगार पाणस्सना जाणवा. वली अन्नदण्डा, सहस्रा, महत्तरा,  
सब्बसमाहि. ए चार आगार दिवस चरिमना पञ्चकाणमां अने  
अंगुष्ठ सहियादि अन्नियहना पञ्चकाणमां जाणवा. ॥२१॥

इदू भु भज्ज तिळं, चञ्चरो दविगङ्ग चञ्चर पिंडदवा ॥  
घय गुल दहियं पिसियं, भरकण पक्कन दो पिंडा ॥४३॥

शब्दार्थ—इध, मध, मद्य अने तेल ए चार इव (ढीली) वि  
गश्चे. वली धी, गोल, दहिं अने मांसपेसी ए चार पिंड तथा  
इव विगश्चे. वलो मांखण अने पकान्न ए वे तो पिंडज विगश्चे.  
हवे सरखा पञ्चखाण गणावे छे.

पोरिसि सदंमवढं, दुन्नत निविगङ्ग पोरिसाङ्ग समा ॥  
अंगुष्ठ मुष्ठि गंठी, सचित दव्वाङ्ग निग्गहियं ॥४३॥

शब्दार्थ—पोरसी अने साढ पोरसी, अवढ अने पुरिमढ, ए  
कासणुं अने बोयासणुं तथा आगार. विगश अने नोवि तथा आ  
गार, तेमज अंगुष्ठसहियं, मुष्ठिसहियं, गंठिसहियं अने सचित्त द्र  
व्यादिक ए सर्व अन्नियह पञ्चकाण मांहो माहे सरखांचे. ४३

हवे ए सर्व आगारोना अर्थ कहे छे.

विस्सरण मणान्नोगो, सहस्रागारो सयं मुहपवेसो ॥  
पञ्चनकाल मेहाङ्ग, दिसिविवज्ञासु दिसिमोहो ॥४४॥

शब्दार्थ—आगारनो अर्थ विसरवाशी कांङ्ग मुखमां घाले  
ते अनान्नोग, सहस्रात्कारे पोतानी मेले मुखमां पेसी जाय ते  
सहस्रागार, पञ्चनकाल ते मेघ विगेरेयी दिवसनी खबर न पमवाथो  
जमे ते, तेमज दिशाना विपर्यास पणाशी दिशामोह ए आगा  
रोमां पण पञ्चकाण न जागे. ॥ ४४ ॥

साहुवयण उग्धामा, पोरिसि तणु सुडया समाहिति ॥  
संघाइकज्ञ महत्तर, गिहच वदाइ सागारी ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ—उग्धाम पोरसी एवं साधुनु वचन साजलीने पञ्च  
खाण पारीने जमे, तेमज शरीरनी स्वस्थतानी असमाधिने  
लोधे तेम करे, वली सधादिकना कार्य निमित्त म्होटानी आङ्गा  
थी पञ्चखाण पारे, तेमज गृहस्थ वादवा आववाशी पारे ते सर्व  
सागारी आगार जाणवा ॥ ४५ ॥

आउटणमंगाणं, गुरुपाहुणसाहुगुरुअपुष्टाणं ॥  
परिठावण विहिगहि ए, जइण पावरण कमिपटो ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—हाथ पग विगेरे अगनुं सकोच्चवु तथा पसारवु,  
गुरु तथा प्राहुणा साधु आवे उज्जा थवु, पररववा योग्य विधिथी  
लोधेला अने वधेला आहारने खावो पदे वली साधुने प्रावरणना  
पञ्चखणमा चोखपट लेवा उरवु पदे तोपण पञ्चखाण न जागे  
खरमिय लूहिये मोवा—इ लेव संसद डुच्चममाइ ॥

उस्कित पिडविगइ—एं मस्कियं अंगुलीहिं मणा ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—न लेवा योग्य वस्तुयी खरमायेली करठी प्रमुख  
ने लूहीने ते वडे आपे तेथी, तेमज गृहस्थना हाथयी विगयवर्ने  
स्पर्शित थयेला शाक माझादि आपे तेथी, उपर रहेला पिनविग  
यने लइने आपे तेथी, तेमज लगार धोनी आगलीथी चोपमेला  
माझादि आपे तेथी पण पञ्चखाण न जागे ॥ ४७ ॥

हवे पाणीना छ आगार कहे छे

लेवाम आयमाइ, इअर सोवीरमन्त्र मुसिणजलं ॥

धोयण वहुख ससित्र, उस्से इम इअर सित्रविणा ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—१ लेपकृत ते उसामण आदिनु पाणी, २ अलेपकृ  
त ते धोयण विगेरेनु पाणी, ३ निर्मल ते उन्नु पाणी, ४ वहुलेप ते

चोखा विगेरेना धोवणानुं पाणी, ५ सीथ सहित ते आटाथी खर  
मायदा हाथनुं दाणा सहित पाणी अने ६ तेथी वीजुं ते तेनेज  
गली लीधेलुं पाणी, ए ठ आगार पाणीना जाणावा. ॥७४॥

हवे दश विगइनां स्वरूपनुं ९ मुं द्वार कहे छे.

पण चउ चउ चउ छु छुविह, ठ नस्क छुश्राइ-विगइ इगवीसं  
तिडुति चउविह अन्नखा, चउ महुमाई विगई वार ॥

शब्दार्थ—छुधनां पांच, दहिना चार, धीना चार, तेलना चार,  
गोलना वे, पकानना वे. एम ए छुध विगेरे नस्य(खावा योग्य)वि  
गइना सर्व मली एकवीस नेद थाये. तेमज मधना त्रण, मदि  
राना वे, मांसना त्रण, मांखणना चार. एम ए चार अन्नस्य वि  
गइना सर्व मली वार नेदे. ॥७५॥

हवे प्रथमनी छ विगइना २७ भेद कहे छे.

खीर घय दहि अ तिळ्यं, गुम पकन्नं ठ नस्क विगइतु ॥  
गो महिसी उंटि अय ए-खगाण पण उष्ट अह चउरोऽप

शब्दार्थ—छुध, धी, दहिं, तेल, गोल अने पकान्न. ए ठ न  
स्य विगइ रे. तेमां गायनुं, न्नेसनुं, उंटडानुं, वकरोनुं अने घेटीनुं  
ए पांच जातनुं छुध विगइ रे. हवे चार जातनुं धी विगेरे कहे रे.  
घयदहिअआउद्धिविणा, तिळसरिसवअयसिलइतिळ्यचउ  
दवगुम पिंम गुमादो, पकन्नं तिळ्य घय तलियं ॥३१॥

शब्दार्थ—धी अने दहिं उंटसी विना वाकीना चारनुं विगइ  
मां जाणावुं. तखनुं, सरसवनुं, अलसीनुं अने लाटनुं ए चार जात  
नुं तेल विगइ रे. ढीलो अने करीण ए वे जातनो गोल, अने प  
कान्न ते उपर कहेला चार जातनां तेलमां तखेलुं अथवा चार जा  
तनां धीमां तखेलुं ए सर्व विगइमां जाणावुं. ॥३१॥

\* ए धान्य खसखस जेवुं याय छे.

( ४६ )

इवे दृधना पाच निवीयाता कहे छे

पयसामि खीर पेया, बलोहि डुक्हटि डुक्ह विगङ्गया ॥  
दख वहु अप्प तंडुल, तच्चुन्न विलसहित्र डुक्हे ॥३७॥

शब्दार्थ—जाख नाखीने राधेलु डुध पयसामि, वहु चोखा नाखीने राधेलु डुध खोर, थोका चोखा नाखीने राधेलु पेया, आटो नाखीने राधेलु अवलेहि अने खटास नाखीने राधेलु डुध डुक्हटि. ए पाच डुधना निवीयाता जाणवा ॥३७॥

इवे धी विगङ्ग तथा दहि विगङ्गना पांच पाच निवीयाता कहे छे  
निप्पंजणवीसंदण, पक्कोसहितरिय किटि पक्कघय ॥

दहिए करंव सिहरिणि, सलवणदहि घोख घोखवडा ३८

शब्दार्थ—दाँडेलु, डुधनी तरीमा आटो नाखीने बनावेलु, औपयि नाखीने पकावेलु, कीटु, अने आवलादि नाखीने पकावेलु ते पाच जातनु धी तेमज ज्ञात सहित दहि, सीखम, लवण नाखेलु गछ्या विनानु दहि, गलेलु दहि अने घोखवडा ए पाच जातनु दहि निवोयातामा जाणवु ॥३८॥

इवे तेल तथा गोलना पाच पान निवीयाता कहे छे  
तिलकुटि निप्पंजण, पक्कतिल पक्कुसहितरिय तिल्लमखी ॥  
सक्कर गुलवायण पाय, खम अधकदिय इखुरसो ३९

शब्दार्थ—गोल सहित खामेला तेल, दाजेलु तेल, दाख वि गेरेयी पकावेलु तेल, औपयि पकाव्या पठो तेल उपर अयेली तरी अने तेलनी मखी, ए पाच तेलना तेमज साकर, गोलवाणी, गुलपाय, खाम अने अर्द्धो उकालेलो शेरमीनो रस ए पाच निवीयातामा जाणवा ॥३९॥

इवे कडा विगङ्गना पाच निवीयाता कहे छे

१ गळपाणु २ गोलपाक—गोलनी चासणी

पूर्खितवपूच्छा वीय, पूच्छ तन्नेह तुरिय घाणाई ॥  
गुलबहाणी जखलपपसि, य पंचमो पूत्तिकयपूज ३५

शब्दार्थ—एक तावडी पूराय एवमा पूरुषा उपर वीजो त लवो ते, त्रण घाण तछ्या पठी चोओ घाण तन्नवो ते, गोल घाणी, जखलापसी अने पोतुं दझने करेलो पुरुषो. ए पांच नि वीयाता जासावा. ॥ ३५ ॥

दुधदही चञ्जरंगुल, दवगुम् धयतिल्ल एगज्जतुवरिं ॥  
पिंमगुल मरुकणाणं, अद्वामखयं य संसठं ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ—दुध अने दहि ज्ञात उपर चार आंगुल होय तथा ढीलो गोल, धी अने तेल ए त्रण ज्ञात उपर एक आंगुल होय तेमज करिण गोलओ मसलेला चूरमादिकमां पीलुना म्होर स रखा गोलना ककडा होय तो ते संसृष्ट कहेवाय. ते निवोया तामां कछ्येठे. ॥ ३६ ॥

हवे कांइक विशेष कहे छे.

दवहयविगई विगइ—गयं पुणो तेण ते हयं दवं ॥  
उघरिए तत्तंमिय, उक्किष दवं इमं चन्ने ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—जालना चोखा विगरेथी निर्विर्य करेली किरादि क विगइ तथा वर्णिकादिके करीने हणी एवी जे घृतादि विगइ ते विकृती गत कहेवाय. वली ज्ञात विगरेथी हणयुं एवुं जे विकृतिगत ते हतज्ज्य कहेवाय. तथा तावमामांथी सुखडी काढो लोधा पठी वधेलुं टाढुं अयेलुं जे धी तेमां नाखेला लोटने इला वीने करीये ते उत्कष्ट इज्य कहेवाय एम केटलाक आचार्य कहेठे.

हवे केटलाक उत्तम द्रव्य गणावे छे.

तिल संकुलि वरसोखाई, रायणंवाइ दरकवाणाई ॥  
मोखिय तिल्लाईया, सरसुतम दव लेवकमा ॥ ३८ ॥

( ४५ )

शब्दार्थ-तदसांकली, वरसोला विगेर, रायण, केरी, ज्ञाखवाणि विगेरे, मोलोया विगेरेना तेल ए सर्वने सरस उत्तम इव्य कहेवाय अथवा लेपकृत इव्य पण कहेवाय ॥३८॥

ते सर्वे कारणे कल्पे ते कहे छे

**विगङ्गयासंसदा, उत्तम द्वाइ निविगङ्गयंमि ॥**

**कारणजाय मुंतु, कप्पंति न ज्ञुतुं जं बुत्तं ॥ ३९ ॥**

शब्दार्थ-विगङ्गयो उत्पन्न थयेला, संसृष्ट अने उत्तम इव्या दिक नीवीना पञ्चरक्षणमा कारणने मूकीने खावुं न कछ्ये अर्था त् कारणे खवाय कारण कह्यु रे के -॥३९॥

**विगङ्ग विगङ्ग ज्ञीउ, विगङ्गयं जो अ ज्ञुजए साहू ॥**

**विगङ्ग विगङ्ग सहावा, विगङ्ग विगङ्ग बलानेइ ॥४०॥**

शब्दार्थ-विगङ्गने अने विगङ्गमा रहेला कीरादिरुने नरकादि विरुद्ध गतिथो ज्ञय पामतो जे साधु जङ्घण करे रे, तो विकार पमाडवाना स्वज्ञाववाली विगङ्ग ते साधुने मावो गति प्रत्ये पदोचारे रे ॥ ४० ॥

हवे चार अन्नद्य विगङ्गना उत्तरभेद कहे छे

**कुत्तिय महिय जामर, महुतिहा करु पिठ मध्यइहा ॥**

**जख थल खगमस तिहा, घव्य मरकण चउ अन्नखा ॥४१॥**

शब्दार्थ-कुतीयु, मांखीनु अने जमरीनु एम त्रण जातनु मध, काष्ठथी अने पिष्ठथी बनावेली मदिरा, बलो जलचर, थलचर अने खेचर जीवोनु एम त्रण जातनु मास अने धीनी पेरे चार जातनु माखण ए सर्व अन्नद्य रे ॥४१॥

हवे पचखाणना ४९ भागा कहे छे

**मयवयणकायमणवय, मणतणुवयतणुतिजोगिसत्तसत्त ॥**

**करकारणुमइ डुतिजुय, तिकालि सीयाल जंगसयं ४९**

**शब्दार्थ—**मन, वचन अने काया, वली मनवचन, मनका  
या अने वचनकाया; तेमज मन, वचन अने काया एत्रण योग,  
ए सात ज्ञांगाने करवा, कराववा अने अनुमोदवा. एवा ज्ञेदथी  
एकवीस ज्ञेद थाय. वली तेने द्रीक त्रीक योग सदित करी नू  
त, ज्ञविष्य अने वर्तमान काले करी गुणता एकसो समतावीस  
ज्ञांगां थाय. ॥ ४२ ॥

इवे ए पञ्चख्वाणनुं स्वस्थप कहेहे.

एयं च उत्तकाखे, सयं च मणि वयणि ताणुहिं पाखणियं॥  
जाणुगजाणुग पासि, तिज्ञंग चउगे तिसु अणुणा ४३.

**शब्दार्थ—**वली ए पञ्चख्काण कहेला काले लेनार धर्णीये पो  
ते मन, वचन अने कायाए करीने पालवा. वली ते पञ्चख्काण क  
रनार जाण अथवा अजाण तेमज करावनार जाण अथवा अ  
जाण एम चार ज्ञांगा थायहे. तेमां प्रथम त्रणने आङ्गा हे.

इवे पञ्चख्वाणनी छ विशुद्धिनुं ८ पुं द्वार कहे हे.

फासियपालियसोहिय, तिरियकिट्टियआराहियठमुदं॥  
पञ्चख्काणं फासिय, विहिणोचिय कालि जंपत्तं ॥४४॥

**शब्दार्थ—**फरस्युं, पाल्युं, सोध्युं, तर्युं, कीत्युं अने आरा  
ध्युं, ए ठ प्रकारे शुद्ध एवुं पञ्चख्काण फल आपनारुं थायहे. ते  
मां प्रथम विधि प्रमाणे योग्य काले जे पञ्चख्काण लीधुं ते  
फरस्युं कहेवाय. ॥ ४४ ॥

पालिय पुणपुणसरियं, सोहिय गुरुदत्त सेस ज्ञोयणाऽ॥  
तिरिय समहिय काखो, किट्टिय ज्ञोयण समय सरणेधृ

**शब्दार्थ—**करेला पञ्चख्काणने वारंवार संज्ञाखुं ते पाल्युं  
कहेवाय, गुरुने आप्या पडी वाकीनुं पोते जमवुं ते शोध्युं कहे  
वाय. धारेला कालथी कांझक अधिक काल गया पडी पञ्चख्का

ए पूर्ण करे ते तयुं कहेवाय अने ज्ञोजनना अवसरे करेला ८  
च्चरक एने सज्जारवु ते कीत्युं कहेवाय ॥४५॥

इथ्रा पमिचरिथ्रां आरा-हियं तु अहवा ठ सुद्धि सद्दहणा ॥  
जाणण विणयणु ज्ञावण-अनुपालण ज्ञाव सुधति ४६

शब्दार्थ—उपर कहेला सर्व प्रकारे आचरयुं तेने आराध्युं  
कहेवाय अथवा पच्चरकाणनो विशुद्धिरेते लीधा प्रमाणे कर-  
वु, जाणनी पासे करवु, गुरुनो विनय करवो, गुरु वोले तेम म-  
नमा वोलवु, कट पसे तो पण ज्ञागवु नहि, शंकादिदोप रहित  
रहेवु, ए ठ विशुद्धि जाणवी ॥४६॥

इवे पच्चरखाणनु वे प्रकारे फल यायठे ते कहे छे

पच्चरकाणस्स फल, इह परखोए य होइ डुविहं तु ॥  
इहखोए धम्मिल्लाइ, दामन्नगमाइ परखोए ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—पच्चरकाणनु फल आ लोकमा धम्मिल्लकुमारा  
दिना अने परखोकमा दामन्नकादिकना दृष्टातथी जाणावु ४७  
हे समाप्ति करता कहे छे.

पच्चरकाणमिण से—विज्ञाण ज्ञावेण जिणवरुद्दिठं ॥

पत्ता अणंत जीवा, सासयसुख अणावाहं ॥४८॥

शब्दार्थ—श्रो जिनेश्वरे उपदेशेला आ पच्चरकाणने ज्ञावथी  
सेवीने अनता जीवो निरावाघ एवा साश्वता सुखने पाम्या ते  
॥ इति पच्चरकाण ज्ञाष्य समाप्त ॥

\* श्री इंद्रिय पराजय शतक.  
(आर्यावृत्तम्)

सुच्चिय सूरो सो चे-व पंक्तित तं पसंसिमो निञ्चं ॥  
इंद्रियचोरोहि॑ं सया, न लुष्टियं जस्स चरणाधाणं ॥१॥

शब्दार्थ—तेज सूरवीर अने तेज पंक्ति. वक्षी तेनीज अमे निरंतर प्रशंसा करीये वीये के, जेनुं चारित्ररूप धन निरंतर इ इयरूप चोरोए लुटो लीधुं नथी. ॥१॥

इंद्रिय चवलतुरंगे, डुगद्ध मग्गाणु धाविरे निञ्चं ॥

नाविक्ष्य नवस्सर्वो, रुञ्जद्ध जिणवयण रस्सीहि॑ं ॥२॥

शब्दार्थ—इंद्रियरूप चपल वोकाउ निरंतर डुर्गतिरूप मार्ग मां दोडो रह्या रहे, तेमने संसार स्वरूपनी नावना करनारो पुरुष श्री जिनराजनां वचनरूप रास्तथी रोकेरे. ॥२॥

इंद्रियधुत्ताणमहो, तिखतुसमित्तंपि देसु मा पसरं ॥

जद्ध दिन्नो तो नीउ, जड्ह खण्ठो वरिसकोमिसमं ॥३॥

शब्दार्थ—हे प्राणिन् ! तुं इंद्रियरूप चोरोने तखनां फोत्तरा मात्र पण प्रसरवा दशा नहि. कारण जो परसवा दिधा तो ज्यां एक क्षण क्रोडो वर्ष समान थाय तेवां डुःखो पामीशा. ॥३॥

अजिङ्दिएहि॑ं चरणं, कठंव घुणेहि॑ किरद्ध असारं ॥  
तो धम्मत्रिहि॑ दहं, जद्धयवं इंद्रियजयंमि ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—इंद्रियने न जीतनारा प्राणीनुं चारित्र घुणे (ला कमाना जोवोए) करकेलां लाकमानी पेरे सार रहित रहे, माटे धर्मना अर्थिये इंद्रियोने जीतवामां ढढ उद्यम करवो. ॥४॥

जह कागिणोइ हेउं, कोमी रयणाण हारए कोई ॥  
तह तुच्छ विसय गिद्धा, जीवा हारंति सिद्धिसुहं ॥५॥

( ए३ )

शब्दार्थ—जेम कोइ मूर्ख एक कोडीने माटे क्रोडा रत्नने हारे तेम तुझ एवा विपयमा आसक्त थयेला जीवो मोहक सुख ने हारी जाय छे ॥५॥

तिलमित्तं विसयसुहं, डुहं च गिरिरायसिगतुंगयर ॥

नवकोमिहि न निष्ठइ, जं जाणसु तं करिज्ञासु ॥६॥

शब्दार्थ—तद मात्र विपय सुख डुखरूप मेरुपवर्तना उचा शिखर जेबुं छे वली ते डुख क्रोडो नव सुधी खुटे तेम नथी, माटे हे जीव। जेम जाण तेम कर ॥६॥

( शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् )

चुंजंता महुरा विवागविरसा किपागतुळ्णा इमे,  
कहुकहुअणाव डुखजणाया दाविति बुद्धि सुहे ॥

मशन्हे मयतिन्हियब्ब सूयय मिन्नाज्ञिसधिप्पया,  
चुत्ता दिति कुजम्म जोणिगहणं ज्ञोगा महा वैरिणो ॥

शब्दार्थ—किपाक फलनी पेरे ज्ञोगवता मधुर, पण परिणामे प्राणनो नाश करनारा, खसना कोळ्णाने खणवानी पेरे डुख आपनारा, मध्यान्ह वखते मृग तृप्णानी पेरे निर्गंतर खोटा अज्ञिप्राय आपनारा अने महा वैरो सरखा ज्ञोगो ज्ञोगवनाराने कुजन्मरूप गद्दन जोनी आपे रे ॥७॥

( अनुष्टुप्वृत्तम् )

सका अग्नि निवारेज वारिणो जखित्तवि हु ॥

सघोदहिजखेणावि, कामग्नि डुन्निवारजं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—ऊल हलता अग्निने पाणीवडे निवारी शकाय, पण सर्व समुज्जेना पाणोथो कामरूप अग्नि निवारी शकातो नथी

( आर्यवृत्तम् )

विसमिव मुहंमि महुरा, परिणाम निकाम दारुणा विसया॥

**शब्दार्थ—ज्ञोगी पुरुषो ज्ञोगमां लपटाये रे अने अज्ञोगी पुरुषो लपटाता नयी; एटलाज माटे ज्ञोगी संसारमां ज्ञमे रे अने अज्ञोगी संसारयी मूकाये रे.** ॥१७॥

इवे एज वातने दृष्टिं पूर्वक दृढ कहे छे.

**अल्पो सुक्ष्मो य दो छूढा, गोखया मद्वियामया ॥  
दोवि आवमिअा कूमै, जो अल्पो तड्ड लगगई॥१८॥  
एवं लगगंति उम्मेहा, जे नरा कामखालसा ॥  
विरत्ताऊ न लगगंति, जहा सुके य गोखण्॥१९॥**

**शब्दार्थ—लीलो अने सूक्ष्मो एवा वे माटीना गोखा ज्ञांते तरफ फेंकया, ते वे गोखा ज्ञांते पटकाणा; परंतु तेमांथो जे लो लो गोखो हतो, ते ज्ञांते चोटी रह्यो अने सूक्ष्मो गोखो न चोटी रह्यो. ए प्रकारे कामज्ञोगमां लंपटी अने उर्वादि पुरुषो संसार रूप ज्ञांतमां चोटी रहे रे अने जे कामज्ञोगथो विराम पास्या रे, ते सूक्ष्मा गोखानो पेरे ( संसाररूप ज्ञांतमां ) चोटी रहेता नयी.**

( आर्यावृत्तम् )

**तणक्षेहिव अग्गी, लवणसमुद्दो नईसहस्रसेहिं ॥  
न इमो जीवो सक्षो, तिप्पेन्जं कामज्ञोगेहिं ॥२१॥**

**शब्दार्थ—जेम धास तथा काष्ठथो अग्नि अने हजारो नदी योथी लवणसमुद्द तृप्त थतो नयी तेम आ जीव पण कामज्ञोगथो तृप्त थवाने शक्तिवान थतो नयी.** ॥२१॥

**नुत्तूणवि ज्ञोगसुहं, सुरनरखयरेसु पुण पश्चाएणं ॥  
पिङ्कइ नरएसु ज्ञेरव, कलकलतञ्ज तंवपाणाइं ॥२२॥**

**शब्दार्थ—आ जीव, देव मनुष्य अने विद्याधरनी गतिमां प्रमादना वशथीं ज्ञोगसुख ज्ञोगवीने नरकमां जयंकर कलकलता अग्निये तपावेदा त्रांवाना रसने पीये रे.** ॥२२॥

( षष्ठी )

को दोन्नेण न निहत्, कस्स न रमणी हि ज्ञोखिअ हियर्यं  
को मनुणा न गहित्, को गिद्धो नेव विसएहिं ॥४३॥

शब्दार्थ—आ ससारमा कोण दोन्नथी नथी हणाणो ? को  
ना हृदयने स्त्रीये नथी ज्ञोखव्यु ? कोने मृत्युए नथी पकड्यो ? अ  
ने कोण विपयमा गृह नथी थयो ? ॥४३॥

( काव्यम् )

खण्मित्त सुखका वहुकाल उखका, पगाम उखका अ—  
निकाम सुखका ॥ संसार मोखस्स विपखनूच्छा,  
खाणी अणत्राणउ कामज्ञोगा ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! दणमात्र सुखने आपनारा, वह काल  
झु खने आपनारा, अत्यंत झु खने आपनारा, तुम्ह सुखने आपना  
रा, संसारथी मुक्त थवामा शत्रुज्ञूत, अर्थात् ससारने वधारना  
रा अने अनर्थनी खाण एवा आ कामज्ञोगो रे ॥२४॥

( आर्यावृत्तम् )

सवगहाणं पञ्चवो, महागहो सवदोस पायहि ॥

कामगगहो दुरप्पा, जेणन्निनूच्रं जगं सवं ॥४५॥

शब्दार्थ—सर्व ग्रह ( उन्माद ) नु उत्पन्नि स्थान, म्होटो ग्रह,  
सर्व प्रकारना दोष प्रवर्त्तिनारो अने डुरात्मा एवो कामदेवरूप  
ग्रह रे के, जेणे आ सर्व जगत्त्वे वश्य करी लीघु रे ॥४५॥

जह कहुद्धो कहु, कहुअमाणो दुहं मुणइ सुख ॥

मोहात्ररा मणुस्सा, तह कामउह सुह विति ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—जेम खसवालो माणस खसने खणतो उतो तेथी  
थता झ खने सुख माने रे तेम मोहवी आतुर थयेला माणसो  
कामदेवना झ खने सुख माने रे, ॥४६॥

( ४६ )  
 ( अनुष्टुप्‌वृत्तम् । )

सद्गुं कामा विसं कामा, कामा आर्सीविसोवमा ॥  
 कामे य पडेमाणा, अकामा जंति दुग्गद्धं ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—कामज्ञोग इत्य वे, कामज्ञोग विष वे अने काम  
 ज्ञोग आशोविष ऊर ( सर्पनी दाढ़मां स्हेला ऊर ) जेवा वे, ते  
 कामज्ञोग ज्ञोगव्या नथी; परंतु तेनी प्रार्थना करवायी एटले तेनी  
 इत्ता राखवायी पण जीवो दुर्गतिमां जाय वे. ॥४७॥

( आर्यावृत्तम् । )

विसए अवश्वकंता, पमंति संसारसायरे घोरे ॥

विसएसु निराविखा, तरंति संसारकंतारे ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—विषयनी अपेक्षा ( वांछना ) करनारा जीवो वी  
 हामणा संसार समुद्धमां पडे वे अने विषयथी निरपेक्ष ( अवंठक )  
 अयेला जीवो संसार रूप अटवीने तरे वे. ॥४८॥

ठिलिया अवश्वकंता, निरावश्वका गया अविश्वेण ॥

तद्या पवयण सारे, निरावश्वकेण होअवं ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ—विषयनी अपेक्षा—वांछना करनारा जीवो ठिलाणा  
 एटले संसारमां स्त्या अने विषयथी निरपेक्ष—अवंठक अयेला जी  
 वो, अविश्वपणे मोक्षमां गया. ते कारण माटे प्रवचन एटले सि  
 द्धांतनो एज सार वेके, विषयथी निरपेक्ष थवुं. ॥४९॥

विसयाविखको निवम्भ, निरविखको तरइद्धुत्तर नवोधं ॥  
 देवीदीवसमागय, ज्ञानउञ्जुञ्जुलेण दिठंतो ॥ ५० ॥

शब्दार्थ—रक्षादेवीना रक्षादीपमां गयेला ( जिनरक्षित अने  
 जिनपालित ए ) वे ज्ञाइल्लना दृष्टांते विषयनी अपेक्षा करनारा  
 जीवो ( जिनरक्षितनी पेवे ) संसार समुद्धमां पडे वे अने विषय

थो निरपेक्ष थयेता जोवो (जिनपादितनी पेठे) दुस्तर एवा न  
वना नघने—सत्सार समुझने तरे थे, ॥३३॥

जं अश्वितिस्कं दुख, जं च सुहं उत्तमं तिखोञ्चमि ॥  
तं जाणसु विसयाणं, वुहि खय हेत्यन्नं सद्ब ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! त्रण लोकमा जे अति तिद्धण डु खअने जे उ  
त्तम सुख रे ते सर्व विषयोनी वृद्धिअने क्यनु हेतु रे, एम तु जाण

इंदियविसयपसन्ना, पर्मति संसारसायरे जीवा ॥

पर्खिव विन्नपंखा, सुसीखगुण पेहणविहृणा ३४

शब्दार्थ—पंचेऽधियना विषयमा आसन्न थएता जोवो, उत्त  
म आचार अने शीखगुण रूप पाखो विना, वेदाएी रे पाखो जे  
नी एवा पक्षीनी पेरे संसार समुझमा पक्षे रे ॥३७॥

न छहइ जहा लिहंतो, मुहस्त्रियं अठिअं जहा सुणउ  
सोसइ तालुअ रसिअं, विलिहंतो मन्नए सुख ॥३३॥  
महिलाण कायसेवी, न छहइ किचिवि सुहं तहा पुरिसो॥  
सो मन्नए वराउ, सयकायपरिस्समं सुखं ॥३४॥ युग्मम्

शब्दार्थ—जेम कूतरो म्होटा हाडकाने चाटतो रतो एम  
नथी जाणतो के, हु म्हारा पोतानाज तालुआनी रसीने सोसबु  
दु ! तेथीज ते हाडकाने विशेषे चाटतो रतो जेम सुख माने रे  
तेम स्थीनो कायानो सेवनार, एट्ले विषय सेवनारो पुरुष तेथी  
जरा पण सुख नश्चो पामतो, तथापि ते राक पुरुष पोतानो का  
याना परिश्रमने सुख माने रे ॥ ॥ ॥ ३३॥३४॥

सुद्धुवि मग्गिङ्गंतो, कर्ववि कयलीइ नत्ति जह सारो ॥  
इंदियविसएसु तहा, नत्ति सुहं सुद्धुवि गविवं ॥३५॥

शब्दार्थ—सारी रीते तपासता जेम केलमा काइ पण सार

( १०० )

नथी, तेम इंद्रियोना विपर्यमां पण सारी रीते तपासतां सुख नथी.

सिंगारतरंगाए, विलासवेलाइ जुबएजलाए ॥

के के जयंमि पुरिसा, नारीनइए न बुझंति ॥३६॥

शब्दार्थ—जेमां शृंगार रूप कल्पोलो रे, विलास रूप वेलो रे अने जोवन रूप जख रे एवी स्त्री रूप नदीमां नथी वृद्धा एवा जगत्‌मां कोण कोण पुरुषो रे ? ॥३६॥

सोअसरीदुरिअदरी, कवमकुमीमहिलियाकिलेसकरी॥  
वद्वरविरोयणअरणी, डुखखाणी सुखपमिवरका ॥३७॥

शब्दार्थ—शोकनी नदी, पापनी गुफा, कपटनी कूँडी, क्लेशनी करनारी अने वैररूप अग्निने प्रगट करवा माटे अरणीना काष्ठ समान एवी स्त्री दुःखनी खाण रे अने सुखनी प्रतिपक्षी(शत्रु)रे. अमुणि अमणि परिकम्मो, सम्मं को नाम नासिजं तरई॥  
वम्महसर पसरोहे, दिघित्रोहे मयन्नीए ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—नथी करी मननी सारी शुद्धि जेणे एवो कयो पुरुप मृगाक्षी स्त्रीना कामवाण वरसावनार नजरना सपाटामांशी वरोवर रीते बची शके ? ॥ ३७ ॥

परिहरसु तञ्च तासिं, दिघि दिघिविसस्सव अहिस्स ॥  
जं रमणि नयणवाणा, चरित्तपाणे विणासंति ॥३८॥

शब्दार्थ—ते कारण माटे हे जीव ! दृष्टिविष सर्पना जेवी रे दृष्टि जेनी एवी अने जे स्त्रीनां नयन रूपी वाणो चारित्र रूप प्राणो विनाश करे रे तेवी स्त्रीनो तुं त्याग कर. ॥३८॥

सिंघंत जखाहि पारं—गडवि विजिइंदिगवि सूरोवि ॥

दढचित्तोवि भखिङ्ग, जुवइ पिसाई हि खुड्हाहिं ॥४०॥

शब्दार्थ—सिंघंत रूप समुद्देने पार पामेलो, विशेषे करी

जीती ढे इद्धियो जेणे, शूरो अने दृढ़ चिन्तवालो एवो पुरुष पण  
युवति रूप कुङ्ग पिसाचणीयो ठलाय ढे. ॥४०॥

मण्यनवणीयविलङ्घ, जह जायइ जल्लणसंनिहाणंमि ॥  
तह रमणिसंनिहाणे, विद्वइ मणो मुणीणंपि ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ—जेम अग्रिनी पासे रहेखु मीणा अने माखण उंग  
ली जाय ढे, तेम स्त्रीनी पासे रहेखा मुनिनु मन पण उंगली  
जाय ढे अर्थात् विकारवत आय ढे. ॥४१॥

नीअगमाहि सुपञ्च—हराहि उपिद्ध मथरगईहि ॥

महिला हि निमग्गा इव, गिरिवर गुरुआवि न्निङ्गंतिधृ

शब्दार्थ—नीच साथे गमन करती, सारा पयोधर (स्तन) वाली अने देखवा लायक मद गतिवाली स्त्री के, जे जाणे नदी समान ढे तेमा बूझेखा (पुरुषो) पर्वत जेवा म्होटा होय तो पण ज्ञेदाय ढे ॥ ४२ ॥

विसयजलं मोहकलं, विलासविद्वोअ जलयराइन्नं ॥

मय मयर उत्तिन्ना, तारुण महन्नव धीरा ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ—विषय रूप जलवाला, मोह रूप कादववाला, विलास अने हावज्ञावरूप जल जतुर्भूथी ज्ञरेखा अने मदरूप मगर वाला जोवन रूप महासमुझ्ने धीर पुरुषो तरेखा ढे ॥४३॥

जइवि परिचित्तसंगो, तव तणुञ्चिंगो तहावि परिवर्मई ॥

महिला संसग्गीए, कोसा नवणूसि य मुणिव ॥४४॥

शब्दार्थ—जोके, कुदुधादिकनो सग जेणे त्याग कस्यो होय अने तपश्ची शरीर दूवलु कखु होय, तोपण ते, स्त्रीना ससर्गथी कोइया वेद्याने धेर रहेखा (सिहगुफावासी) मुनिनी पेरे चास्त्रियी पडे ढे. ॥ ४४ ॥

सद्वग्गंयविमुक्तो, सीईन्नूरु पसंतचित्तो अ ॥

जं पावइ मुत्तिसुहं, न चक्रवटीवि तं लहइ ॥४५॥

शब्दार्थ—सर्व परिग्रहथी मूकायेलो, शांत थयेलो अने शांत चित्त वालो माणस जे सुख पामे रे ते सुख चक्रवर्ति पण पामतो नथी. खेलांमि पमित्रमप्पं, जह न तरइ महित्रावि मोएङ्क ॥  
तह विसयखेलपमित्रं, न तरइ अप्पंपि कामंधो ॥४६॥

शब्दार्थ—जेम वलखामां पमेली माखी तेमांथी पोताने मूकावा समर्थ थती नथी, तेम विषय रूप खेलमां पमेलो कामांध जीव पण तेमांथी नोकलवा समर्थ अतो नथी. ॥४६॥

जं लहइ वीयराउ, सुरुकं तं मुणाइ सुचित्र न अन्नो ॥  
नवि गता सूअरउ, जाणइ सुरखोइअं सुरुकं ॥४७॥

शब्दार्थ—जेम खानामां रहेलो सूअर देवलोकनां सुखने न जाए, तेम जे सुखने वीतराग पामे, ते सुखने वीतराग ज जाए; पण बीजा कोइ ( संसारी जीव ) न जाए. ॥४७॥

जं अजावि जीवाणं, विसएसु डुहावहेसु पमिवंधो ॥

तं नक्कइ गुरुत्राणवि, अलंघणिङ्को महामोहो ॥४८॥

शब्दार्थ—जे कारण माटे हजी सूधी पण जीवोने डुःखने उत्पन्न करनारा विषयोमां प्रतिवंध रे. ते माटे एम जणाय रे के, म्होटाने पण महामोह अलंघनीय रे. ॥४८॥

जे कामंधा जीवा, रमंति विसएसु ते विगयसंका ॥

जे पुण जिणवयणरया, ते ज्ञीरु तेसु विरमंति ॥४९॥

शब्दार्थ—जे कामन्नोगथी आंधला थयेला जीवो रे, ते शं का रहित थहने विषय सुखमां रमे रे अने जे जिनवचनमां रक्त रे, ते संसारथी वीक पामीने विषयथी विराम पामे रे. ॥४९॥

(१०३)

( काव्यम् - )

असुद्भुतमलपवाहरूवय, वंतपित्तवसमज्जफोफसं ॥  
मेत्रमंसवहुद्वकरंदयं. चम्ममित्तपत्राइयजुवद्यन्गयं ॥५०

शब्दार्थ—अशूची, मूत्र, विषाना प्रवाह रूप, वमन, पित्त, वसा, नसो, चर्वी मज्जा—हानकामानो ज्ञूको, फेफसा, मेद, मास तथा घणा हानकानो कर्मयो अने मात्र चामडाथी ज ढाके लु, एवु स्त्रीनु शरीर ठे ॥ ५० ॥

मंसं इमं मुत्तपुरीसमीस, सिंधाणखेलाइ अ निश्चरं तं ॥  
एयं अणिच्च किमित्राणवास, पासं नराणं मश्वाहिसाण ॥५१

शब्दार्थ—मास, मूत्र अने विषायी मिश्रित, सिंधाण—कीट अने वलखाथी ऊरु, अनित्य तेमज कुमीयाउनु घर एवुं आ स्त्रीनु शरीर, ते अब्द पुक्षिवाला पुरुषोने पास समान ठे ॥५१

( आर्यवृत्तम् )

पासेण पजरेण य, बश्नति चन्तप्पया य पखीई ॥  
इय जुवद्यंजरेण, वद्धा पुरिसा किल्लिस्सति ॥५२॥

शब्दार्थ—जेम पासले अने पाजरे करीने बंधायेला जनावरो तथा पक्षीयो ढेश पामे ठे, तेम आ स्त्रीरूपी पाजरे करीने बंधायेला पुरुषो पण ढेश पामे ठे

( अनुष्टुप्वृत्तम् )

अहो मोहो महामद्वो, जेण अम्मारिसावि हु ॥

जाणतावि अणिच्चत, विरमति न खाण्ति हु ॥५३॥

शब्दार्थ—अहो! मोह रूप मद्व वहुज म्होटो ठे जेषो करीने अमारा सरखा जोवो पण (कामज्जोगने) अनित्य जाणतां वता तेथो दृण मात्र पण विराम पामता नश्री! ॥ ५३ ॥

(१०४)

(आर्यावृत्तम्)

जुवझहिं सह कुणांतो, संसगि कुणाइ सयलाङ्केहिं ॥  
 नहि मुसगाणं संगो, होइ सुहो सह विलामेहिं ॥ ५४ ॥

शब्दार्थ—जेम विलामीनी साथे संसर्ग करतो उतो उंदर  
 सुखी अतो नथी, तेम स्त्रीनी साथे संसर्ग करतो उतो पुरुष पण  
 सर्व डःखना संसर्गने करे वे. अर्थात् अनेक डःखने पामे रे.  
 हरिहरचउराणण चं, दसूरखंदाइणोवि जे देवा ॥

नारीण किंकरतं, कुणांति धिक्षी विसयतिन्दा ॥ ५५ ॥

शब्दार्थ—विश्नु, ईश्वर, ब्रह्मा, चंड, सूर्य अने कार्त्तिकस्वा  
 मी विगेरे जे कोइ देवो, ते सर्वे (मात्र विषयने माटे) स्त्रीनुं किं  
 करपणुं करे रे! माटे विकार रे धिक्कार रे विषयनी तृप्णाने !!!

(काव्यम्.)

सीअं च उन्हं च सहंति मूढा, श्विसु सत्ता अविवेच्यवंता  
 इखाइपुत्तंव चयंति जाइं, जीअं च नासंति अरावणुव ॥ ५६ ॥

शब्दार्थ—विवेक विनाना अने स्त्रीमां आसक्त घयेला मूर्ख  
 पुरुषो, इखाची पुत्रनी पेरे पोतानी उत्तम जातिनो त्याग करीने  
 ताढ अने तापने सहन करे वे. तेमज रावणनी पेरे जीवितव्यने  
 पण नाश पमाने रे. ॥ ५६ ॥

(आर्यावृत्तम्)

बुत्तुणवि जीवाणं, सुडकराइ ति पावचरियाइं ॥  
 न्नयवं जा सा सा सा, पद्माएसो हु इणमो ते ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ—जीवोनां अतिशो पापचरित्र एट्ले मार्गां आचर  
 ण कहेवाने पण अतिशो डुष्कर रे. अर्थात् मुखे कहां न जाय  
 एवां रे, इहां हृष्टांत कहे रे. हे नगवन! जे स्त्रीने में धारण करी

ठे, ते स्थी म्हारी वहेन ठे । जगवत कह्यु ते स्थी, ते त्वारी वहेन-  
ज ठे, गुरु महाराज कहे ठे के, हे शिष्य ! त्वारी आगल आ  
दृष्टात कह्युं ॥ ५७ ॥

जखलवतरखां जोयं, अथिरा लक्ष्मीवि जगुरो देहो ॥  
तुड्डा य कामन्नोगा, निवधणं दुरकलखकाण ॥५८॥

शब्दार्थ-जीवितव्य जलना परपोटा जेबु ठे, लक्ष्मी अस्थिर ठे, देह रुणजगुर ठे तेमज कामन्नोग तुड्ड अने लाखो गमे  
ड खना कारण ठे ॥ ५८ ॥

नागो जहा पंकजखावसन्नो, दुँयखां नाज्जिसमेइ तीर ॥  
एव जिआ कामगुणेसु गिद्धा, सुधम्ममग्गे नरया हवंति ॥

शब्दार्थ-जेम हाथो कादववाला जलमा बूढ़यो ठतो जो  
के, स्थलने देखे ठे, तथापि त्याथी काठे आवी शकतो नथो  
तेम कामगुणमा गृह थयेला जीवो पण सुधर्मनां मार्गमां  
रक्त थता नथी ॥ ५९ ॥

जह विष्पुंजखुतो, कीमि सुहं मन्नए सयाकालां ॥  
तह विसयासुश्रतो, जीवोवि मुणइ सुह मूढो ॥६०॥

शब्दार्थ-जेम विष्टाना ढगलामा खूचेलो करमीयो ( जो के  
तेमा सदाकाल ड ख ठे, तथापि ) तेमा सदाकाल सुख माने ठे,  
तेम विषय रूप अशुचीमा रक्त थयेलो मूढ जीव पण ( विषयमा )  
सुख माने ठे ॥ ६० ॥

मपरहरोव जखेहिं, तहवि हु डुप्पुरउ इमे आया ॥

विसयामिसंमि गिद्धो, जवे जवे वच्छ न तत्ति ॥६१॥

शब्दार्थ-जेम पाणोये करी समुइ पूरावो डुप्पर ठे, तेम  
विषयरूप आमिप ( मात ) मां गृह थयेलो आ आत्मा पण विष

यथो पूरावो इुष्कर भे अने तेने लीधेज ते ज्ञव ज्ञवमां तृप्ति  
पामतो नथो. ॥ ६१ ॥

विसय विसद्वा जोवा, उप्रडरूवाइएसु विविहेसु ॥  
ज्ञवसयसहस्रडलहं, न मुण्ठिति गयंपि निअजम्म ॥६२॥

शब्दार्थ—विषयरूप विषयो पीमायेला जीवो उद्जटरूप  
आदि देश विविध प्रकारनां रूपथो पोतानो ज्ञव गमावे भे; परंतु  
तेउ लाख ज्ञवे पण इर्द्धन एवो पोतानो मनुष्य जन्म व्यर्थ जा  
य भे एम नथो जाणता. ॥ ६२ ॥

चिरंति विसयविवसा, मुत्तं लङ्कंपि केवि गयसंका ॥  
न गण्ठिति केवि मरणं, विसयंकुससद्विया जीवा ॥६३॥

शब्दार्थ—विषयरूप अंकूशे साढ्या एवा जीवो विषयने व  
इय थका रहे भे, तथा मूको भे लाज जेमणे अने गयेलो भे शंका  
जेमने एवा केटलाएक जीवो (विषयने माटे) मरणने पण  
नथो गणता. ॥ ६३ ॥

विसयविसेणं जीवा, जिणाधम्मं हारिजण हा नरयं ॥  
वज्ञंति जहा चित्त य, निवारिन्त बंजदत्तनिवो ॥६४॥

शब्दार्थ—खेद आय भे के, विषयरूप विषयो जीवो जिनध  
मने हारो नरके जाय भे. एज कारणाथी चित्र मुनिये ब्रह्मदत्त रा  
जाने विषयथी निवास्यो हतो. ॥६४॥

धिक्षी ताण नराणं, जे जिणावयणामयंपि मुत्तूणं ॥  
चउगझविमंवणकरं, पियंति विसयासवं घोरं ॥६५॥

शब्दार्थ—धिक्कार आउ! धिक्कार आउ! तेवा पुरुषोने के, जे  
जिन वचनरूप अमृतने मूकोने चारे गतिनी विटंवना करावनार  
विषय रूप घोर मदिराने पीए भे!!! ॥६५॥

मरणेवि दीणवयण, माणधरा जे नरा न जंपति ॥  
तेवि हु कुण्ठंति लक्ष्मि, वालाणं नेहगहगदिला ६६

शब्दार्थ-मानने धारण करनारा जे पुरुषो मरण आवे रहते  
पण दीन वचन नहोना वोलता, तेज पुरुषो स्त्रीयोना स्नेहरूप  
ग्रहथो धेला अझे दोन वचनो वोले रे ॥६६॥

सक्रोवि नेव खमङ्ग, माहप्प मडुप्पुरं जए जेसि ॥

तेवि नरा नारोहि, कराविअा निय य दासत्तं ॥६७॥

शब्दार्थ-आ जगत्‌मा जे पुरुषोना महात्म्य अने महिमाने  
शकेइ पण न खडन करो शके, तेवा पुरुषोनी पासे पण स्त्रीयोए  
पोतानु दासपणु कराव्यु ॥६७॥

जउनंदणो महप्पा, जिएज्ञाया वयधरो चरमदेहो ॥

रहनेमी राइमङ्ग, रायमङ्ग कासि ही विसया ॥६८॥

शब्दार्थ-धिक्कार आउ विष्पयोने ! के, यादवना पुत्र, म्होटो  
रे ग्रात्मा जेनो, नेमिनाथ जिनराजना ज्ञाइ, चार महाब्रत धारक  
अने चरम शरीरी एरा रथनेमीये पण राजीमती साथे रागम  
ति करी ! ॥ ६८ ॥

मयणपवणेण जङ्गता-रिसावि सुरसेखनिच्छला चलिया ॥  
ता पक्षपत्तसत्ता-ए इयरसत्ताए का वत्ता ॥६९॥

शब्दार्थ-जो के मदन रूप पवनथो मेरुपर्वत सरखा नि  
श्वल मुनियो चलि गया, तो पाका पान जेवा सत्ववाला बीजा  
जीवोनो शी वात ? ॥ ६९ ॥

जिपंति सुहेणं चिय, हरिकरिसिप्पाइणो महाकूरा ॥  
इकुविय उक्केयो, कामो कयसिवसुइविरामो ॥७०॥

शब्दार्थ-सिह, हाथी अने सर्पादिक महा कूर जीवोने

( १०८ )

सुखथी जीताय, परंतु कर्यो भे मोहना सुखथी विराम जे  
ऐ एवो एक काम जोतवो छुर्जय भे. ॥ ७० ॥

विसमा विसयपिवासा, अणाइनवन्नावणाइ जीवाणं  
अइड्डेयाणी इं-दियाणि तह चंचलं चितं ॥ ७१ ॥

शब्दार्थ—जीवोने विषम एवा विषयनी तृषा अनादिनी संसा-  
रनी न्नावना भे. इङ्गियो अति छुर्जय भे तेम चित्त पण चंचल भे.  
कलिमला अरइ अ नुखी, वाहो दाहाइ विविह असुहाइं  
मरणंपि य विरहाइसु, संपञ्चइ कामतवियाण ॥ ७२ ॥

शब्दार्थ—कामथी तपेला जीवोने कलिमल, अरति, नूख,  
दाहादिक व्याधि, विविध प्रकारनां उःख, प्रियजननो वियोग  
अनें मरण पण आय भे. ॥ ७३ ॥

( काव्यम् )

पंचिंदियविसयपसंगरेसि, मणवयणकायनविसंवरेसि  
तंवाहिसि कत्तिय गलपएसि, जं अठकम्मं नविनिझरेसि

शब्दार्थ—जे प्राणी पंचेइयना विषय प्रसंगने माटे मन,  
वचन अने कायाने नथी संवरतो, तथा झानावरणादि आठ क  
मौने नथी निर्जरतो; ते प्राणी पोतना गलानी जग्याए कातर  
वाहे भे. ॥ ७४ ॥

किं तुमधोसि किंवासि धत्तूरिति,

अहव किं सन्निवाएण आजुरिति ॥

अमयसमधम्म जं विसव अवमन्नसे,

विसयविसविसम अमियंव बहु मन्नसे ॥ ७५ ॥

शब्दार्थ—हे जोव ! शुं तुं आंघखो भे ? शुं तें धंतूरो खाधो  
भे ? अश्वा शुं तुं सन्निपात रोगे वीटाएलो भे ? के, जे कारण

माटे अमृत समान जिनधर्मने विषयी पेरे अवगणे थे ? अने  
विषय एवा विषय रूप विषये अमृतनी पेरे वह मानेंव. ॥७४॥

तुङ्ग तुह नाणविन्नाणगुणमंवरो,  
जलाणजालासु निवडतु जिअ निज्ञरो ॥

पयइ वामेसु कामेसु जं रजसे,  
जेहि पुण पुणवि निरयानखे पञ्चसे ॥ ७५॥

शब्दार्थ—हे जीव ! त्वारु ज्ञान, विज्ञान अने गुणनो आ  
मूल, ते सर्वे निरतर अग्निनी ज्वालामा पमो, जे कारण माटे तु  
प्रकृतिये वाका एवा कामज्ञोगमा राचे थे, जेथी तुं फरो फरोने  
नरकमा रहेलो अग्निनी ज्वालामां पमीश ॥ ७५ ॥

दहइ गोसीस सिरिखिंम भारकए,  
रगल गहणइ मेरावण विकए ॥

कप्पतरु तोमि एरंम सो वावए,  
जुङ्ग विसएहि मणुच्छत्तणं हारए ॥ ७६ ॥

शब्दार्थ—जे प्राणो अब्द्य एवा विषयसुखने माटे मनुष्य  
पणाने हारे थे, ते प्राणी राखने माटे गोशीर्पचदन अने सूखड  
ने वाले थे, वोकमो ग्रहण करवा माटे ऐरावत हाथीने बेचे थे  
अने कछवृक्ने उखेमो नाखी एरमाने वावे थे ॥ ७६ ॥

( अनुष्टुप्‌वृत्तम् )

अधुवं जीवियं नद्वा, सिद्धिमग्ग वियाणिया ॥

विणिअद्विज्ञ ज्ञोगेसु, आउ परिमित्र मप्पणो ॥ ७७ ॥

शब्दार्थ—जीवितव्यने अशाश्वत जाणीने, मोक्ष मार्गना  
सुखने शाश्वत जाणोने अने आउखु अपरिमित (प्रमाण विनानु)  
जाणीने ज्ञोगथी विशेष निवर्त्तवु ॥ ७७ ॥

(१३०)

( आर्यावृत्तम् )

सिवमग्गसंविच्छ्राणवि, जहु उज्जेया जियाण पण विसया  
तह अन्नं किंपि जए, उज्जेयं नहि सयखेवि ॥७८॥

शब्दार्थ—जेम मोक्ष मार्गमां रहेला जीवोने पण पांच वि  
षयो उर्जय डे, तेम सर्व जगत्मां बोजुं कोइ पण उर्जय नथो.  
सविमंकुप्रमूर्खवा, दिघ मोहेइ जा मणं इडो ॥

आयहियं चिंतंता, दूरयेरणं परिहरंति ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ—विकार सहित मनोहर रूपवाली एवी जे स्त्री, ते  
दीर्घी भती मनने मोहित करेहे. ते कारण माटे पोताना आत्मा  
नुं हित चिंतवनार पुरुष तेवी स्त्रीने दूरथीज त्याग करेहे ॥७९॥

सञ्च सुअंपि सीढं, विनाणं तह तवंपि वेरगं ॥

वच्छ खणेण सञ्च, विसयविसेणं जईणंपि ॥८०॥

शब्दार्थ—सत्य, श्रुत, शील, विज्ञान, तप तेमज वैराग्य;  
ए सर्वे मुनिनां पण विषयरूप विषयी क्षणमात्रमां जतां रहेहे.  
रे जोव समझविगच्चिप्य, निमेससुहखालसो कहं मूढ

सासयसुहमसमतमं, हारिसि ससिसोअरं च जसं ॥८१॥

शब्दार्थ—रे जीव ! पोतानी मतिये कट्टेला अने निमेष  
मात्र—आंख मींचीने उधाडीये एटली वार सुखने आपनारा एवा  
विषय सुखनी लालचमां पडीने हे मूढ ! चंझमा समान उज्ज्वल  
जशवाला अने जैनां समान जगत्मां बोजुं सुख नथो एवां शा

श्वत सुखने तुं केम हारी जाय डे ? ॥ ८२ ॥

पङ्गलिङ्ग विसयअग्गी, चरित्त सारं महिङ्क कसिणंपि ॥

सम्मतंपि विराहिय, आणंतसंसारियं कुजा ॥८३॥

शब्दार्थ—विषय रूप अग्गी प्रजट्यो वतो समस्त चारित्र

ना सारने वाले थे अने समकितने विराधीने अनंतसंसारीपशा  
ने करे थे ॥ ४७ ॥

ज्ञीसणन्नवकतारे, विसमा जीवाण विसयतिन्द्रां ॥  
जाए नमिया चउद—स्सपुविवि रुखंति हुं निगोए ॥८३॥

शब्दार्थ—विहामणी ज्ञव अटबीमा जीवोने विपयनी तृष्णा  
विपम थे जे तृष्णाए नडायेका चौद पूर्वियो पण निगोदमा रुखे थे ।  
हा विसमा हा विसमा, विसया जीवाण जेहि पर्मिवधा ॥  
हिमंति ज्ञवसमुद्दे, अणंतउखाइ पावंता ॥८४॥

शब्दार्थ—हा ! हा ! विपम एवा विपयोथी जे जीवो वंधायेका  
थे, तेउ अनत डु खने पामता थका ज्ञव समुद्दमा हीमे थे ८४  
मा इंदजालचवला, विसया जीवाण विजुतेअसमा ॥  
खण्डित्रा खण्णनघा, ता तेसि को हु पर्मिवंधो ॥८५॥

शब्दार्थ—मायावी इजाल जेवा, चपल अने वीजखीना  
ज्ञवकारा समान एवा विपयो जीवोने कृणमां देखाय थे अने  
कृणमा नाश पामे थे, तो तेवा विपयोमा झो प्रतिवध करवो ?  
सत्तु विस पीसाऊ, वेआलो हुअवहोवि पज्जलिउ ॥  
तं न कुणइ जं कुविया, कुणंति रागाइणो देहो ॥८६॥

शब्दार्थ—शत्रु, विष, पिसाच, वेताल अने प्रज्वलित थयेको  
अग्नि, ते सर्वे कोप्या थका पण जे डु.ख नथी करता; ते डु.ख  
देहने विषे रागादिक करे थे ॥ ८६ ॥

जो रागाइण वसे, वसमि सो सयखउखलखकाण ॥  
जस्स वसे रागाइ, तस्स वसे सयखसुखाइ ॥८७॥

शब्दार्थ—जे जोवो रागादिकने वद्य थे, ते सर्व प्रकारना  
लाखो डु खने वद्य थे अने जेता वद्यमा रागादिक थे अर्थात्

जेणे रागादिकने पोताने वश्य कर्त्ता रे, तेना वश्यमां सर्वं प्रकारनां सुख रे. ॥ ४७ ॥

केवल उहनिम्मविए, पमियो संसारसायरे जीवो ॥  
जं अणुहवइ किलेसो, तं आसव हेउअं सद्बं ॥४८॥

शब्दार्थ—आ जीव केवल उःखे निपजावेला संसार समुझमां पञ्चो रे अने त्यां जे क्लेशने (उःखने) अनुज्ञवे रे, ते सर्व आश्रवनां कारण रे. ॥ ४८ ॥

ही संसारे विहिणा, महिलारूपेण मंमित्रं जालं ॥

बश्नंति जडु मूढा, मणुआ तिरिआ सुरा असुरा ॥४९॥

शब्दार्थ—ही इति खेदे ! आ संसारमां स्त्रीना रूपे वरी विधाताए जाल मांझो रे. जे जालमां मूढ एवा मनुष्यो, तिर्यं चो, सुरो अने असुरो वंधाय रे ! ॥ ४९ ॥

विसमा विसय नुअंगा, जेहिं मसिआ जिआ नववणंभि कीसंती उहगीहिं, चुलसीई जोणि लखेसु ॥५०॥

शब्दार्थ—नव रूपी वनमां अर्यात् संसार रूपो वनमां रखन्ता एवा जे जीवोने विषम एवा विषय रूप सर्पो डश्या, ते जीवो उःख रूप अग्निये उःख पामता थका चोराशीलाख जीवाजोनिमां क्लेश पामे रे. ॥ ५० ॥

संसारचारगिम्हे, विसयकुवाण लुकिया जीवा ॥

हियमहियं अमुणंता, अणुहवइ अणंतउखाई ॥५१॥

शब्दार्थ—संसारना मार्ग रूप ग्रिष्मकालमां विषय रूप न गरा वायरेथी लूकायेला जीवो हित अहितने न जाणता थका अनंत उःखोने अनुज्ञवे रे. ॥ ५१ ॥

हा हा उरंत उघा, विसय तुरंगा कुसिखिया लोए ॥

नीसण नवाम्बोए, पामंति जिआण मुद्वाण ॥५२॥

शब्दार्थ-हा ! हा ! आ ससाररूप लोकमा झु खे करी अं  
त ठे जेनो, डुष्ट अने विपरीत शीखवेला एवा विषयरूप घोडा  
उ मुग्ध जीवोने ज्ञयकर एवी ज्ञवरूप ग्रटवीमां पासे ठे ॥४२॥

विसयपिवासातत्ता, रत्ता नारीसु पकिलसरमि ॥

उहिया दीणा खीणा, रुद्धंति जीवा ज्ञववणमि ॥४३॥

शब्दार्थ-विषयरूप तृपाथी तपेला अने खीमा रक्त थये  
ला जीवो ज्ञवरूपी वनमा खीरूप काढववाला सरोवरमा दु  
खीया, दीन अने कीण थया रत्ता लोटे ठे ॥४३॥

गुणकारियाइ धणियं, धिङरङ्गु निअतिअआइ तुह जीव  
निययाइ इंदियाइ, वद्धिनिअत्ता तुरगुब ॥४४॥

शब्दार्थ-हे जीव ! धिरजरूप दोरडाथी वश्य राखेली  
पोतानी इङ्गियो लगाममा वश्य राखेला घोडानी पेरे अतिशे  
फायदाकारक ठे ॥४४॥

मणवयणकायजोगा, सुननअत्ता तेवि गुणकरा हुंति ॥  
अनिअत्ता पुण ज्ञंजति, मत्तकरिणुब सोखवण ॥४५॥

शब्दार्थ-मन, वचन अने कायाना योग वश्य कर्त्ता रत्ता  
ते पण गुणकारी थाय ठे अने नहि वश्य करथा रत्ता मदोन्मन्त  
इस्तिनी पेठे शीलरूप वनने ज्ञागे ठे ॥४५॥

जह जह दोसा विरमइ, जह जह विसएहि होइ वेरग्ग ॥  
तह तह विन्नायब, आसन्न से य परमपय ॥४६॥

शब्दार्थ-जेम जेम दोपो विराम पामे ठे अने जेम जेम  
निययथी वैराग्य थाय ठे, तेम तेम जाणबु के, तेने ( मोक्ष )  
दुकडु थाय ठे ॥४६॥

उक्कर मेपहि कय, जेहि समर्हेहि जुबणर्हेहि ॥

जग शदियसिन्न, धिङ्पायार विलग्गेहि ॥४७॥

शब्दार्थ—जे पुरुष पोताना सामर्थ्यपणार्थी जोवन अव स्थामां इंद्रियरूप सैन्यने न्नागीने धिरजरूप प्राकार (गढ)ने व लग्या, ते पुरुषे दुष्कर काम करत्युं एम जाणवुं ॥ ९७ ॥

ते धन्ना ताण नमो, दासोऽहं ताण संजमधराण ॥

अद्विति पद्धिरात्, जाण न हियए खमकंति ॥४७॥

शब्दार्थ—तेज पुरुषोने धन्य ठे, तेमनेज अमे नमस्कार करीए गोए अने तेज संयमधारीना अमे दास गीए के, जे पुरु षोनां हृदयमां अद्विति आंखे जोनारी अर्थात् कटाक्ष नेत्रे जोनारो ख्याती खटकती नथी ॥ ९८ ॥

किं बहुणा जइ वंभसि, जीव तुम सासयं सुहं अरुहं ॥

ता पियसु विसयविमुहो, संवेगरसायणं निन्नं ॥४८॥

शब्दार्थ—वधारे कहेवायी शुं ? हे जीव ! जो तुं निरोग एवा शाश्वत सुखने वांछतो होय, तो विषयथी विमुख आ अने निरंतर संवेग रसायणने पी ॥ ९९ ॥

॥ इति श्री इंद्रियपराजयशतक समाप्तम् ॥

## ॥ श्री वैराग्य शतकम् ॥

संसारमि असारे, नद्वि सुहं वाहिवेअणापउरे ॥

जाणंतो इह जीवो, न कुणइ जिणदेसियं धम्मं ॥१॥

शब्दार्थ—असार तेमज व्याधि अने वेदनाथी नरपूर एवा आ संसारमां सुख नथी, एम जाणतो डतो जीव जिनराजे क हेला धर्मने आचरतो नथो ॥ १ ॥

अद्य कद्मं पर परारिं, पुरिसा चिंतंति अड्डसंपत्ति ॥  
अंजलिगयंव तोयं, गदंतमाऽऽन् न पिञ्चंति ॥४॥

शब्दार्थ—पुरुषो “आज, काल, पहोर अथवा परार मने धन सपन्नि मलशे” एम विचार करे दें, परंतु अजलोमा रहे दो पाणीनो पेठे गदो जता आयुष्यने नथी जोता ॥ ३ ॥

जं कद्मे कायद्वे, तं अङ्ग चिय करेह तुरमाणा ॥  
बहुविग्धो हु मुहुतो, मा अवरएहं पमिरकेह ॥३॥

शब्दार्थ—इ प्राणीयो। जे काले करवा योग्य होय तेने आ जेज करो कारणके, एक मुहूर्तमा पण वह विघ्नो आवी पमे दें, माटे आवता दिवसनी बाट न जूँ ॥ ३ ॥

ही संसारसहावं, चरियं नेहाणुरायरत्तावि ॥

जे पुवएहे दिघा, ते अवरएहे न दीसंति ॥४॥

शब्दार्थ—आ संसारना स्वज्ञावना आचरणने जोइने अम ने खेद थाय देके, स्नेहना अनुरागमा आसक्त एवा स्वजनो सबारे देखाता हता ते साजे देखाता नथी ॥ ४ ॥

मा सअ्रह जग्गिअद्वे, पलाइअवमि कीस वीसमहे ॥  
तिनि जणा अणुलभगा, रोगो अ जरा अ मन्नू अ ॥५॥

शब्दार्थ—हे खोको! जागवाने अवसरे अर्थात् वर्मकृत्य क रवाने बखते केम सूझ रहो गो? अर्थात् आलस करो गो? बदी नासी जवाना स्थानके केम विसामो करो गो? कारणके, रोग, जरा अने मृत्यु ए त्रण तमारी पुरे लागेला दें ॥ ५ ॥

दिवसनिसाघमिमालं, आउसलिलं जीआण घित्तूण  
चदाइचवश्वा, कालरहं जमामति ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—चइ सूर्यरूप बखदो रात्रि दिवसरूप घमानी पं

किं वडे जीवोनां आयुष्यरूप पाणीने खेंची काढता घता काल  
रूप रेट्ने फेरवे रे ॥ ६ ॥

सा नद्दि कला तं नद्दि, उसहं तं नद्दि किंपि विनाणं ॥  
जेण धरिङ्गश्च काया, खज्जंती कालसप्पेण ॥७॥

शब्दार्थ—हे नव्य जीवो ! कालरूप सर्पथो नक्षण कराता  
देहने जेनाथी रक्षण करीये एवी कोइ कला नथी, तेवुं कोइ औ  
षध नथी अने तेवुं कोइ विज्ञान पण नथी. ॥७॥

दोहरफणिंदनाले, महिअरकेसर दिसामहदलिल्ले ॥  
उ पीछाइ कालन्नमरो, जणमयरंदं पुहविपञ्चे ॥८॥

शब्दार्थ—आ धरो खेदली वात रे के, कालरूप न्नमरो म्हो  
टा शेपनागरूप नालवालां, पर्वतोरूप केशरावालां, दिशाउरूप  
पत्रवाला, पृथ्वीरूप कमलने विषे मनुष्योरूप मकरंदनुं पानकरेवे  
भायामिसेण कालो, सयद्यजीआणं ठळं गवेसंतो ॥  
पासं कहवि न मुंचइ, ता धर्मे उद्यमं कुणह ॥९॥

शब्दार्थ—ठलनी शोध करतो काल गायानां मिषथी सर्व  
प्राणीयोनां पमखाने नथी मूकतो, माटे हे नव्य जीवो ! तमे  
धर्मने विषे उद्यम करो ॥९॥

कालंसि आणाईए, जीवाणं विविहकम्मवसगाणं ॥  
तं नद्दि संविहाणं, संसारे जं न संन्नवइ ॥ १० ॥

शब्दार्थ—अनादि काल चक्रमां न्नमता अने नाना प्रकारनां  
कर्मने वडा रहेला जीवोने संसारमां कोइ पण एकेंडियादि नेद नथी  
प्राप थयो, एम नथी. अर्थात् एकेंडियादि सर्वे न्नेदोमां न्नमेलो रे

( अनुष्टुप्वृत्तम् )

वंधवा मुहिणो सबे, पिअमाया पुतन्नारिया ॥

पेअवणाज निअत्तंति, दाजाणं सखिलंजखिं ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—वाधवो, सुहृदो, माता, पिता, पुत्र अने स्त्री, ए सर्वे मरी गयेला मनुष्यने पाणीनो अंजली आपीने पठी श्मशानथी पाग आवे रे ॥ ११ ॥

## ( आर्यावृत्तम् )

विहमति सुअरा विहमं-ति वंधव वद्धवा य विहमति ॥  
इको कहवि न विहमइ, धम्मो रे जीव जिएन्नणिउ ॥१२॥

शब्दार्थ—अरे जीव ! पुत्रो, वाधवो अने स्त्रीयो ए सर्वेनो वियोग थाय रे, परतु श्रो जिनराजे कहेला एक धर्मनो वियोग क्यारे पण थतो नथी ॥ १२ ॥

अमकम्मपासवद्धो, जीवो संसारचारए ठाइ ॥

अमकम्मपासमुक्तो, आया सिवर्मदिरे ठाइ ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—आठ कर्मरूप पासाथो वधायदो जीव संसाररूप बंधीखानामा रहे रे अने आठ कर्मपासथी बूटेलो आत्मा मोक्ष मदिरमा वसे रे ॥ १३ ॥

विहवो सङ्गणसंगो, विसयसुहाइ विलासलिलिआइ ॥

नलिणीदलग्गधोलिर, जललवपरिचलं सब ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—लक्ष्मी, स्वजन सयोग अने विलासे करीने सुंदर एवा विषय सुख ए सर्वे कमलना पत्र उपर कपता रहेला पाणोना विडु समान अत्यत चपल रे ॥ १४ ॥

तं कर्त्र वद्धं तं क-त्र जुवणं अंगचंगिमा कर्त्र ॥

सबमणिच्चं पित्रह, दिघंनष कयंतेण ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—हे प्राणोयो ! ते बल, ते यौवन अने ते अग्नु सुदर रपणु क्या गयु ? ते कारण माटे काले करीने दीरा न दीठा जेवुं आ सर्व अनित्य जाणो ॥ १५ ॥

(११८)

घणकम्मपासबद्धो, ज्ञवनयरचञ्चप्पहेसु विविहाज ॥  
पावइ विम्बणात्, जीवो को इड सरणं से ॥१६॥

शब्दार्थ—गाढ कर्मरूप पासाथी बंधायदो जीव संसाररूप नगरना चौटामां विविध प्रकारनो विटंबना पामे भे, माटे आ संसारमां ते जीवनुं कोण रक्षण करनार भे ? ॥१६॥

घोरंमि गप्प्रवास, कलमलजंबालाअसुइवीज्ञच्छे ॥  
वसिजं अणांतखुत्तो, जीवो कम्माणुज्ञावेण ॥१७॥

शब्दार्थ—जीव, घोर अने उदरमां रहेला पदार्थोथी अशु चि तेमज ज्ञयंकर एवा गर्ज्वासमां पोतानां कर्मना प्रज्ञावधी अनंतीवार वश्यो भे. ॥१७॥

चुलसीइ किर लोए, जोणीणं पमुहसयसहस्राइ ॥  
इकिक्कम्मि अ जीवो, अणांत खुत्तो समुप्पनो ॥१८॥

शब्दार्थ—शास्त्रमां चोराशो लाख योनी कही भे अने ते दरेक योनीमां जीव अनंतीवार उत्पन्न थयो भे. ॥१८॥

मायापियबंधूहिं, संसारड्डेहिं पूरित लोउ ॥

बहुजोणिनिवासीहिं, नय ते ताणं च सरणं च ॥१९॥

शब्दार्थ—संसारमां रहेला अने घणी योनीमां निवास करनारां माता, पिता अने बंधुउणे करीने आ लोक जरपूर थयो भे; परंतु ते माता पिता विगेरे त्वाहुं रक्षण करनार नथो, तेम ते त्वारे शरण करवा योग्य नथी. ॥१९॥

जीवो वाहिविखुत्तो, सफरो इव निङ्गले तम्पफमइ ॥

सयलोवि जणों पिछ्छ, को सको वेअणाविगमे ॥२०॥

शब्दार्थ—पीमाथी व्याप्त थयेलो जीव जल रहित स्थानमां मांबलानी पेरे तरफदे भे. सर्व लोक ते जीवने जूए भे, पण तेनो

(११४)

वेदना दूर करवा कोण समर्थ होय ? अर्थात् कोइ नथी. २०  
 मा जाणसु जीव तुम, पुत्र कछत्ताइ मन्म सुहहेऊ ॥  
 निजणं वंधणमेत्रं, ससारे संसरंताणं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—हे जोव ! तु “आ पुत्र कलत्रादि म्हारा सुखना कारण थशे ” एम तु न जाणीश. कारणके, ससारमा ज्ञमता जोवोने ते पुत्रादि उलटा वधनरूप आय दे ॥२१॥  
 जणणी जायइ जाया, जाया माया पित्रा य पुत्रो य ॥  
 अणवडा संसारे, कम्मवसा सद्बजीवाणं ॥ २२ ॥

शब्दार्थ—ससारमा कर्मना वद्यथो सर्व जीवोने एक जात नी अवस्था रहेलो नथो कारणके, पूर्वना ज्ञवमा माता होय ते बोजा ज्ञवमा स्त्री थइ जाय, स्त्री होय ते माता आय, पिता होय ते पुत्र आय अने पुत्र होय ते पिता पण आय ॥ २२ ॥

( अनुष्टुपूवृत्तम् )

न सा जाई न सा जोणी, न तं राणं न तं कुलं ॥  
 न जाया न मुत्रा जड़, सद्वे जीवा अणंतसो ॥२३॥

शब्दार्थ—जेमा सर्वे जीवो अनतीवार उत्पत्र थया नथी अने मृत्यु पास्या नथी एवो कोइ जाति, योनो, स्थान के कुल नथी.

( आर्यावृत्तम् )

तं किपि न द्वि राणं, लोए वालगगकोमिमित्तंपि ॥

जड़ न जीवा वहुसो, सुहउखपरपरं पत्ता ॥२४॥

शब्दार्थ—जेमा जीवो वहुवार सुख दु खनी परपराने नथी पास्या, एवु लोकमा वालना अयन्नाग जेटलु कोइपण स्थान नथी.

सद्वाड़ रिक्षीड़, पत्ता सद्वेवि सयणसंवंधा ॥

ससारे तो विरमसु, तत्तो जइ मुणसि अप्पाणं शृ

शब्दार्थ—हे जीव ! तने आ संसारमां सर्वे समृद्धि अने सर्वे स्वजनादि संबंध प्राप्त थाये रे, माटे जो पोताने सुखी जाणते होय तो तेथी विराम पाम. ॥४५॥

एगो बंधइ कम्म, एगो वहबंधमरणावसणाई ॥

विसहइ ज्ञवंमि ज्ञमझइ, एगुच्चिअ कम्मवेळविठ ॥४६॥

शब्दार्थ—जीव पोते एकलोज कर्मने बांधे रे, एकलो वध, बंधन अने मरणनी आपचिने सहन करे रे; वली एकलोज कर्म थी रगायो भतो संसारमां ज्ञाने रे. ॥४६॥

अन्नो न कुणइ अहिअं, हियंपि अप्पा केरइ नहु अन्नो अप्पकयं सुहडुरंक, ज्ञुंजसिता कोस दीणमुहो ॥४७॥

शब्दार्थ—हे प्राणिन् ! त्वारुं बीजुं कोइ अहित करतुं नथी. तेमज त्वारुं पोतानुं हित पण तुं पोतेज करे रे, बीजुं कोइ करतुं नथी, माटे तुं पोतानुं करेलुं सुख डःख ज्ञोगवे रे, तो पठी शाकारण माटे दीन सुखवालो थाय रे ? ॥४८॥

बहुआरंजविठत्तं, वित्तं विलसंति जीव सयणगणा ॥

तज्जणियपावकम्म, अणुहवसि पुणो तुमं चेव ॥४९॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तें पोते बहु आरंजथी मेलवेलुं जे धन रे तेसे करीने त्वारा स्वजनो विलास करे रे अने वली ते आरंजथी उत्पन्न अयेलां पापने तुं पोते एकलोज नरकमां अनुज्ञव करोडा. अह डुखिअ तह ज्ञु—खिअ तह चिंतियाइ मिंजाइ तह थोवंपि न अप्पा, विचिंतिउ जीव किं जणिमोपृष्ठ

शब्दार्थ—अरे मूर्ख जीव ! तें जेवी रीते त्वारा डःखी थता ज्ञूख्या एवा वालकोनो विचार करयो रे तेवो रोते त्वारो पोतानो विचार कर्यो नथो, तो हवे तने झुं कहुं ? ॥५१॥

खण्जन्गुरं सरीरं, जीवो अन्नो अ सासयसरूपो ॥  
कम्मवसा सबधो, निवंधो इत्तु को तुक्ष ॥ ३० ॥

शब्दार्थ—शरीर कण्जन्गुर अने तेथी जूदो एवो जीव शा-  
श्वत रूपवालो ठे वली एवेनो कर्मना वश्यथो संबंध थयो ठे तो  
परी हे जीव । त्वारे ए शरीरने विपे मूर्ढा शामाटे राखवी जोइये ?  
कह आय कह चलिअं, तुमंपि कह आगड़ कह गमिहो ॥  
अनुन्नंपि न याणह, जीव कुडुबं कउ तुक्ष ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! आ कुडुब क्याथी आव्यु अने क्या गयु ?  
तुं पण क्याथी आव्यो अने क्या जश्श ? वली तमे परस्पर एहु  
बीजाने जाणता नयो तो परी ते कुडुब त्वारु क्याथी ? ३१

खण्जन्गुरे सरीरे, मणुअन्नवे अप्रपडलसारिठे ॥

सारं इत्तिअमितं, जं कीरइ सोहणो धम्मो ॥ ३० ॥

शब्दार्थ—शरीर कण्जन्गुर अने मनुष्यन्नव मेघना समूह  
जेवो ठे, जेथी उच्चम धर्म आचरवो एज मात्र सारठे ३७

( अनुष्टुप्वृत्तम् )

जम्म डुखं जरा डुखं, रोगा य मरणाणि य ॥

अहो डुखो हुं संसारे, जन्म कीसति जंतुणो ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ—जन्म सबधी डुख, जरावस्था सबधी डुख, रो-  
गो अने मरण ए पण दुखमय ठे, माटे आ ससारज डुखरूप  
ठे के, जेमा पाणीयो छेश पामे ठे ॥ ३३ ॥

( आर्यवृत्तम् )

जाव न इंदियहाणी, जाव न जररखसी परिफुरड ॥

जाव न रोगविअरा, जाव न मञ्च समुद्धिअई ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ—ज्या सुधोमा इंदियो कीण थइ नयी, ज्या सुधोमा

जरावस्थारूपी राहती प्रगट अह नथो, ज्यां सुधीमां रोगविकां  
रो उत्पन्न थया नथी अने ज्यां सुधीमां मृत्यु उदय आव्यु नथो,  
त्यां सुधीमां धर्म साधन करी खहे. ॥३५॥

जह गेहंमि पखिते, कूवं खणीजं न सकए कोइ ॥  
तह संपत्ते मरणे, धमो कह कीरह जीव ॥ ३५ ॥

**शब्दार्थ—**जेम घर सलगवा खाग्या पठी कोइ माणस कूवो  
खोदवाने समर्थ थतो नथी, तेम मरण नजीक आव्या पठी हे जी  
व ! तुं धर्म शी रीते करी सकोश ? ॥३५॥

रूवमसासयमेत्रं, विङ्गुखयाचंचलं जए जीत्रं ॥  
संज्ञाणुरागसरिसं, खणरमणीत्रं च तारुन्नं ॥ ३६ ॥

**शब्दार्थ—**आ रूप अशाश्वतुं डे, जगत्मां जीवित विज  
लीनी पेठे चपल डे अने तारुण्यपणुं पण संध्याना रंग जेवुं  
क्षण रमणीक डे. ॥ ३६ ॥

गयकन्नचंचलाउ, छडीउ तित्रिसचावसारिहुं ॥  
विसयसुहं जीवाणं, बुञ्जसु रे जीव मा मुञ्ज ॥ ३७ ॥

**शब्दार्थ—**जीवोने लहमीयो हाथीना कान जेवी चंचल अने  
विषय सुख इँडनां धनुष्य सरखुं चपल डे, माटे ओरे जीव ! तुं बोध  
पाम, पण मोह न पाम. ॥३७॥

जह संज्ञाए सजणा-णसंगमो जह पहे आ पहिआणं ॥  
सयणाणं संजोगो, तहेव खणज्ञंगुरो जीव ॥ ३८ ॥

**शब्दार्थ—**हे जीव ! जेवी रीते संध्या समये पक्षीयोनो अने  
रस्तामां मुसाफर लोकोनो समागम थायडे, तेवीज रीते आ स्व  
जनोनो समागम पण क्षणज्ञंगुर डे. ॥३८॥

(१२३)  
( उपजाति वृत्तम् )

निसाविरामे परिज्ञावयामि, गेहे पलिते किमह सुआमि  
मश्तमप्पाणमुवरक्यामि, ज धर्मरहितं दिअहा गमामि॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तने आवो विचार केम नथी आवतो के,  
हु पारलो चार घण्ठा रात रहे एट्टो आवो विचार करु के, जे हुं  
धर्म रहित दिवसो केम गमावु रुं ? घर बलवा माडये ठते केम  
सुइ रहुं रु ? अने बलता एवा आत्मानी केम उपेक्षा करु रु ?

( अनुष्टुप् वृत्तम् )

जाजा वच्छ रयणी, न सा पमिनिअत्तइ ॥

अहम्म कुणमाणस्स, अहला जति राइउ ॥४०॥

शब्दार्थ—जे जे रात्री दिवसो जाय ढे तेते पागा आवता नथी  
कारणके, अवर्म करनार माणसना रात्री दिवस निष्फल जाय ढे  
जस्स त्रि मञ्चुणासख, जस्स व त्रि पखायगा ॥  
जो जाणे न मरिस्सामि, सोहु कर्खे सुए सिया ॥४१॥

शब्दार्थ—जेने मृत्युनी ताथे मित्रता ढे, जेने मृत्युथी ना  
सी जनु ढे वली जे पुस्प एम जाणे ढे के, हुं मरीडा नहि, ते  
पुस्प कदापि आवती काले धर्म करवानी इच्छा करे ढे ॥४२॥

( आर्यवृत्तम् )

दम्कलिअ करिता, वच्छति हु राइउ अ दिवसाय ॥  
आउस सविल्लता, गयावि न पुणो निअत्तति ॥४३॥

शब्दार्थ—फालका उपरथो दम्कले सूत्रने उकेलवानी पेरे  
आयुष्यने उकेलता एवा रात्री दिवसो चाल्या जाय ढे अने ते  
गयेला रात्री दिवसो पाग आवता नथी ॥ ४३ ॥

(३४)

( उपजातिवृत्तम् )

जहेह सीहो व मियं गहाय, मन्द्रु नरं नेष्ट हु अंतकाले ॥

न तस्स माया व पिया व ज्ञाया, काखं मितं मिं इ सहरा ज्ञवंति

शब्दार्थ—जेम आ लोकमां सिंह मृगने पक्षोने मारी नाखे  
ठे तेम मृत्यु माणसने निश्चे विनाश पमोइ ठे; पण ते वखते ते  
माणसने माता, पिता अने ज्ञाइ रक्षण करवा समर्थ यंता नयी.

( आर्यावृत्तम् )

जिअं जलविंदुसमं, संपत्तीञ्त तरंगलोलाञ्च ॥

सुमिण्यसमं च पिम्मं, जं जाणसु तं करिङ्गासु ४४

शब्दार्थ—जीवित दर्जना अग्रज्ञाग उपर रहेका जलविंडु  
समान, संपत्तियो जलना तरंगो समान अने प्रेम सप्त्र समान  
ठे, माटे जो ते तेवुं जाणतो होय तो धर्म आचर. ॥ ४४ ॥

( रथोद्धतावृत्तम् )

संऊराग जलवुञ्जुञ्जवमे, जीविए अ जलविंडुचंचले ॥

जुद्वणे य नझ्वेग सन्निज्ञे, पावजीव किमियं न बुष्ट्रसे ४५

शब्दार्थ—संध्या समयनो रंग, पाणीनो परपोटो अने दर्जना  
अग्रज्ञाग उपर रहेलुं पाणीनुं विंडु, तेना समान जीवित ब  
ते, वलो नदीना वेग समान युवावस्था भते हे पाप जीव ! तुं  
बोध नयी पामतो ए शुं ? ॥ ४५ ॥

( आर्यावृत्तम् )

अन्नदृ सुआ अन्न-दृ गेहिणी परिअणोवि अन्नदृ ॥

ज्ञू अवलिव कुडुंबं, परिकितं हयकर्यंतेण ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—अरे निंदा करवा योग्य काले भूतने वलिदान आ  
पवानी पेरे पुत्रोने जूदी गतिमां, स्त्रीने जूदी गतिमां अने परि

(१२५)

वारने जूँडी गतिमा; एम सर्व कुदुंवने जूँड जूँड करी नाख्यु रे.  
जीवेण ज्ञवेन्नवे मि-खियाइ, देहाइ जाइ संसारे ॥  
ताण न सागरेहि, कीरइ सखा अणांतेहि ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ-हे आत्मन् । आ ससारमा जीवे, ज्ञवे ज्ञवमा जे  
देहो मेलव्या रे, तेउनी अनता सागरोपमथी पण सख्या थङ  
शके तेम नथो ॥ ४७ ॥

नयणोदयपि तासि, सागरसखिलाऊ बहुयर होइ ॥  
गलियं रुयमाणीणं, माऊण अन्नमन्नाण ॥४८॥

शब्दार्थ-हे आत्मन् । ते अपर अपर जन्मतो रुदन करती  
मातालूना आसुना जलनु प्रमाण समुझना जलथी पण बधारे रे,  
ज नरए नेरइच्छा, डुहाइ पावति धोरणताइ ॥

तत्तो अणांतगुणिच्छा, निगोद्रमझे डुह होइ ॥४९॥

शब्दार्थ-नरकमा नारकी जीवो जे धोर अनत झ.ख पा  
मे रे, तेनाथो अनतगणु डुख निगोदमा रे. ॥ ४९ ॥  
तमिवि निगोद्रमझे, वसिति रेजीव विविहकम्मवसा ॥  
विसहतो तिखडुह, अणातपुग्गलपरावते ॥ ५० ॥

शब्दार्थ-अरे जीव ! विविध कर्मना वद्यथी ते निगोदनी  
मध्ये पण तु तोद्धण दुखने सहन करतो वतो अनत पुग्गलप  
रावर्ज काल सुधी वद्यो रे. ॥ ५० ॥

नीहस्त्रि कहवि तत्तो, पत्तो मणुअत्तणपि रेजीव ॥  
तड्विजिणवरधम्मो, पत्तो चितामणिसरिन्हो ॥

शब्दार्थ-अरे जीव ! महा कटे करीने >  
लो तु मनुप्य पणाने पाम्यो रे अने तेमा पण  
सरखा जिनेश्वरना घर्मने पाम्यो रे ॥ ५१ ॥

पत्तेवि तंमि रेजीव, कुणसि पमायं तयं तुमं चेव ॥  
जेणं नवंधकूवे, पुणोवि पमितु उहं लहसि ॥ ५७ ॥

**शब्दार्थ—**अरे जीव ! ते जिनेश्वर धर्म प्राप्त थया भता प  
ए तुं जेनाथी फरीने पण संसाररूप कूवामां पमीने दुख पमाय  
एवा प्रमादने करे भे. ॥ ५७ ॥

उवलघ्नो जिणधम्मो, न य अणुविन्नो पमायदोसेण ॥  
हा जोव अप्पवेरि अ, सुबहुं परञ्ज विसूरहिसि ॥ ५८ ॥

**शब्दार्थ—**हे जीव ! तने जिनेश्वरनो धर्म प्राप्त थयो; पण  
ते प्रमादना दोषथी तेने सेव्यो नहि; जेथी हे आत्मवैरो ! तुं  
आगल बहुज खेद करीङ. ॥ ५८ ॥

सोअंति ते वराया, पडा समुविठ्ठिअंमि मरणंमि ॥

पावपमायवसेण, न संचिन्ज जेहिं जिणधम्मो ॥ ५९ ॥

**शब्दार्थ—**जेमणे पापरूप प्रमादना वद्यथी जिनधर्म नथी  
सेव्यो ते रांक पुरुषो मरण प्राप्त थये भते झोक करे भे. ५९

धी धी धी संसारं, देवो मरिङण जं तिरी होइ ॥

मरिङण रायराया, परिपच्छ निरयजालाए ॥ ६० ॥

**शब्दार्थ—**आ संसारनेज धिक्कारभे ! धिक्कारभे !! धिक्कार  
भे !!! कारणके, देवता मरीने तिर्यंच थाय भे अने चक्रवर्ती मरी  
ने नरकनी ज्वालामां पचाय भे. ॥ ६० ॥

जाइ अणाहो जीवो, दुमस्स पुण्कंव कम्मवायहउ ॥

धनधन्नाहरणाइ, घरसयणकुडुंब मिट्हेवि ॥ ६१ ॥

**शब्दार्थ—**अनाथ जीव धन, धान्य, आज्ञरण, घर, स्वजन  
अने कुटुंबने त्यजीने कर्मरूप वायुथी हणायो भतो वृक्षनां पुष्पनी  
वे भे नीचे पके भे. ( नीची गति पामे भे. ) ॥ ६१ ॥

वसिञ्चं गिरीसु वसिञ्चं, दरोसु वसिञ्चं समुद्रमञ्जमि ॥  
रुक्मगेसु अ वसिञ्च, ससारे संसरंताणं ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ—हे आत्मन् ! ससारने विषे नमता एवा ते पर्वतो उपर,  
गुफामा, समुद्रमा अने बृहोना अग्रज्ञागने विषे निवास करयो रे.  
देवो नेरझु त्ति य, कीम पयगु त्ति माणसो एसो ॥  
रूबरसी य विरुवो, सुहनागी झर्कनागो य ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तु केटखीक वखत देवता, नारकी, कीडो,  
पतग अने मनुष्य थयो रे खी तेनो तेज तु केटखीक वखत रु  
पवत, कुरूपवत, सुखी अने डुखी थयो रे ॥ ५९ ॥  
राजति अ डुमगुत्तिअ, एस सपागुत्ति एस वेत्रविक ॥  
सामी दासो पुङ्गो, खद्वुत्ति अधणो धणव इति ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ—एज तु केटखी वखत राजा, जीखारी, चंकाल,  
ब्राह्मण, स्वामी, दास, पूज्य, खद्व, निर्धन अने धनवत थयो रे.  
नविअ चिकोइनियमो, सकम्मविणिविठसरिसकयचिघो  
अन्नुभरूववेसो, नडुघ परिअत्तए जीवो ॥ ६० ॥

शब्दार्थ—ए पूर्वे कहेखामा कोइ जातनो नियम नथी कार  
एके, पोते पोताना कर्मनी रचना प्रमाणे चेष्टा करनारो जीव न  
टनो पेरे जूदा जूदा रूप लझने फस्या करे रे ॥ ६१ ॥

नरएसु वेयणाउ, अणोवमाउ असायवहुलाउ ॥

रे जीव तए पता, अणतखुतो वहुविहाउ ॥ ६२ ॥

शब्दार्थ—अरे जीव ! ते नरकमा उपमा रहित अने अज्ञा  
ता वेदनावाली वहु प्रकारनी वेदनाउ अनतीवार प्राप्त करी रे  
देवते मणुअत्ते, पराजितगत्तण उवगणा ॥  
जीसणउहं वहुविह, अणतखुतो समणुज्ञूअ ६३

शब्दार्थ—हे जीव ! तें देवपणामां, मनुष्यपणामां परतंत्र पणाने पामवावडे वहु प्रकारनुं ज्ञयंकर दुख अनंतीवार अनुज्ञव्युं डे. तिरिग्रिगङ्ग अणुपत्तो, ज्ञीममहावेअणा अणेगविहा ॥ जन्मणामरणारहदै, अणंतखुत्तो परिप्रमित ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तीर्यंच गतिने पामेलो तुं अनेक प्रकारनी ज्ञयंकर वेदनावाला जन्म मरण रूप रेहेटमां अनंतीवार जन्म्योदुं जावंति केवि डुख्का, सारीरा माणसा व संसारे ॥ पत्तो अणंतखुत्तो, जीवो संसारकंतारे ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ—संसारमां शरीरसंबंधी अने मनसंबंधी जेटलां कोइ दुखो डे ते सर्वे आ संसाररूप अरण्यमां ज्ञमतो एवो जीव अनंतीवार पाम्यो डे. ॥ ६४ ॥

तएहा अणंतखुत्तो, संसारे तारिसी तुमं आसी ॥  
जं पसमेजं सघो—दहीणमुदयं न तीरिज्ञा ॥ ६५ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तने तेवा प्रकारनी (तृष्णा) तृष्णा संसार ने विषे अनंतीवार यह डे के, जे तृष्णाने शमाववा माटे सर्वे समुद्रेनुं पाणी ( तेटलुं धन ) पण समर्थ न थाये. ॥ ६५ ॥ आसी अणंतखुत्तो, संसारे ते ठुहावि तारिसीया ॥ जं पसमेजं सघो, पुग्गलकाउवि न तरिज्ञा ॥ ६६ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! वली तने संसारमां तेवी कुधा अनंती वार उत्पन्न यह डे के, जे कुधाने शमाववाने घृतादि पुग्गल समू हो पण समर्थ न थाय ॥ ६६ ॥

~~काऊण मणेगाइं, जन्मणामरणपरिग्रहणसयाइं ॥~~  
~~डुखेण माणुसत्तं, जइ खहइ जहिच्छिअं जीवो ॥ ६७ ॥~~  
शब्दार्थ—ज्यारे जीव अनेक एवा जन्म मरणना शेंकमो पराव

तने करीने दुःखथी मनुष्यज्ञव पामे त्यारे ते इच्छित सुख पामेवे.  
तं तह उद्घाहस्तन्न, विजुल्लयाचंचलं च मणुअत्तं ॥  
धर्ममंमि जो विसीअद्व, सो कान्तरिसो न सप्पुरिसो ६८

शब्दार्थ—जे पुरुष दशा हृष्टातथी दुर्घट्ज अने विजयीनो पे  
रे चचल एवा ते मनुष्य ज्ञवने पामीने धर्मने विषे खेद पामेवे,  
ते कायर पुरुष जाणवो पण सत्पुरुष न जाणवो ॥ ६८ ॥

( उपजाति वृत्तम् )

माणुस्सजम्मे तमि लाद्यंमि, जिणादधर्मो न कञ्च अ जेण  
तुहे गुणे जह धाणुकएण, हड्डा मलेवा य अवस्स तेण ६९

शब्दार्थ—जेणे मनुष्यजन्मरूप ससारसमुद्दनो कावो प्राप्त  
थया रता जिनेइ धर्म नथी कस्यो तेने जेम धनुष्यनो दोरी  
त्रुटो जवाथी धनुष्यधारो पुरुषने हाथ धसवा पमे वे तेम अ  
वश्य हाथ धसवा पके वे ॥ ६९ ॥

रेजीव निसुणि चचलसहाव, मिट्ठेविणु सयलवि वशज्ञाव  
नवज्ञेअपरिगहविलिहजाल, ससारि अत्रि सहइंदआल

शब्दार्थ—ग्रे जीव ! सान्नद तुं चचल स्वज्ञाववाला आ  
सर्व वाह्य ज्ञावोने अने नव ज्ञेदवाला परिग्रहना विविध समूह  
ने मूकीने पग्दोकमा जइशा, माटे ससारमा शरीरादि जे काइ  
देखाय ते सर्व इंजाल समान वे ॥ ७० ॥

पियपुत्तमितधरधरणिजाय,

इहलोइअ सब नियसुहसुहावे ॥

नविअत्रि कोइ तुह सरणि मुख,

इकलु सहसि तिरिनिरयड्रुक ॥ ७१ ॥

शब्दार्थ—हे मूर्ख ! आ लोक संबंधी सर्व पिता, माता, पुत्र

(१३४)

मित्र, घर अने स्त्री विगेरेनो समूह पोत पोताने सुख करवाना स्वज्ञाववालो रे; परंतु तिर्यच अने नरकनां दुःखने तो तुं एक लोज सहन करीश. ते वखते तेमानुं कोइ त्वारे शरण करवा योग्य नथी. ॥ ७१ ॥

( मागधिकावृत्तम् )

कुसग्गे जह उसबिंडुए, थोवं चिछइ लंबमाणए ॥  
एवं मणुआण जीविञ्च, समयं गोअम मा पमायए ७२

शब्दार्थ—जेम दर्जना अग्रज्ञाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंडु थोमो वखत रहे रे, तेम मनुष्यनुं जीवित पण थोमा वखतनुं रे, माटे हे गौतम! एक समय पण प्रमादी अद्वा नहि. ॥ ७२ ॥

संबुश्वह किं न बुश्वह, संबोही खलु पिच्च उद्धवा ॥  
नो हू उवणमंति राईउ, नो सुखहं पुणरवि जीवियं ७३

शब्दार्थ—हे ज्ञव्यजीवो ! बोध पामो, झा माटे बोध पा मतो नथी ? मृत्यु पास्या पठी परज्ञवमां बोधि उर्ध्वज्ञ रे. गये दां रात्री दिवस पाठा आवतां नथी. तेमज जीवित पण फरी मखवुं सुखज्ञ नथी ॥ ७३ ॥

महरा बुह्ना अ पासह, गप्पड्गावि चयंति माणवा ॥  
सेणे जह वट्यं हरे, एवं आजखयंमि तुहइ ॥ ७४ ॥

शब्दार्थ—वालक, वृद्ध अने गर्जमां रहेका माणसो मृत्यु पामे रे, तेने तुं जो. वली जेम सिंचाणो तेतरने मारेरे तेम आयुष्यनो क्षय थये जीवित त्रुटी जाय रे. ॥ ७४ ॥

( आर्यावृत्तम् . )

तिहुअणजणं मरंतं, दधूण नयंति जे न अप्पाणं ॥  
विरमंति न पाकान्त, धिधि धिद्वत्तणं ताणं ॥ ७५ ॥

शब्दार्थ—जे पुरुषो मृत्यु पामता एवा त्रण न्नुवनना माण सोने जोता रता पोताना आत्माने धर्मने विषे स्थापन करता नथी अने पापथी निवर्त्तता नथी, तेउना धिदपणाने धिकार ठे । धिकार ठे ॥ ७५ ॥

मा मा जंपह बहुअ, जे वद्वा चिकणेहि कम्मेहि ॥  
सद्वेसि तेसि जायड, हियोवएसो महादोसो ॥ ७६ ॥

शब्दार्थ—( अयोग्य शिष्योने उपदेश करता गुरुने जोइ योग्य शिष्य गुरुने कहे ठे के,) “हे गुरो! जे पुरुषो पोताना चि कणा कर्मधी वधायदा ठे, तेमने वहु उपदेश न करो, कारणके ते अयोग्य शिष्योने हितोपदेश महा दोपवालो आय ठे ॥ ७६ ॥ कुणसि ममत धणसय-ए विहवपमुहेसु अणतङ्गेसु ॥ सिद्धिलेसि आयर पुण, अणतसुरकंमि मुखमि ॥ ७७ ॥

शब्दार्थ—हे आत्मन् । तु अनत डुखना कारण एवा धन स्वजन अने लहमी विगरेमां ममता करे ठे अने वलो अनत सुखवाला मोकने विषे आदरने शिखित करे ठे ॥ ७७ ॥ ससारो डुहहेऊ, डुरकफलो डुससहदुरकरुवो अ ॥ न चयति तपि जीवा, अइवद्वा नेहनिअखेहि ॥ ७८ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! आ ससार डुखनु कारण, डुख ठे फल जेनु एवो अने डुसह दु खरूपज ठे स्नेहरूप वेमीथो वधायदा जीवो ते ससारने पण त्यजी देता नथी ॥ ७८ ॥ निअकम्मपवणचलिन, जीवो ससारकाणणे घोरे ॥ का का विम्बणाउ, न पावए डुसहडुरकाउ ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ—आ घोर ससाररूप अरण्यमा पोताना कर्मरूप पवनथो चचल एवो जीव ! जेनाथो डु सह डु ख उत्पन्न आय ठे

(१३७)

एवी कइ कइ वध वंधनादि विटंबना नथी पाम्यो ? अर्थात् स  
र्व पाम्यो डे. ॥ ७५ ॥

सिसिरंमि सीअलानिल-खहरिसहस्रेहिं निन्नघणदेहो  
तिरिअतणंमिरन्ने, अणंतसो निहणमणुपत्तो ॥ ७६ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं तिर्यच न्नवमां अरण्यने विषे शिया  
दामां शितल पवननी हजारो लहेरोथो नेदोयेला छठ देहवालो  
अज्ञने अनंतीवार मृत्यु पाम्यो डे. ॥७५॥

गिर्हायवसंततो, रन्ने गुहिति पिवासिति बहुसो ॥

संपत्तो तिरिअन्नवे, मरणादुहं बहु विसूरंतो ॥ ७७ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं तिर्यच न्नवमां अरण्यने विषे उनाला  
ना तापथो तप्त थयो डतो बहुवार न्नूख्यो तथा तरश्यो अज्ञने  
बहु खेद पामतो मृत्यु पाम्यो डे. ॥७६॥

वासासुरन्नमञ्जे, गिरिनिश्चरणोदगेहिं बञ्चंतो ॥

सीअनिलमविलि, मञ्जसि तिरिअतणे बहुसो ॥ ७८ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं तिर्यच न्नवमां चोमासाने विषे वनमां  
पर्वतोनां ऊरणानां पाणीथी खेंचाइने शितल पवनथी दग्ध थयो  
डतो बहुवार मृत्यु पाम्यो डे. ॥७७॥

एवं तिरिअन्नवेसु, कीसंतो डुरक्सयसहस्रेहिं ॥

वसिनु अणंतखुतो, जीवो न्नीसणन्नवारन्ने ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे तिर्यच न्नवमां झेंकडो डुःखोथी क्लेश  
पामतो जीव न्नयंकर संसाररूप अरण्यमां अनंतीवार वश्योडे.  
डुठठंकम्पपलथा-निलपेरिति न्नीसणंमि न्नवरन्ने ॥  
हिंमंतो नरएमुवि, अणंतसो जीव पत्तोसि ॥ ८० ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! डुष्ट एवां आठ कर्मरूप प्रलयकालना प

वनथी प्रेरयेको तुं नयकर ससाररूप अरएयमा चालतो उतो न  
रुने विपे पण अनतीवार डुख पान्यो रे ॥७४॥

सत्तसु नरयमहीसु, वज्ञानलदाहसीअविअणासु ॥  
वसिउ अणांतखुतो, विलवंतो करुणसद्वहिं ॥ ७५ ॥

शब्दार्थ-ह जीव' वज्ञानिनो दाह रे जेमा तथा अत्यंत  
शीत वेदना रे जेमा एवी सात नरक पृथ्वीमा तु करुण शब्दधी  
विलाप करतो उतो अनंतीवार वश्यो रे ॥७५॥

पियमायसयणरहित, दुरंतवाहिहि पीमिति वहुसो ॥  
मणुअन्नवे निस्सारे, विलाविति कि न तं सरसि ॥६

शब्दार्थ-अरे जीव' आ सार रहित मनुष्यन्नवमा पिता  
मातादि स्वजनयी रहित अने महा व्याधियी वहुवार पीडा पा  
मतो तथा विलाप करतो तु ते मनुष्य नवने शुनश्ची सज्जारतो?  
पवणुद्व गयणमग्गे, अलखिति नमइ नववणे जीवो ॥  
राणवाणांमि समु-द्यिक्षण, धणसयणसंघाए ॥ ७६ ॥

शब्दार्थ-जीव आ ससाररूप वनमा रेकाए रेकाए धन  
स्वजनना समूहने त्यजी इ आकाशमा पवननी पेरे अदृश्य  
थयो उतो नमै रे ॥७७॥

विद्विङ्किंता असय, जम्मजरामरणतिरक्कुतेहि ॥

उहमणुहवति धोर, संसारे ससरत जीछ्या ॥७८॥  
तहवि खणांपि कयावि हु, अन्नासन्नुयंगमंकिच्छा जीवा  
संसारचारणाउ, नयउ विज्ञति मूढमणा ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ-संसारमा नमता एवा जीवो जन्म, जरा अने म  
रणरूप तोदण ज्ञालाथो निरतर विधाया उता धोर डुखने अ  
नुज्जवे रे तो पण मूढ मनवाला अने अज्ञानरूप नुजगयी फसा  
यला जीवो क्यारे पण निव्रे ससाररूप वहीखानामायो कणमात्र

उद्वेग पामता नथी ॥ ४७-४८ ॥

कीखसि किअंतवेख, सरीरवावीइ जड़ पइसमय ॥  
काखरहटघमीहिं, सोसिङ्गइ जीविअंनोह ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं शरीररूपी वाव्यने विषे केटली वखत  
सुधी क्रीडा करीश ? के, जे वाव्यमां समये समये काखरूप रहे  
ठनी घमीयोथी जीवितरूप पाणीनो प्रवाह सूकाइ जायरे.

रे जीव बुद्ध मा मुद्ध, मा पमायं करेसि रे पाव ॥

किं परखाए गुरुदुरुक-ज्ञायणं होहिसि अयाण ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ—अरे जीव ! तुं बोध पाम. मोह न पाम. अरे पाप!  
तुं धर्ममां प्रमाद न कर अरे अज्ञान ! तुं परखोकमां महा उःख  
नो पात्र केम आय रे ? ॥ ४९ ॥

बुद्धसु रे जीव तुमं, मा मुद्धसु जिणमयंमि नाऊण ॥

जह्ना पुणरवि एसा, सामग्गी दुख्नहा जीव ॥ ५० ॥

शब्दार्थ—अरे जीव ! तुं बोध पाम अने धर्मस्वरूप जाणीने  
जिनमतमां मोह न पाम. अरे जीव ! कारण के, फरीथी आ सा  
मग्री मतवी उर्ध्वज्ञ रे. ॥ ५० ॥

दुखहो पुण जिणाधस्मो, तुमं पमायायरो सुहेसी य ॥

दुसहं च नरयदुरुकं, कह होहिसि तं न याणामो ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ—जिनधर्म फरीथी मतवो उर्ध्वज्ञ रे. तेम तुं प्रमा  
दनो खाण अने सुखनी इडा करनारो रे. वली नरक उःख उः  
सह रे, माटे हुं नथी जाणतो के, परखोकमां तुं केम यश, अ  
र्थात् त्वारी शी गति थशे ? ॥ ५१ ॥

अथिरेण थिरो समखे-ए, निम्मखो परवसेण साहीणो ॥  
देहेण जइ विठ्ठपइ, धम्मोता किं न पञ्चतं ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ—जो अस्थिर, मतिन अने परस्वाधिन एवा देहथी

स्थिर, निर्मल अने स्वाधिन एवो धर्म मेलवी शकाय तो पठी  
गुं प्राप्त करयु न कहेवाय ? ॥४४॥

जह चितामणिरयण, सुखह न हु होइ तुव्वविहवाण ॥  
गुणविहववज्जिआण, जिआण तह धम्नरयणंपि ॥४५

**शब्दार्थ-**अछप पुण्यवालाने जेम चितामणि रत्न सुखन्न नज  
होय तेम गुणविज्ञव रहित जीवोने धर्मरत्न पण सुखन्न न होय  
जह दिघीसंजोगो, न होइ जब्बधयाण जीवाण ॥  
तह जिणमयसंजोगो, न होइ मिन्नधजीवाण ॥ ४६ ॥

**शब्दार्थ-**जेम जन्माध जीवोने आखोथी देखवु थतु नथी  
तेम मिथ्यात्वथी आधला जीवोने जिनमतनो सयोग थतो नथी  
पञ्चखमणंतगुणे, जिणंदधम्ने न दोसखेसोवि ॥

तहवि हु अन्नाणधा, न रमांति कयावि तमि जिआ ॥४७॥

**शब्दार्थ-**प्रत्यक्ष एवा अनतगुणवाला जिनराजना धर्मने  
विषे दोपनो लेश मात्र नथी तोपण अङ्गानथी आधला जीवो  
निअे ते धर्मने विषे क्यारे पण रमता नथी ॥४७॥  
मिन्ने अणतदोसा, पयमा दीसति नवि य गुणलेसो ॥  
तहवि य त चेव जिया, हा मोहंधा निसेवंति ॥ ४८ ॥

**शब्दार्थ-**मिथ्यात्वथी प्रगट अनत दोपो देखाय रे अने  
गुणलेश देखातो नथी तोपण मोहथी आधला जीवो ते मिथ्या  
त्वनेज सेवे रे ए घणु आश्र्वय रे ॥४८॥

धि धी ताण नराण, विन्नाणे तह गुणेसु कुसखत ॥  
सुहसब्बधम्नरयणे, सुपरिस्कं जे न जाणंति ॥४९॥

**शब्दार्थ-**सुखरूप अने सत्यरूप धर्मरत्नने विषे जे पुरुषो  
उत्तम परीक्षा नथी जाणता, ते पुरुषोना विज्ञानने विषे अने गु  
णने विषे कुशलपणाने धिक्कार थाउ ! धिक्कार थाउ ! ! ॥४९॥

(१३६)

( अनुष्टुप् वृत्तम् )

जिणधम्मोऽयं जीवाणं, अप्पुवो कप्पपायद्वो ॥

सग्गापवग्गसुखाणं, फलाणं दायगो इमो ॥ १०० ॥

शब्दार्थ—आ जिनधर्म जीवोने अपूर्व कछपवृक्ष रे, तेथी ए कछपवृक्ष स्वर्ग अने मोक्षनां सुखरूप फलोनो आपनार रे. १०० धम्मो बंधु सुमित्तो अ, धम्मो अ परमो गुरु ॥

मुखमग्ग पथदाणं, धम्मो परमसंदणो ॥ १०१ ॥

शब्दार्थ—धर्म एज बंधु अने उत्तम मित्र रे. वली धर्म उत्तम गुरु रे. तेमज धर्म मोक्ष मार्गमां प्रवृत्तेलाने उत्कृष्ट रथ समान रे. ॥१०१॥ ( आर्यवृत्तम् )

चतुर्गश्चाणंतद्भानल- पलितनवकाणणे महाज्ञीमे॥

सेविसु रे जीव तुमं, जिणवयणं अमियकुंमसमं १०२

शब्दार्थ—अरे जीव ! महा ज्ञयंकर अने चार गतिना अनंत छःखरूप अग्निथी सखगता संसाररूप वनमां अमृतनां कुंड स मान जिनराजनां वचनने सेवन करय. ॥१०२॥

विसमे नवमरुदेसे, आणंत दुह गिम्हतावसंतते ॥

जिणधम्मकप्परुखं, सरसु तुमं जोव सिवसुहदं १०३

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं विषम अने अनंतां छःखरूप उनाला ना तापथी तप एवा मरुदेशमां मोक्षसुख आपनारा जिनधर्म रूप कछपवृक्षनुं सेवन कर. ॥१०३॥

किं बहुणा जिण धम्मे, जइअवं जह ज्ञवोदहिं घोरं ॥

बहुतरियमणंतसुहं, लहइ जिज सासयं गाणं १०४

शब्दार्थ—हे आत्मन ! वहु कहेवाथी शु ? परंतु त्वारे जिन धर्मने विषे ते प्रकारे यत्न करवोके, जेथी जीव ज्ञयानक एवा सं साररूप समुद्देश ऊट तरीने अनंत सुखवाला मोक्षस्थानने पामे.

॥ इति वैराग्यशतक समाप्तम् ॥

॥ अथ अभव्य कुलकम् ॥

जह अन्नविय जीवेहि, न फासिया एवमाइया ज्ञावा ॥  
इदत्तमणुत्तरसुर, सिद्धायनर नारयत्तं च ॥ १ ॥

शब्दार्थ—अन्नव्य जीवोए आ हवे पठी कहेवामा आवशे  
ते ज्ञावो स्पर्शा नथो ते इपणुं, अनुन्नरवासी देवपण, व्रेसर  
शलाका पुरुषपणुं अने नव नारदपणु ॥ १ ॥

केवलिगणदरहचे, पवज्ञा तिर्त्वह्नर दाणं ॥

पवयणसुरी सुरत्तं, लोगतिय देवसामित्त ॥ २ ॥

शब्दार्थ—वलो केवली तथा गणधरना हाथे दीक्षा, तीर्थंक  
रनु वार्षिक दान, प्रवचननो अधिष्ठायक देवी तथा देवपण, लो  
कातिक देवपणु अने देवपतिपणु न पामे ॥ २ ॥

तायत्तीससुरत्त, परमाहम्मिय जुयदमणुअत्तं ॥

सञ्जिन्नसोय तह, पुब्धराहारयपुलायत्तं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—त्रायन्त्रिशकदेवपणु, पदर जातिना परमावामी  
पणु युगलिया मनुष्यपणु, वली सञ्जिन्न श्रोत लव्धि, पूर्वधरख  
व्धि, आहारकलव्धि अने पुलाकलव्धिपणु पण न पामे ॥ ३ ॥

मणनाणाई सुखद्वी, सुपत्तदाण समाहिमरणत्त ॥

चारणद्वगमहुसिप्पय, खीरासव खीरठाणत्त ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननी लव्धि, सुपात्रदान,  
समाधि मरण, विद्याचारण अने जंघाचारणनी लव्धि मधुसर्पिं  
लव्धि किराश्रव लव्धि, किर स्थानकी लव्धि पण न पामे ॥ ४ ॥  
तिर्त्यर तिर्त्यपमिमा, तणुपरिज्ञोगाइ कारणेवि पुणो  
पुढवाइय ज्ञावमि वि, अन्नवजीवेहिं नो पत्त ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—तीर्थंकर तथा तीर्थंकरनी प्रतिमा, वली शरीरना

परिज्ञोगादि कारणमां न पामे. तेमज अन्नव्य जीवो पृथ्वीकाया  
ना ज्ञावोने विषे पण न पास थाय ॥ ५ ॥

बउदसरयणत्तंपि, पत्तं न पुणो विमाणसामित्रं ॥

सम्मत्तनाणं संयम, तवाइ ज्ञावा न ज्ञावडुगे ॥ ६ ॥

**शब्दार्थ-**चौद रत्नपणुं अने वली विमाननुं स्वामीपणुं न  
पामे. वली सम्यक्क, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, अने तपादि बाह्यान्यंतर  
ए वे ज्ञाव पण न पामे. ॥ ६ ॥

अणु ज्ञवजुत्ता नत्तो, जिणाणसाहम्मियाणु वह्लं ॥

न य साहेइ अन्नवो, संविगत्तं न मुष्परकं ॥ ७ ॥

**शब्दार्थ-**अन्नव्य जीव अनुज्ञव युक्त जक्कि, जिनेश्वरनी  
आङ्गा प्रमाणे साधार्मिनी सेवा जक्कि, संसारथो वैराग्यपणुं तेम  
ज उत्तम पक्ष न पामे. ॥ ७ ॥

जिणाजणयजणणिजाया, जिणाजखाजखणीजुगपहाणा  
आयरियपयाइदसगं, परमडगुणहृमप्पत्तं ॥ ८ ॥

**शब्दार्थ-**जिनेश्वरना माता, पिता, स्त्री, जक्ष, जक्षणी अने  
युगप्रधान पण न आय. वली आचार्यादि दश पदनो विनय ते  
मज परमार्थथी अधिकगुणवंतपणुं न पामे. ॥ ८ ॥

अणु बंधहेऊसरूवा, तड आहिंसा तिहा जिणुदिहा ॥  
देवेण य ज्ञावेण य, डुहावि तेसिं न संपत्ता ॥ ९ ॥

**शब्दार्थ-**वली अन्नव्य जीव अनुबंध, हेतु अने स्वरूप ए  
वी त्रण प्रकारे श्री जिनेश्वरे रहेली अहिंसा इव्य अने ज्ञाव ए  
वा वे ज्ञेदथी न पामे. ॥ ९ ॥

॥ इति अन्नव्यकुलकम् ॥

॥ अथ पुण्यकुलकम् ॥

संपुत्रेऽदियत्तं, माणुसत्त च आयरिपस्ति ॥

जाद्कुलजिणधम्मो, खप्रति पञ्जूयपुन्नेहि ॥ १ ॥

शब्दार्थ-घणा पुण्यना उदयथी पाचे इदियनु अखडितपणु, मनुष्यपणुं, आर्यकृत्र, जाति, कुल अने जिनधर्मं प्राप्त थाय रे.

जिणचलणकमलसेवा, सुगुरुपायपञ्जवासणं चेव ॥

सज्ञाय वायवमृत, खप्रति पञ्जूयपुन्नेहि ॥ २ ॥

शब्दार्थ-घणा पुण्यना उदयथी जिनराजना चरणकमल नी सेवा, सुगुरुना चरणनी सेवा, वाचनादि पाच प्रकारनी स जाय अने माठा वादने जीतवापणु प्राप्त थाय रे ॥ ३ ॥

सुधो बुहो सुगुरुहि, सगमो उवसमं दयालुत्त ॥

दाखिन्न करणजो, खप्रति पञ्जूयपुन्नेहि ॥ ३ ॥

शब्दार्थ-घणा पुण्यना उदयथी शुद्धवोधो वीजनुं पामवु सुगुरुनी साथे समागम, शातपणु, दाक्षिण्यपणुं अने कहणा प्राप्त थाय रे

समतं निश्चलंतं, वणाय परिपालणं अमायत्त ॥

पढणं गुणण विणुउ, खप्रति पञ्जूयपुन्नेहि ॥ ४ ॥

शब्दार्थ-घणा पुण्यना उदयथी निश्चल समकीत, वचननु पालवु, कपट रद्धितपणु, नणवु, गणवु अने गुरुविगेरेनो जिनय करवो विगेरे प्राप्त थाय रे ॥ ४ ॥

उसगो उववाय, नित्रह विवहारमि निभणत्त ॥

मणवयणकायसुधी, खप्रति पञ्जूयपुन्नेहिं ॥ ५ ॥

शब्दार्थ-घणा पुण्यना उदयथी उत्सर्ग, अपवाद, निश्चय अने व्यवहारमा निपुणपणु वलो मन, वचन अने कायानी शुद्धि प्राप्त थाय रे ॥ ५ ॥

अवियारं तारुन्नं, जिणाणं राउ परोवियारत्तं ॥

निकंपयाय श्राणे, लघ्रंति पञ्चयपुन्नेहिं ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी अविकारी युवावस्था जिन आ-  
झामां राग, परोपकारपणुं, धर्मध्यानमां निश्चलपणुं प्राप्त आय रे.

परनिंदापरिहारो, अप्पसंसा अत्तणे गुणाणं च ॥

संवेगो निवेगो, लघ्रंति पञ्चयपुन्नेहिं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी परनिंदानो त्याग, पोतानी  
अप्रसंसा अने पोताना गुणना अवखाण, संसारथी वैराग्य अने  
संसारथी निकलवानी इच्छा प्राप्त आय रे. ॥ ७ ॥

निम्मलसीलाप्नासो, दाणुद्वासो विवेग संवासो ॥

चलगद्गुहसंत्तासो, लघ्रंति पञ्चयपुन्नेहिं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी निर्मल शीलनुं पालवुं,  
दान आपवामां उद्घास, हिताहितना विवेकनुं समीपपणुं अने  
चार गतिनां दुःखना त्रासनुं जाणपणुं होय रे. ॥ ८ ॥

उक्तगरिहा सुकमा—णुमोयणं पायद्वित तवचरणं ॥

सुहश्माण नमुक्तारो, लघ्रंति पञ्चयपुन्नेहिं ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी मार्गं कृत्यनी निंदा, सा  
रां कृत्यनी अनुमोदना, खोटा कृत्यनुं प्रायश्चित्त लेवुं, तप करवुं,  
शुन्न ध्यान करवुं अने नमस्कार करवो. ए सर्व प्राप्त आय रे.

इयगुणमणिन्नंमारो, सामग्गी पावीजण जेण करे ॥

विद्वन्मोहपासा, लहंति ते सासयसुखं ॥ १० ॥

शब्दार्थ—आ उपर रहेदा गुणरूप मणिना झंडाररूप सा  
मग्री पामोने जेणे ते प्रमाणे आचरण कर्खुं रे ते, मोहना पासने  
तोडो नाखी साश्वतां सुखने पामे रे॥१०॥इति पुण्यकुलकम् ॥

॥ अथ पुण्यपाप कुलकम् ॥

ठत्तीसदिनसहस्रा, वाससये होइ आउपरिमाणं ॥  
जिप्प्रिंतं पर्देसमयं, पिच्छु धर्मांमि जइथ्रवं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—सो वर्षना बत्रीस हजार दिवस, आयुष्यनु एट्टु परिमाण होय रे ते समये समये लंबु थरु जाय रे, एम जालीने धर्ममा यत्न करवो ॥ १ ॥

जइ पोसहस्रीति, तवनियमगुणेहि गमइ एकदिणं ॥  
ता वधइ देवाउ, इत्तियमित्ताइ पलियाइ ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जो कोइ जीव पोपह सहित तप नियमना गुणो थी एक दिवस गमावे तो ते आगल कहेशो तेटला पछ्योपमनु देवतानु आयुष्य वाधे रे ॥ २ ॥

सगवीसं कोमीसया, सतहत्तरी कोमिखरक सहस्रा य ॥  
सत्तसया सतहुतरि, नवज्ञागा सतपलियस्स ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—सत्तावीस सो क्रोम, सीत्योतेर क्रोम, सीत्योतेर लाख सीत्योतेर हजार, सातसोने सीत्योतेर एटला पछ्योपम अने वलो एक पछ्योपमनो सातमो ज्ञाग ॥ ३ ॥

अघासीई सहस्रा, वाससये दुन्नि खरक पहराणं ॥  
एगोवि अ जइ पहरो, धर्मजुडता इमो लाहो ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—एक सो वर्षना वे लाख अने अघासी हजार पहोर रे तेमाथी जो कोइ जीव एक पण पहोर धर्म युक्त ( पोसह वृत्त युक्त ) आय तो तेने आगल कहेशो एटलो लाज्ज थाय रे । ४। तिसयसगं चत्तकोमि, खरका वावीस सहस वावीसा ॥  
इसय छुवीस छुज्ञागा, सुराउबंधो य इगपहरे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—त्रेसो सन्ताली क्रोम, वावीस लाख, वावीस

हजार, बसो अने बावीस, बली उपर वे ज्ञाग. वर्षमां एक पहोर पोषह करनारने देवतानां आयुष्यनो एटलो बंध थाय रे. ॥ ५ ॥ दस लख असीय सहसा, महुत्संखाय होइ वाससए ॥ जइ सामाइअसहित, एगोविअत्ता इमो लाहो ॥ ६ ॥

**शब्दार्थ—**सो वर्षनां मुहूर्त (वे धर्मीयो) दस लाख अने ऐसी हजार थाय रे. जे जीव ए एक मुहूर्त सामायिक लहे तो तेने आगली गाथामां कहेशो तेटलो लाज्ज थाय रे. ॥ ६ ॥

बाणवयकोमीउ, लखा गुणसहि सहस्रस पणवीसं ॥  
नवसयपणवीस जूच्चा, सतिहा अमज्जाग पछियस्स पु

**शब्दार्थ—**बाणुं कोड, उगणसाठ लाख, पच्चीस हजार न वसो पच्चीस अने उपर एक पछ्योपमना आवीया सात ज्ञाग; ए ट्युं देवगतिनुं आयुष्य वेघमी सामायक करनार जीव वांधे रे. वाससये घमिअराण, लखिगवीसं सहस्रस तह सष्ठी ॥ एगावि अ धम्मजूच्चा, जइ ता लाहो इमो होइ ॥ ७ ॥

**शब्दार्थ—**एक वर्षनी धर्मीयो एकवीश लाख अने साठ हजार थाय, तेमांथी एक घडी पण जो जीव धर्म युक्त होय तो तेने आगली गाथामां रहेशो तेटलो लाज्ज थाय रे. ॥ ७ ॥ भायाखकोडी गुणती-स लख भासघी सहस्रस सयनवगं ते सष्ठी किंच्चूणा, सुराउ बंधोइ इगघमिए ॥ ८ ॥

**शब्दार्थ—**एक धर्मी धर्म करनार जीव भेतालीश क्रौम, उगणत्रीस लाख. भासठ हजार, नवसो अने कांइक उगा एवा त्रेसठ एटला पछ्योपमनुं आयुष्य वांधे. ॥ ८ ॥ सष्ठी अहोरत्तेण, धर्मीअआउ जस्स जंति पुरिसस्स ॥ नियमेणवि रहीअआउ, सो दिअहञ्च निष्फल्लो तस्स १०

शब्दार्थ—एक दिवसनी साठना प्रमाणे जे पुरुषनी घरीयो  
जायें रे तेमा वत नियमथी पण रहित जाय ते दिवस तेनो  
निष्फल जाणवो ॥ १० ॥

चत्तारीच्च कोमिसया, कोमीउ सत्तलरक अमयाला ॥  
चालीस च सहस्रा, वाससय हुती ऊसासा ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—एक सो वर्षना चारसो ने सात क्रोम, अन्ताली  
स लाख, चालीस हजार एटला श्वासोश्वास आय रे ॥ १२ ॥

इकोवि अ ऊसासो, न य रहिउ होइ पुण्यपावोहि ॥  
जइ पुण्या सहिन, एगोविअ ता इमो लाहो ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—तेमाथी एक पण श्वासोश्वास पुण्य पाप रहित  
होय नहि, परतु कोइ जीव जो एक श्वासोश्वास पुण्य सहित  
होय तो तेने आगदो गाथामा कहेशे तेटलो लाज थाय रे १४  
लरक छुग सहस पणचत्तं, चउसया अष्ट चेव पलियाइ ॥  
किंचूणा चउज्जागा, सुराउ वधो इगुसासे ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—वे लाख, पोस्तालीस हजार, चारसो अने आर  
पठ्योपम वली काइरु लंग चार ज्ञाग, एटलु देवतानु आयुष्य  
एक श्वासोश्वास धर्म करनारो पामे ॥ १६ ॥

एगुणवीस लरका, तेसष्ठी सहस्र डुसय सत्तष्ठी ॥

पलियाइ देवाउ, वधइ नवकार उस्सगो ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—लंगणीस लाख, त्रेसठ हजार वसो ने अमसर,  
एटला पठ्योपमनु देवायु नवकार गणनारो अथवा आर श्वासो  
श्वास धर्म सेवनारो पामे ॥ १८ ॥

लस्किगसष्ठी पणती—स सहस डुसय दसपलिय देवाउं ॥  
बधई अहिय जीवो, पणवीसुसास उस्सगो ॥ १९ ॥

(१४४)

**शब्दार्थ**—एकसठ लाख, पांत्रीस हजार, वसो ने इशा पृथ्योपमनुं देवतानुं आयुष्य पञ्चीस श्वासोश्वास अथवा एक लोगसनो काउस्सग्ग करनार जीव बंधे. ॥ १५ ॥

पार्वई पारायाणं, हवेन्ति निरयात् अस्स बंधोवि ॥  
इच्छ नाति सिरि जिण किति-अंमि धम्मंमि उञ्जमं कुणह॥

**शब्दार्थ**—हे नव्य जीवो ! पाप करनाराने ए प्रमाणे नर कनो बंध पण होय भे. एम जाणीने श्री जिनेश्वरे कहेला धर्म ने विषे उद्यम करो. ॥ १६ ॥

॥ इति पुण्य पाप कुलकम् ॥

### ॥ अथ गौतमकुलकम् ॥

लुक्ष्मा नरा अडपरा हवंति, मूढा नरा कामपरा हवंति ॥  
बुद्धानरा खंतिपरा हवंति, मिस्सा नरा तिन्निविआयरंति

**शब्दार्थ**—खोजीया पुरुषो धन मेलववाने तत्पर होय भे, मूर्ख पुरुषो कामने विषे तत्पर होय भे, पंडित पुरुषो कमांमां तत्पर होय भे अने मिश्रं पुरुषो पूर्वे कहेला त्रणने पण आचरे भे. ते पंक्तिया जे विरया विरोहे, ते साहुणो जे समयं चरंति ॥ ते सत्तिणो जे न चयंति धम्मं, ते बंधवा जे वसणे हवंतिष्ठ ॥

**शब्दार्थ**—जे विरोधयी निवर्त्या ते पंडित, जे आगम प्रमाणे चाले ते साधु, जे धर्मने न त्यजे ते शक्तिवंत अने जे झुःख मां सहाय करे ते बंधवो जाणवा. ॥ २ ॥

कोहान्निन्नूया न सुहं लहंति, माणंसीणो सोयपरा हवंति  
मायाविणो हुंति परस्स पेसा, लुक्ष्मा महिन्ना नरयं नविंति

शब्दार्थ—क्रोधयी पराज्ञव पामेला माणसो सुख न पामे, अन्निमानी माणसो शोकवत थाय, मायावी माणसो बीजाना चा कर थाय अने लोज्जी तथा म्होटी इडा करनारा नरक पामे॥३॥ कोहो विसकिअमय अहिसा, माणो अरीकिहियमप्पमाझ माया नयं किसरण तुसञ्च, लोहो उहो कि सुहमाह तुषी

शब्दार्थ—प्र० विष शुं ? उ० क्रोध, प्र० अमृत शुं ? उ० अहिंसा, प्र० शत्रु कोण ? उ० मान, प्र० हित शुं ? उ० अप्र माद, प्र० नय शुं ? उ० माया, प्र० शरण करवा योग्य शुं ? उ० सत्य, प्र० डुख शुं ? उ० लोज्ज, प्र० सुख शुं ? उ० सतोप बुद्धिअचमनयए विणीयं, कुद्ध कुशीलं नयए अकित्ति॥ सञ्जिनचित्त नयए अलड्डी, सञ्चेषीयं सन्नयए सिरियथ्

शब्दार्थ—बुद्धि विनयवतने सेवे रे, क्रोधी तथा कुशील ने अकोर्ति सेवे रे, नम चिन्नवालाने अलङ्कमी (निर्धनपण) सेवे रे अने सत्यमा रहेलाने सर्व प्रकारे लङ्कमी सेवे रे ॥५॥ चयति मित्ताणि नरं कयघ्यं, चयति पावाइ मुणि जयत॥ चयति सुकाणि सराणि हसा, चएइ बुद्धी कुविय मणुस्स

शब्दार्थ—कृतग्न माणसने मित्रो त्यजी दे रे, जितेद्विय मु निने पापो त्यजी दे रे, सूकाइ गयेला तलावने हसो त्यजी दे रे अने क्रोधवाला माणसने बुद्धि त्यजी दे रे ॥६॥

असपहारे कहिए विखावो, अईयअर्वे कहिए विखावो विस्कितचित्ते कहिए विखावो, वहुकुसोसे कहिए विखावो

शब्दार्थ—असावधानने धर्मादि कहेवु ते विलाप रे, गङ वातनु कहेवु ते विलाप रे, खेदचिन्नवालाने हित वचन कहेवु ते विलाप रे अने कुशिष्यने वहु कहेवु ए पण विलाप रे, ॥७॥

उद्धाहोवा दंडपरा हवंति, विजाहरा मंतपरा हवंति ॥  
सुखका नरा कोवपरा हवंति, सुसाहुणो तत्परा हवंति ।

**शब्दार्थ-**दुष्ट राजान् दंड करवामां तत्पर होय रे, विद्या वंत पुरुषो मंत्र साधनमां तत्पर होय रे, मूर्ख पुरुषो क्रोध क रवामां तत्पर होय रे अने उत्तम साधुन् तत्त्व ग्रहण करवामां तत्पर होय रे, ॥ ७ ॥

सोहाज्ञवे उग्गतवस्स खंती, समाहिजोगोपसमस्य सोहा॥  
नाणं सुजाणं चरणस्स सोहा, सिसस्स सोहा विणए पविति

**शब्दार्थ-**उग्र तपवालानी क्षमा शोज्ञारे, उपशमवालानी समाधिजोग शोज्ञा रे, चारित्रनी ज्ञान अने उत्तम ध्यान ए वे शोज्ञारे अने शिष्यनी विनयमां प्रवृत्ति ए शोज्ञा रे, ॥ ८ ॥  
अच्छूसणो सोहइ बंजयारी, अकिंचणो सोहइ दिकधारी बुद्धिजुञ्ज सोहइ रायमंती, लज्जाजुञ्ज सोहइ एगपति ।

**शब्दार्थ-**आज्ञूषण विना ब्रह्मचारी शोज्ञे रे, परिग्रह रहि त दीक्षाधारी शोज्ञे रे; बुद्धिवंत राजमंत्री शोज्ञे रे अने लज्जा वंत पुरुप एक स्त्रीयी शोज्ञे रे. ॥ ९ ॥

अप्पाअरीहोइअणवठियस्स, अप्पाजसोसीलमञ्जनरस्स  
अप्पाङ्गुरप्पाअणवठियस्स, अप्पाज अप्पासरणंगईय॥

**शब्दार्थ-**अशांत माणसने पोतानो आत्मा वैरी रे. शील वंत माणसनो आत्मा जस पामे रे, अशांत माणसनो आत्मा डुरा त्वा रे अने आत्माज आत्माने शरण करवा योग्य अने गतिरूपरे. न धर्मकङ्कं परमद्विकङ्कं, न पाणिहिंसा परमं अकङ्कं ॥  
न पेमरागां परमद्वि वंधो, न बोहिलाज्ञा परमद्वि लाज्ञो ।

**शब्दार्थ-**धर्म कार्य विना बीजुं उत्तम कार्य नथी, प्राणी हिंसा

(१४७)

विना वीजु अकार्य नथी, प्रेमराग विना' वीजो वंव नथी अने  
बोधिलाज्ज विना वीजो लाज्ज नथी ॥ १२ ॥

न सेवियद्वा पमया परका, न सेवियद्वा पुरिसा अविद्या ॥  
न सेवियद्वा अहिमानिहिणा, न सेवियद्वा पिसुणामणुस्सा ॥

शब्दार्थ—पारको स्त्री सेववी नहि, मूर्ख पुरुषाने सेववा न  
हि, अन्निमानी हिन माणसोने सेववा नहि अने चाडिया मा  
णसोने पण सेववा नहि ॥ १३ ॥

जे धम्मिया ते खलु सेवियद्वा, जे पंडिया ते खलु पुर्तियद्वा  
जे साहुणो ते अन्निवदियद्वा, जे निम्ममा ते पमिलान्नियद्वा

शब्दार्थ—जे धर्मी माणसो ठे ते सेववा योग्य ठे, जे पनि  
त पुरुषो ठे ते पूरवा योग्य ठे, जे साधुउ ठे ते वादवा योग्य ठे  
अने जे भमतारहित ठे ते पमिलान्नवा योग्य ठे ॥ १४ ॥

पुताय सीसाय सम विज्ञता, रिसी य देवाय सम विज्ञता ॥  
मुख्का तिरिखा यसम विज्ञता, मुआ दरिद्राय सम विज्ञता ॥

शब्दार्थ—पुत्र अने द्विष्टो सरखा जाणवा, मुनि अने देव  
ता सरखा जाणवा, मूर्ख अने तिर्यच सरखा जाणवा अने मू  
वेला तथा दरिङी सरखा जाणवा ॥ १५ ॥

सद्बाकला धम्मकला जिणाइ, सद्बाकहाधम्मकहाजिणाइ  
सद्ब वल धम्मवल जिणाइ, सद्ब सुहं धम्मसुहं जिणाइ ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—सर्वकलाने धर्मकला जीते, सर्व कथाने धर्मकथा  
जीते, सर्व वलने धर्मवल जीते अने सर्व सुखने धर्म सुख जीते ॥  
जूए पसत्तस्य धणुस्स नासो, मसं पसत्तस्य दयाइनासो ॥  
मङ्ग पसत्तस्य जसस्सनासो, वेसापसत्तस्य कुलस्स नासो

शब्दार्थ—जुवटामा आसक्त थपेलाना धननो नाश थाय ठे,

मांसमां आसक्त थयेला दयादिनो नाश आय रे, मध्यमां आसक्त थयेलाना कुलनो नाश आय रे. ॥१७॥

हिंसापसत्तस्य सुधम्मनासो, चोरीपसत्तस्य सरीरनासो ॥  
तहापरठिसुपसत्तयस्स, सद्वस्सनासोअहमा गई या॥१८॥

**शब्दार्थ—**हिंसामां आसक्त थयेलाना सारा धर्मनो नाश आय रे, चोरीमां आसक्त थयेलाना शरीरनो नाश आय रे. ते भज परखोआं आसक्त थयेला धन शरीरादि सर्वनो नाश अने अधम गति आय रे. ॥ १८ ॥

दाणं दरिद्रसपहम्स खंती, इडानिरोहोइ सुहोइ यस्स॥  
तारुण्ये इंदियनिर्गहो य, चत्तारि एथाणि सुदुकराणि॥१९॥

**शब्दार्थ—**दरिडीने दान आपवुं, श्रीमंतने कमा राखवी, इडाने रौकवी अने युवास्थामां इंदियोने वश्य राखवी. ए चार बहु झुष्कर रे. ॥ १९ ॥

असासयं जीवियमाहु खोए, धम्मं चेरे साहु जिणोवइं  
धम्मोयताणं सरणं गई य, धम्मं निसेवितुं सुहं लहंति ॥

**शब्दार्थ—**खोकमां जीवीत अझाश्वतुं कह्युं रे, माटे जिनेश्वरे कहेला उत्तम धर्मनुं आचरण करो. धर्म रक्षण कर्ता, शरण कर वा योग्य अने सारी गति आपनारो रे. ए धर्मने सैवीने साश्वतुं सुख पमाय रे. ॥ २० ॥

॥ इति श्री गौतम कुलक ॥

(१४४)

## ॥ अथ दान कुलकम् ॥

परिहरिय रज्जसारो, उप्पामियसंजमिक्षगुरुज्ञारो ॥  
खधात्र देवदूसं, वियरंतो जयत्र वीरजिणो ॥ १ ॥

शब्दार्थ—राज्यना सारने त्यजी देनारा, चास्त्रिल्प एक  
वह ज्ञारने उपामनारा अने खज्ञा उपरथी देवदूष्य वस्त्र विप्रने  
आपी देनारा श्री महावीर प्रज्ञु जयवत्ता वज्ञां ॥ १ ॥  
धम्मठकामन्नेया, तिविहं दाणं जयंमि विस्त्राय ॥  
तहविय जिणदमुणिणो, धम्मियदाणं पससति ॥ २ ॥

शब्दार्थ—धर्मदान, अर्थदान अने कामदान एवा ज्ञेवथी  
त्रण प्रकारनु दान जगत्मा विस्त्रात रे तो पण जिनेश्वरना  
मुनियो आहारादिक धार्मिक दानने वखाणे रे ॥ ३ ॥

दाणं सोहग्गकर, दाणं आरुग्गकारण परम ॥  
दाण ज्ञोगनिहाणं, दाण राण गुणगणाणं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—दान सौज्ञाग्य करनार रे, दान ब्रेट आरोग्यनुं का  
रण रे, दान ज्ञोगनु निधान रे अने दान गुणसमूहनु स्थानक रे  
दाणेण फुरझ कीति, दाणेण य होइ निम्मखा कंती ॥  
दाणावज्जिय हियत्र, वयरीवि हु पाणिय वहझ ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—दानथी कीतिं विस्तार पामे रे, दानथी निर्मल काति  
थाय रे, दानयुक्त हृदयवालात्रना शत्रुनु पण तेने धेर पाणी ज्ञे रे  
धणसञ्चवाहजम्मे, ज घयदाण कप सुसाहूण ॥  
तकारणमुसञ्जजिणो, तेलुक्कपियामहो जात्र ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—धन सार्ववाहना ज्ञवमा उत्तम साधुत्तेन जे धीनु  
दान करयु दत्तु ते पुसयना भारणयी कृपञ्जदेव प्रज्ञु त्रण लोकना  
पितामह (दादा) थया ॥ ५ ॥

करुणाइ दिन्नदाणं, जम्मतंरं गहियपुन्नकिरियाणं ॥  
तिढ्यरचक्करिञ्चि, संपत्तो संतिनाहोवि ॥ ६ ॥

**शब्दार्थ-**कृपाथो पारेवाने अज्ञयदान आपो पारबा नव  
माटे पुण्यरूप करीयाणांने खरीद करनारा शोलमा श्री शांति  
नाय तीर्थकर पण तीर्थकर अने चक्रवर्तीनी समृद्धिने पास्या ॥६॥  
पंचसयसाहुनोयण—दाणावज्जियसुपुन्नपञ्चारो ॥  
अहरियचरियन्नरिति, नरहो नरहाहिवो जाउ ॥७॥

**शब्दार्थ-**पांचसो साधुने जोजननां दानथी पुण्यनो स  
मूह मेलवनार अने आश्रयकारी चरित्रथो नरपूर एवो नरत  
चक्रवर्ती नरतकेत्रनो स्वामी थयो ॥ ७ ॥  
मुख्यं विणावि दाऊं, गिलाण पमिअरणजोगवड्डाणि ॥  
सिद्धो अ रयणकंबल—चंदण विणितवि तंमिन्नवे ॥८॥

**शब्दार्थ-**दान मुनिने वापरवा योग्य वस्तु रत्न कंबल अने वावनुं  
चंदन विना मूळ्ये आपीने श्रावक पण तेजन्नवमां सिद्धिवद पास्यो.  
दाऊण खीरदाणं, तवेण सुसिद्धंगसाहुणो धणिअं ॥  
जणजणियचमकारो, संजाऊ सालिन्नहोवि ॥ ९ ॥

**शब्दार्थ-**तपथो सूकवी नारख्युं डे झारीर जेमणे एवा सा  
धुने धन्यकारी खीरनुं दान आपी शालिन्नइ शोठ पण माणसोने  
आश्रय उत्पन्न करनारो थयो ॥ ९ ॥

जम्मतंरदाणाउ, उद्धसिया पुवकुसलज्ञाणाउ ॥

कयवन्नो कयपुन्नो, जोगाणं ज्ञायणं जाउ ॥१०॥

**शब्दार्थ-**पूर्व जन्मने विषे करेला सुपात्रदानना प्रज्ञावने  
लीघे उद्धास पामेला अपूर्व द्वुन्न ध्यानथी कृतपुण्य एवो कयव  
नो शोठ जोगोनुं पात्र थयो ॥ १० ॥

(१५१)

घयपूसवन्नपूसा, महरिसिणो दोसलेसपरिहीणा ॥  
खद्धीइ सयदागह्नो—वगगहगा सुगगइ पत्ता ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—घृतपुष्प तथा वस्त्रपुष्प एवे साधु दोषना के  
श रहित वता पोताना तपनी लव्विधी सर्वं गच्छनी घृत तथा  
वस्त्रधी जक्षि करी उत्तमं गति पाम्यो ॥ ११ ॥

जोवत्सामिपम्भिमा—इं सासण वियरिक्षण जत्तीज ॥  
पद्मईक्षण सिद्धो, उदाइणो चरमरायरिसी ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—श्री जीवंतस्वामीनी प्रतिमाने श्री वीरप्रज्ञना  
शासनमा जक्षिधी विचरीने पठी चारित्र लङ् उदायन नामनो  
वेखो राजपिं सिद्धि पदं पाम्यो ॥ १२ ॥

जिणहरमंदियवसुहा, दाण अनुकंपन्नतिदाणाइ ॥  
तिन्नपन्नावगरेहि, सपत्तो संपश्चाया ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—जिनमंदिरथी पृथ्वीने शोन्नावनारो सप्रति राजा  
अनुकंपादानं अने जक्षिवान आपीने तीर्थं प्रज्ञावकं पुरुषोमा  
रेखाने पाम्यो ॥ १३ ॥

दाऊं सक्षासुदे, सुदे कुम्भासए महामुण्डणो ॥

सिरिमूलदेवकुमारो, रज्जसिरि पाविजु गुरुइ ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—श्री मुलदेव कुमार शुद्ध अक्षाथी महामुनिने शुद्ध  
एवा अदृढना वाकदा आपीने म्होटी राज्य लक्ष्मी पाम्यो ॥ १४ ॥  
अद्वाणमुहरकविअण-विरइअसयसंखकववित्तिअं ॥  
विकमनरिद्वरिअ, अज्जवि लोए परिपुरइ ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—अतिदानथी वाचाल एवा कविलोकोए रचेखा झें  
कडो काव्योथी विस्तार पामेलु विकमराजानु चरित्र आज सु  
धी पण लोकमा विस्तार पामे रे ॥ १५ ॥

(१५७)

तिअखोअवंधवेहि, तप्रवचरिमेहि जिणवरिंदोहि ॥  
कयकिच्चेहिवि दिन्नं, संवठरियं महादाणं ॥ १६ ॥

**शब्दार्थ—**त्रण खोकना वंधु, तेज नवमां सिद्धि पामनारा अने  
कृतार्थ एवाय श्री जिनेश्वरे सांवत्सरिक महादान आप्यु ॥ १६ ॥  
सिरिसेयं सकुमारो, निस्सेयससामित्र कह न होई ॥  
फासूअदाणपवाहो, पयासित्र जेण नरहंमि ॥ १७ ॥

**शब्दार्थ—**श्री श्रेयांसकुमार मोहनो स्वामी केम न होय ? का  
रणके, जेणे आ नरतकेत्रमां प्रासुकदाननो प्रवाह प्रकाश कर्खो.  
कह सा न पसंसिङ्ग, चंदणबाला जिणंदाणेण ॥  
उम्मासियतवतवित्र, निवित्र जेहिं वीरजिणो ॥ १८ ॥

**शब्दार्थ—**ते चंदनबाला श्री जिनेश्वरने दान आपवार्थी केम  
न प्रशंसा पामी ? अर्थात् पामी. कारणके, जे चंदनबालाये उ मा  
लना तपथी तप थयेला श्री महावीरप्रन्नुने संतोष पमाड्या.  
पढमाईं पारणाईं, अकरिंसु करंति तह करिसंति ॥  
अरिहंता नगवंतो, जस्स घरे तेसिं धुव सिद्धि ॥ १९ ॥

**शब्दार्थ—**श्री अरिहंत नगवाने जेना घरने विषे पहेलुं  
पारणुं करयुं हशे, करे रे अथवा हवे पठी करशे; तेउ निश्चे सि  
द्धिपद पामशे. ॥ १९ ॥

**जिणन्नवणविंवपुठय—**संघसरुवेसु सत्तखित्तेसु ॥

**ववियं धणंपि जायई, सिवफलयमहो अणंतगुणं पृष्ठ**

**शब्दार्थ—**जिनन्नवन, विंव, पुस्तक अने चतुर्विध संघरूप  
सातकेत्रमां वावेलुं एकुंय पण धन मोहफलरूपे आश्वर्यकारीप  
णाथी अणंतगणुं थाय रे. ॥ २० ॥ इति दान कुलकम् ॥

## ॥ अथ शीलकुलक ॥

सोहग्ग महानिहिणो, पाए पणमामि नेमिजिण वशणो ॥  
बालेण नुअवलेण, जणादणो जेण निझिणिन ॥ १ ॥

शब्दार्थ—जेमणे वाढ्यावस्थामा नुजवलथी कृष्णवासुदेवने  
जीत्यारे ते सोन्नाग्यना समुद्र एवा श्रीनेमि जिनेश्वरना पगमा  
हुं प्रणाम करुंदु ॥ १ ॥

सीलं उत्तमवित्तं, सीलं जीवाण मंगलं परमं ॥

सील दोहग्गहरं, सीलं सुखाण कुलनवणं ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जीवोने शील एज उत्तम धन, शील एज उ  
त्कष्ट मंगल, शील एज डुर्जार्ण्यने नाश करनारुं अने शील एज  
सुखोनु कुलधर रे ॥ २ ॥

सील धम्मनिहाण, सील पावाण खंमणं नणियं ॥

सील जतूणजए, अकित्तिम मंमणं पवर ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—शील धर्मनो नमार तेमज सील पापोने नाश  
करनारु कह्यु रे वली जगत्भामा शील माणसोने अकर्त्रिम  
( साचु ) घराणु रे ॥ ३ ॥

नरयडुवारनिरुञ्जण—कवाम्सपुम्सहोअरच्छायं ॥

सुरद्वोअधवलमदिर—आरुहणे पवरनिस्सेणि ॥४॥

शब्दार्थ—शील नरकना रस्ताने रोकवाने कमाडनी जोड  
सरखु अने देवलोकरूप उच्चल मदिरमा चमवाने श्रेष्ठ निस  
रणी रूप रे ॥ ४ ॥

सिरि उग्गसेणधूआ, रायमई लहउ सीलवश्रेहा ॥

गिरि विवरगञ्ज जीए, रहनेमी गविञ्ज मग्गे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—श्री उग्रसेन राजानी पुत्री राजीमति शीलवती

खीयोमां रेखा पामी रे. कारण के, जेणे पर्वतनी गुफामां रहे  
खा रथनेमिने धर्ममार्गने विषे रोकी राख्या रे. ॥ ५ ॥

पञ्जलितवि हु जखणो, सीखपन्नावेण पाणियं हवइ ॥  
सा जयउ जए सीआ, जीसे पयमा जसपमाया ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—जेना शीख प्रन्नावथी ज्वाजल्यमान एवो पण  
अग्नि पाणीरूप थयो. ते सीता जगत्‌मां जयवंती वर्ते रे के, जेनी  
यशपताका प्रगट रे. ॥ ६ ॥

चालणिजखेण चंपा—ए जीइ उग्घामियं छुवारतियं ॥  
कस्स न हरेइ चित्तं, तोयं चरियं सुन्नद्वाए ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—जेणे चालणीनां जखे करोने चंपा नगरीना त्रण  
दरवाजा उघाड्या ते सुन्नद्रानुं चरित्र कोनां चित्तने हरनारुं  
न थाय ? ॥ ७ ॥

नंदउ नमयासुंदरि, सा सुचिरं जीइ पाखियं सीखं ॥  
गहिलत्तणंपि काऊं, सहिआ य विम्बवणा विविहा ॥

शब्दार्थ—ते नर्मदा सुंदरी आनंद पामो के, जेणे गांडापणुं  
करीने पण विविध प्रकारनी विटंवना सहन करीने शीख पाल्युं.

नहं कखावईए, नीसणरन्नंमि रायचत्ताए ॥

जंसा सीखगुणेण, छिन्नंगं पुण नवा जाया ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—नयंकर अरण्यमां राजाए त्यजी दीघेली कदा  
वतोनुं कछ्याए याऊं के, जेना शीखगुणथी रेदायेदा अंगो पण  
फरी नवा थया. ॥ ९ ॥

सीखवईए सीखं, सकइ सकोवि वन्निउं नेव ॥

रायनिउत्ता सचिवा, चउरोवि पवंचिआ जीए ॥ १० ॥

शब्दार्थ—शीखयतीना शीखने इँइ पण वर्णववाने समर्थ

नयी कारणके, जे शीतवंतीये राजाना मोकलावेला चार प्रधा  
नोने पण वेतस्या रे, ॥ १० ॥

सिरिविष्माणपहुणा, सुधम्मलान्नुति जीई पठविञ्च ॥

सा जयतु जए सुखसा, सारथससि विमलशीखगुणा ॥१॥

शब्दार्थ—श्री वर्षमान स्वामीये जेने धर्मलाज्ज मोकळ्यो  
हतो, ते शारद रुतुना चक्षमान निर्मल गुणवाली सुखसा जग  
त्मा जयवंती वर्तो ॥ ११ ॥

हरिहरवंजपुरदर—मयन्नंजाण पंचवाण वलदप्पो ॥

दीखाइ जेण दलिउ, स थूलज्जदो दिसउ जहं ॥१२॥

शब्दार्थ—हरि, हर, ब्रह्मा, अने इना मदने ज्ञागनार तथा  
बखथो गर्ववत एवा कामदेवने जेणे दीखामात्रथी दखी नाख्यो  
रे ते स्थूलज्जद्र कल्याण आपो, ॥ १२ ॥

मणहरतारुणज्जरे, पञ्चिङ्गंतोवि तरुणि नियरेण ॥

सुरगिरिनिच्छलचित्तो, सो वयरमहारिसी जयतु ॥१३॥

शब्दार्थ—जे मनोदर तारुण्यना ज्ञारवाली स्त्रीरूप जलस  
मूहे प्रार्थना कस्या डता पण मेरुपर्वतनी पेरे निश्चल चित्तवाला  
रहेला रे, ते श्री वज्रस्वामी जयवंता वर्तो ॥१३॥

युणियं तस्स न सक्का, सहस्स सुदंसणस्स गुणनिवह ॥  
जो विसमसंकमेसुवि, पमिञ्चिवि अखम्भशीखधणो ॥१४॥

शब्दार्थ—त सुदर्शन आवक्को गुणसमूह स्तुति करवो  
शक्य नयी अर्थात् स्तुति करी शकाय तेवो नयी कारणके, जे  
विषम शंकटमा पद्मा वता पण अखंक शीतरूपधन वालो रह्यो रे  
सुदरि सुनंद चित्तवणा, मणोरमा अंजणा मिगावड अ ॥  
जिणसासणसु पसिद्धा, महासर्झत सुह दिंतु ॥१५॥

**शब्दार्थ**—सुंदरी, सुनंदा, चित्तवृणा, मनोरमा, अंजना अनेमृगा वती। जिनशासनमां प्रसिद्ध एवी ए महा सतीयो(तमने) सुख आपो, अचंकारिय चरित्रं, सुणिकणं को न धुणाई किर सीसं जा अखंडियसीला, निष्ठवश्कयन्निआवि दढं ॥१६॥

**शब्दार्थ**—अचंकारी भटानुं चरित्र सांभलीने कोण पोता नुं मस्तक निश्चे न धुणावे ? के, जे निष्ठपतिये कष्ट आप्या भतां दृढ अखंमित शीलवाली रही ॥ १६ ॥

नियमितं नियन्नाया, नियजण्ठ नियपियामहो वावि ॥  
नियपुत्तोवि कुसीलो, न वस्त्रहो होइ लोआणं ॥१७॥

**शब्दार्थ**—पोतानो मित्र, पोतानो ज्ञाइ, पोतानो वाप अथवा पोताना वापनो वाप पण, वली पोतानो पुत्र पण जो कु शील होय तो ते लोकोने वहालो थतो नथी. ॥ १७ ॥

सद्वोसिंपि वयाणं, जग्गाणं अत्रि कोइ पमिआरो ॥  
पक्खघमस्सव कन्ना, न होइ सीलं पुणो जग्गं ॥ १८ ॥

**शब्दार्थ**—सर्वे एवाय पण ज्ञागेलां ब्रतनो कोइ पण आलो यणादि उपाय डे, पण जेम पाका घमाने कांठा चोडवानो कोइ उपाय नथी तेम ज्ञागेला शीलनो फरी कोइ उपाय नथी. १८

**वेयालज्ञूअरक्षस—केसरिचित्तयगईंसप्पाणं ॥**

**लीलाइ दलइ दप्पं, पालंतो निम्मलं सीलं ॥१९॥**

**शब्दार्थ**—निर्मल शील पालनारो पुरुष वैताल, ज्ञूत, राक्षस, के शरीसिंह, चित्रा, हाथी अनेसर्पना गर्वने लीला मात्रमां दली नाखेडे.

जे केइ कम्ममुका, सिद्धा सिङ्गंति सिङ्गिहिंति तहा ॥  
सद्वोसि तेसि वलं, विसाल सीलस्स माहप्पं ॥ १९ ॥

**शब्दार्थ**—जे कोइ कर्म मुक्त जीवो सिद्ध यथा, सिद्ध याय डे तेमज

सिद्ध घशे, ते सर्वेने विशाल शीलनुं महात्म्यज वल रे. अर्थात्  
शीलना वलथी सिद्धिपद पामे ॥ २० ॥

॥ इति शील कुलक ॥

---

## ॥ अथ तपकुलक ॥

सो जयञ्ज जुगाइजिणो, जस्संसे सोहए जमामञ्जमो ॥  
तवज्ञाणगिगपलिविय, कम्मिधणधूमपत्तिव ॥ १ ॥

शब्दार्थ—तप ध्यानरूप अग्रिथी बलता एवा कर्मरूप इध  
णाना धूमाडानी पेरे जेमना खज्जाने विषे जटारूप मुकुट शो  
न्नतो हतो ते श्री युगादि जिनेश्वर जयवंता वर्जो ॥१॥

संवच्छरियतवेण, काउसगग्मि जो रिति जयव ॥

पूरियनिययपश्नो, हरञ्ज उरिआइ वाहुबली ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जे जगवाने संवत्सरीना तपथी काउसगमा उज्जा र  
ही पोतानी प्रतिङ्गा पूर्ण करी ते श्री वाहुबली पापोने दूर करो  
अयिरंपिथिर वकं—पि उजुआ उद्ध्रहपि तह सुखह ॥  
उस्सज्जपि सुसज्जं, तवेण संपङ्कए कञ्जं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—तपथी अस्थिर कार्य होय ते स्थिर, वक होय ते  
सरख, उर्ध्वज्ज होय ते सुखज अने उ साध्य होय ते सुसाध्य थायरे  
रठ रठेण तव, कुणमाणे पढमगणहरो जयवं ॥  
अरक्षीणमहाणसोऽ, सिरि गोअमसामिति जयञ्ज ॥४॥

शब्दार्थ—रठ रठना तपने करता, प्रथम गणधर अने अरक्षीण महा  
खद्वीवाला थयेला एवा जगवान् ओ गौतमस्वामी जयवता वर्जो

रङ्गाइ सणंकुमारो, तवबलखेलाइखस्तिपन्नो ॥

निदुअखवलिअंगुलि—सुवन्नकंतिपयासतो ॥५॥

(३५८)

शब्दार्थ—तपना वलथी खेलादि लब्धीने पामेलो अने पो  
तानां धुंकथो लित करेली आंगलीनी सुवर्णना सरखी कातिने  
प्रकाश करतो सनत् कुमार चक्रवर्ती शोज्ञे रे. ॥५॥

गोवंजगप्ति गप्तिणि—वंजणिधाताइ गुरुच्छ्रपावाइ ॥  
काउणवि कणयंपिव, तवेण सुद्धो दृढपहारी ॥६॥

शब्दार्थ—गाय, ब्राह्मण, गर्ज अने गर्जवती ब्राह्मणी ए चार  
इत्यानां म्होटां पापने करीने पण सुवर्णनी पेरे तप करी दृढ  
प्रहारी गुरु थयो रे. ॥६॥

पुवञ्जवे तिवतवो, तविज जं नंदिसेणमहरिसिणा ॥  
वसुदेवो तेण पिन्डि, जाउ खयरी सहस्रसाण ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—पूर्वजवमां नंदिषेण महासुनिये जे तीव्र तप क  
र्खो, तेथी ते हजारोनो विद्याधरीयोने प्रियकारी वासुदेव अयो. ॥७॥  
देवावि किंकरतं, कुणांति कुलजाइविरहिअराणांपि ॥  
तवमंतपन्नावेण, हरिकेसवलस्स वरिसिस्स ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—देवता पण कुलजाति रहितनुं पण दासपणुं करे  
रे. जुउ देवताए चंमालना कुलमां जन्मेला हरिकेशी महा सुनिनुं  
तपरूप मंत्रना प्रज्ञावथी दासपणुं करयुं रे. ॥८॥  
पमसयमेगपमेण, एकेण घमेण घमसहस्राइ ॥  
जं किर कुणांति मुणिणो, तवकप्पतरुस्स तं रकू फखां ॥९॥

शब्दार्थ—सुनियो जे एक वस्त्रवर्द्दे हजारो वस्त्र अने एक घ  
मावर्दे हजारो घमाउ निश्चे करे रे, ते खरेखर तपरूप कष्ट  
करुं फख रे. ॥ ९ ॥

निअणस्स विहीए, तवस्स तवियस्स किं पसंसामो  
॥१० जेण विणासो, निकाइयाणांपि कम्माण ॥१०॥

शब्दार्थ—नीयाशा रहित विधिवर्णे करेता तपने शु वखाणीये ।  
कारण के, जे तपथी निकाचित एवा पण कर्मनो विनाश करायडे  
अङ्गुकरतवकारी, जगगुरुणा कन्हपुच्छिएण तया ॥  
वाहरिति स महप्पा, समरिज्जु ढंडणकुमारो ॥११॥

शब्दार्थ—श्री कृष्णना पूर्ववा उपरथी ते श्री जगत् गुरु ने  
मिनाथे “जेने अतिङ्गुष्टकर तप करनार डे ” एम कह्यु इतु, ते  
महात्मा श्री ढंडणकुमारने स्मरण करो ॥११॥  
पङ्कदिवसं सत्तजणे, बदिक्षणं गहियवीरजिणदिका ॥  
कुग्गान्निग्गहनिरञ्ज, अङ्गुणते मालिति सिद्धो ॥१२॥

शब्दार्थ—दररोज (रं पुरुप अने एक खो) एम सात मा  
णसनो वध करोने पर्ही श्री वीरप्रभु पासे दीक्षा दइ उष्टकर एवा  
अन्निग्रहमा आसक्त थयेतो अर्जुनमाली सिद्ध थयो ॥१२॥

नंदीसररुचगेसुवि, सुरगिरिसिहरेसु एगफालाए ॥  
जंघाचारणमुणिणो, गर्भति तवप्पन्नावेण ॥१३॥

शब्दार्थ—जंघाचारण मुनियो तपना प्रन्नावथी एक फाले  
करोने आठमा नदीश्वरद्वीपमा, वारमा रुचकद्वीपमां अने मेरुप  
वंतना शिखर उपर जाय डे ॥१३॥

सेणियपुरञ्ज जेसि, पसंसिथ्रं सामिणा तबोरूवं ॥  
ते धन्ना धन्नमुणि, उन्नवि पचुत्तरे पत्ता ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—त्रेणिक राजानी आगल श्री महावीरप्रभुए जेनु  
तपस्वरूप वर्णव्यु डे, ते धनकुमार अने धनाकाकदी ए वने मुनि  
उ पण पाचमा अनुज्ञर विमानने विपे प्राप्त थया ॥१४॥  
सुणिङ्गण तव सुंदरी-कुमरीए अंविलाणि अणवरय ॥  
सर्विवाससहस्सा, जण कस्स न कपए हियय ॥१५॥

शब्दार्थ—हे ज्ञाइ! सुंदरी कुमारीनुं साठ हजार वर्षसुधी  
निरंतर आंबील तप सांजली कोनुं हृदय न कंपे? कहे. १५  
जं विहित्रमंबिलतवं, वारसवरिसाइं सिवकुमारेण ॥  
तं दृषु जंबुरुवं, विम्हइत्र कोणित्र राया ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—शिवकुमारे (जंबूस्वामीने पावळे ज्ञवे) वारवर्ष  
पर्यंत जे आंबिल तप कर्थो, तेथी वीजा ज्ञवमां जंबूस्वामीना  
रूपने जोइ कोणिक राजा विस्मय पास्यो. ॥१६॥

जिणकप्पिय परिहारिय, पमिमापमिवन्न लंदयाईणं ॥  
सोऽण तवसरूवं, को अन्नो वहउ तवगवं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—जिनकछपी, परिहारविशुद्धि चारित्रवाला, पमि  
माना धारणहार एवा लंडी साधुनां तपस्वरूपने सांजलीने वी  
जो कयो पुरुष तपना गर्वने धारण करे? ॥१७॥

मासक्षमासखवउ, वलञ्जदो रूववंपि हु विरतो ॥

सो जयाउ रन्नवासी, पमिवोहित्रसावयसहस्सो १८

शब्दार्थ—मासखमण अथवा पक्षखमण करनारा, रूपवंत  
उतां पण निश्चे विरक्त थयेला, अरण्यमां वसनारा अनेसिंहादि ह  
जारो हिंसक पशुन्तेवोध करनारा ते वलञ्जइ मुनि जयवंतावर्जो.  
थरहरियधरं ऊखहल्लि-य सायरं चलियसयलकुखसेला  
जमकासि जयं विहृणु, संघकए तं तवस्स फलं ॥१८॥

शब्दार्थ—पृथ्वी कंपी, समुद्रो खलञ्जछ्या, सर्वे हिमवंतादि  
कुलपर्वतो कंप्या. ए प्रमाणे जयवंता विष्णुकुमारे श्री संघने माटे  
जे कांइ करयुं, ते सर्व तपनुं फल बे. ॥१९॥

किं बहुणा ज्ञणिणां, जंकस्सवि कहवि कडवि सुहाइं  
दिसंति ज्ञवणमश्चे, तड तवो कारणं चेव ॥ १० ॥

(१६१)

शब्दार्थ—वहु कहेवाथी शुं? कारणके, न्नुवननी मध्ये जे काइ कोइने पण क्याइ सुखादि देखाये वे, त्या तपनु कारण निश्चे जाणवु अर्थात् तपथी सर्व प्रकारनुं सुख मलेवे ॥३॥

॥ इति तप कुलक ॥

## ॥ अथ भावकुलक ॥

कमठासुरेण रङ्ग-मि ज्ञीसेण प्रलयतुद्धजलबोले ॥  
ज्ञावेण केवलज्ञात्वा, विवाहित जयन्त पासजिणो ॥१॥

शब्दार्थ—कमठासुरे रचेला ज्ञयकर प्रलयकाल समान ज खमा ज्ञावे करीने व काय जीवनुं हित चितवचाथी केवलज्ञानरूप लक्ष्मीने पामेला श्री पार्वतीय प्रज्ञ जयवंता वर्तो ॥१॥  
निद्वन्नो तवोलो, पासेण विणा न होइ जह रंगो ॥  
तह दाणसीलतवज्ञान्वणात्र अहलात्र ज्ञावविणा ॥२॥

शब्दार्थ—जेम चूना विना लाबुल अने पास विना वस्त्र रंग न पामे, तेम ज्ञाव विना दान, शोल, तप अने ज्ञावना अफल जाणवी ॥२॥

मणिमतञ्चसहीणं, जतयतताण देवयाणंपि ॥

ज्ञावेण विणा सिद्धी, न हु कस्सइ दीसर्ई खोए ॥३॥

शब्दार्थ—लोकमा मणि, मत्र, औपधो, जत्र, तत्र अने देव तानी उपासनानी पण ज्ञाव विना सिद्धि कोइने देखाती नथीज

सुहन्जावणावसेणं, पसदचदो मुहुत्तमित्तेण ॥

खविक्तण कम्मगाठि, सपत्तो केवल नाण ॥४॥

शब्दार्थ—शुन्न ज्ञावनाना वश्यथी प्रसन्न चद्रराजा मुहूर्त मा त्रमा कर्मनी गार खपावी केवलज्ञान पास्यो ॥५॥

सुर्सूसंती पाए, गुरुणीणं गरहिकण नियदोसे ॥

उप्पन्नदिवनाणा, मिगावद् जयओ सुहन्नावा ॥५॥

शब्दार्थ—गुरुणीना पगनी सेवा करती अने पोतानां दोपनी निंदा करवायी शुन्न न्नावने लीधे उत्पन्न थेला केवलज्ञानवाली मृगावती जयवंती वर्तो ॥ ५ ॥

जयवं ईखाईपुत्तो, गुरुए वंसंमि जो समारुढो ॥

ददूण मुनिवरिंदे, सुहन्नावा केवली जाओ ॥६॥

शब्दार्थ—म्होटा वांत उपर चेला पूज्य इखाचि पुत्र गोचरीए फरता मुनीश्वरने जोइ शुन्न न्नावयी केवली थया, कविलोअ वंनणमुणी, असोगवणिआई मञ्चयारंमि॥ खाहाखोहत्तिपयं, ऊणंतो जायजाईसरो ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—कपिल नामना ब्राह्मण मुनि अझोकवासीमां पोतानां मनथो ( जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवळइ ॥ दो मासा करायकडं, कोमीए न नीछइ ॥१॥ ) ए क्षेकनुं ध्यान करता जातिस्मरण ज्ञान पाम्या ॥७॥

खवगनिमंतणपुवं, वासियन्नतेण शुद्ध न्नावेण ॥

भुजंतो नरनाणं, संपत्तो कूरगडुओ ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—शुद्ध न्नाववर्मे वासित न्नातयो तपस्वीयोने निमंत्रणापूर्वक न्नोजन करता कूरगडु मुनि केवलज्ञान पाम्या ॥७॥

पुवन्नवसूरिविरईय—नाणासायणपन्नावदुम्मेहो ॥

नियनामं ऊयंतो, मासतुसो केवली जाओ ॥८॥

शब्दार्थ—पूर्वन्नवमां आचार्यपदे रह्या रता करेली ज्ञाननी आशातनाना प्रन्नावयी मूर्ख रहेला मासतुप मुनि पोतानां ना मनुं ध्यान करता रता केवली थया ॥८॥

हत्थिमि समाख्या, रिद्धि दधूण उसन्नसामिस्स ॥  
तख्युण सुहजाणेण, मरुदेवी सामिणी सिद्धा ॥१७॥

शब्दार्थ—हाथी उपर बेरेला श्रीमरुदेवी माता श्री कृष्ण  
स्वामीनो समृद्धि जोइ तुरत शुन्न ध्यानयो सिद्धिपद पाम्या  
पमिजागरमाणीए, जंघाबलखीणमन्निअप्रापुत ॥  
संपत्तकेवलाए, नमो नमो पुण्यचूलाए ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—जाघना वलथी कीण थयेला अन्निकापुत्र मुनिनी  
सेवा करवाथी केवल ज्ञान पामेली पूण्यचूला साध्वीने नमस्कार  
आउ! नमस्कार थाउ! ॥ ११॥

पनरसयतावसाण, गोयमनामेण दिन्नदिस्काण ॥

उप्पन्नकेवलाण, सुहन्नावाण नमो ताण ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—श्री गौतम स्वामीये दीक्षा आपेला अने शुन्न  
ज्ञाववाला होवाने दीये उत्पन्न थयेला केवल ज्ञानवाला ते पंड  
रसो तापसोने नमस्कार थाउ! ॥ १२ ॥

जीवस्स सरीराओ, नेअं नाउं समाहिपत्ताण ॥

उप्पाडिअनाणाण, खंदगसीसाण तेसि नमो ॥१३॥

शब्दार्थ—शरीरथी जीवनु जूदापणुं जाणी समाधि पामेला  
अने उपजावेला केवल ज्ञानवाला ते स्कदकसूरिना शिष्योने  
नमस्कार थाउ! ॥१३॥

सिरिवधमाणपाए, पूञ्चत्यि सिङ्गवारकुसुमेहि ॥

जावेण सुरखोए, छुगर्द्द नारी सुहं पत्ता ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—नगोरना फुलयी श्री वर्द्धमान प्रज्ञुना चरणने  
ज्ञावथी पूजवानी इच्छवाली उर्गता नामनी स्त्री देवलोकमा  
सुख पामी ॥ १४ ॥

(१६४)

ज्ञावेण भुवणनाहं, वंदेतुं दुहरोवि संचलिओ ॥  
मरिज्ञेण अंतराले, नियनामंको सुरो जाओ ॥१५॥

शब्दार्थ—दडको पण ज्ञावथी श्री वीरप्रभुने वांदवा माटे वाव्यमांथी निकलीने चाढ्यो; परंतु रस्तामां मृत्यु पामीने; पोताना नाम वालो ( दुर्जन नामवालो ) देवता थयो. ॥ १५ ॥  
विरयाविरयसहोअर, उदगस्स ज्ञरेण ज्ञरिअसरिअआए॥  
जणिअआइ साविआए, दिन्हो मग्गुति ज्ञाववसा ॥१६॥

शब्दार्थ—विरक्त तथा अविरक्त ( सुनि तथा राजा ) एवा वे सगा ज्ञाइयोए कहेवाथी पाणीना समूहयो ज्ञरेली नदीये ज्ञावथी श्राविकाने मार्ग आप्यो. ॥ १६ ॥

सिरिचंमरुहगुरुणा, तामिङ्जंतोवि दंमघाएहिं ॥

तक्कालं तस्सीसो, सुहलेसो केवली जाओ ॥१७॥

शब्दार्थ—श्री चंडरुज्ञाचार्ये दंमना प्रहारथी ताडन करेखो एवोय पण तेमनो शुज्जलोश्यावालो शिष्य तुरत केवली थयो. ॥ १७ ॥

जं न हु भणिओ बंद्वो, जीवस्स वहेवि समिश्गुत्ताणं ॥  
ज्ञावो तत्थ पमाणं, न पमाणं कायवावारो ॥१८॥

शब्दार्थ—जीवना वधने विषे पण समिती तथा गुप्तीवंतने जे निश्चे बंध नथी कह्यो; तेमां ज्ञाव प्रमाण डे; परंतु काय व्या पार प्रमाण नथी. ॥ १८ ॥

ज्ञाव चिय परमत्थो, भावो धम्मस्स साहओ ज्ञणिओ ॥  
समत्तस्सवि बीअं, ज्ञाव चिय बिंति जगगुरुणो ॥१९॥

शब्दार्थ—ज्ञाव एज निश्चे प्रमार्थ डे अने ज्ञाव एज धर्म नो साधक कह्यो डे. तीर्थकरो सम्यक्त्वनुं बीज ज्ञावज कहे डे.

किं वहुणा ज्ञणिएणं, तत्त निसुणेह ज्ञो महासत्ता' ॥  
मुखसुहवीयज्ञूच्छ्रो, जीवाण सुहावहो ज्ञावो ॥४४॥

शब्दार्थ—वहु कहेवाथी ह्यु ? हे महासत्त्ववतो ! तत्वनी वात साज्जदो जूवोने, मोक्षना सुखनु वीजज्ञूत सुखकारी ज्ञावजरे ईयदाणसीखतव ज्ञा-वणाच्छ्रो जो कुण्ठईसत्ति भत्तिज्ञरो॥ देविदविदमहित्र, अ ईरा सो खहई सिद्धिसुह ॥४१॥

शब्दार्थ—जे शक्ति अने भक्तिना समूहवादो पुरुष आ उपर कहेला दान, शील, तप अने ज्ञावनाने आचरे रे, ते देवताना इद्रोना समूहे अथवा देवेऽस्त्रिये पूजेला मोक्ष सुखने थोडा वखतमा पामे रे ॥ ४१ ॥

॥ इति ज्ञावकुलक ॥

॥ अथ उपदेशरत्न कोश ॥

उवएसरयणकोस, नासिअनीसेसलोगदोगच्चं ॥

उवएसरयणमालं, बुद्धं नमिज्ञण वीरजिण ॥१॥

शब्दार्थ—श्री वीरप्रज्ञने नमस्कार करीने हु नाश कर्त्त्वा रे सर्व लोकना दारिइ जेणे एवा अने उपदेशरूप रत्ननी माला रूप उपदेश रत्नकोशाने कहु तु ॥ १ ॥

जीवदयाइ रमिज्ञइ, ईदियवग्गो दमिज्ञइ सयावि ॥

सच्चं चेव चविज्ञइ, धर्मस्स रहस्समिणमेव ॥४॥

शब्दार्थ—जीव दयामा रमबु, इदियोना समूहने नित्य द मवो अने सत्यज बोखबु एज धर्मनु रहस्य रे ॥ ४ ॥

सोल न हु खंमिज्ञइ, न सवसिज्ञइ समं कुसीखेहि ॥

गुरुवयण न खलिज्ञइ, जझनज्ञइधर्मपरमच्छ्रो ॥५॥

शब्दार्थ—निश्चे शीलने न खंडवुं. कुशीलियानी साथे न वसवुं, गुरुतुं वचन न उलंघवुं. एज श्री जिनेश्वरना धर्मनो उत्कष्ट अर्थ ठे. ॥३॥

चवलां न चंकमिङ्ग, विरझङ्ग नेव उप्पमो वेसो ॥  
वंक न पलोझङ्ग, रुद्धवि जणांति किं पिसुणा ॥४॥

शब्दार्थ—चपलपणाशी (अयतनाशी) न चालवुं, उन्नत वेष न पहेरवो, वांकी दृष्टिशी न जोवुं के, जेथी रीसायला एवा पण चामोया शुं वोले ? ॥५॥

निञ्चमिङ्ग नीञ्जीह, अविच्छारित्र नेव किङ्गए कङ्ग ॥  
न कुलक्कमोञ्च लुप्पङ्ग, कुवित्रकिं कुण्ड कलिकालो ॥५॥

शब्दार्थ—पोतानी जीञ्जने वश करवो, अविचारयुं काम न करवुं अने पोताना सारा कुलाचारने न लोपवो; तो पठी को प पामेलो कलिकाल पण शुं करे ? अर्थात् कांइ न करे. ॥५॥

मम्मं नउ ल्लविङ्ग, कर्सवि आलां न दिङ्ग कया ॥  
कोवि न उक्कोसिङ्ग, सज्जणमण्गो इमो दुग्गो ॥६॥

शब्दार्थ—कोइनुं मर्म वचन न वोलवुं, कोइने क्यारे पण आल न देवुं तेमज कोइने तिरस्कार पण न करवो. आ प्रमाणे सज्जननो मार्ग इर्हन्न ठे. ॥६॥

सव्वस्स उवयरिङ्ग, न पम्हसिङ्ग परंस्स उवयारो ॥  
विहलं अवलंबिङ्ग, उवएसो एस वित्तसाण ॥७॥

शब्दार्थ—सर्वने उपकार करवो, पारको उपकार न विसा रवो, डुःखीने आधार आपवो. ए डाह्या पुरुषोनो उपदेश जाणवो कोवि न अन्नहिङ्ग, किङ्ग कर्सवि न पहुणाभंगो ॥  
दीणां न य जंपिङ्ग, जीविङ्ग जाव जिअलोए ॥७॥

(१६७)

शब्दार्थ—ज्या सुधी जीवलोकमा जीविये त्यां सुधी कोइ  
नो पासे याचना न करवी, तेमज कोइनी याचनानो न्नंग न  
करवो अने दोन वचन न वोलवु ॥ ८ ॥

अप्पा न पससिङ्गइ, निदिङ्गइ दुङ्गणोवि न कयावि ॥  
वहु वहुसो न हसिङ्गइ, लम्बइ गुरुअत्तणं तेण ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—पोताना वखाण न करवा, उर्जनने क्यारे पण  
न निद्वो, वहु वहु न हसवु के, जेथी म्होटाइपणु पामीये ए  
रिङ्गणो न वीससिङ्गइ, कयावि वचिजए न वीसह्रो ॥  
न कयग्घेहि हविङ्गइ, एसो नायस्स नीसंदो ॥ १० ॥

शब्दार्थ—शत्रुनो विश्वास न करवो, विश्वासवालाने क्यारे  
पण न ठगवो, कस्या गुणाना लोपक ( कृतन्न ) न थवु ए न्या  
यनो रस्तो जाणावो ॥ १० ॥

रचिङ्गइ सुगुणेसु, वशइ राज न नेहवप्रेसु ॥

किङ्गइ पत्तपरिका, दखाण इमोआ कसवटो ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—सारा गुणवालाने विषे राचीये, साचा स्नेह रहि  
तनी साथे राग न वाधीये अने पात्रनी परीका करीये माहा  
पुरुषनी एज कसोटी रे ॥ ११ ॥

नाकज्ञमायरिङ्गइ, अप्पा पामिङ्गए न वयणिङ्के ॥

न य साहसं चइङ्गइ, उप्रिङ्गइ तेण जगहर्तो ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—अकार्य न ग्रादरवु, पोते निवनीकमा न पढवु  
अने साहसने न त्यजी देवु के, तेथी जगत्‌मा हाथ उज्जो रहे १२  
वसणेवि न मुप्रिङ्गइ. मुच्चइ माणो न नाम मरणेवि ॥  
विहवखण्डवि दिङ्गइ, वयमसिधारं सु धीराणं ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—उ समा पण न मुंजावु, मरण व्याय तो पण मा

ननुं नाम न मूकवुं, लक्ष्मीनो नाश आय तो पण दान आपवुं,  
ए वीरपुरुषोनुं असिधारा ( तरवारनी धार सरखुं ) वृत ठे. १३  
अझेहो न वहिङ्गइ, रूसिङ्गइ न य पिएवि पयदिहं ॥  
वधारिङ्गइ न कली, जलांजली दिङ्गइ उहाणं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—कोश्नी साथे बहु स्नेह न करवो, स्नेही उपर  
निरंतर न रीसावुं, क्लेश न वधारवो तेमज झःखोने जलांजली  
आपवी. अर्थात् झःखने त्यजी देवुं. ॥ १४ ॥

न कुसंगेण वसिङ्गइ, बालस्सवि घिप्पए हिच्रं वयणं ॥  
अनयान्त्र निवहिङ्गइ, न होइ वयणिङ्गया एवं ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—कुसंगीनी साथे न वसवुं, बालकनुं पण हित व  
चन ग्रहण करवुं, अन्यायथी पाठा फरवुं के, जेथी आपणुं को  
इ मावुं न बोले ॥ १५ ॥

विहवेवि न मञ्चिङ्गइ, न विसीझिङ्गइ असंपयाएवि ॥  
वहिङ्गइ समन्नावे, न होइ रणरणइ संतावो ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—धनवंतपणामां अन्निमान न करवुं तेमज निर्ध  
नपणामां खेद न करवो, शत्रु मित्रने विषे समन्नाव राखवो  
के, जेथी सारे खोटे संताप न होय ॥ १६ ॥

वन्निङ्गइ न्निच्चगुणो, न परुखं न य सुअस्स पच्चखं ॥

महिलाऊ नो न्नयाविहु, न नस्सए जेण माहपरं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—सेवकना गुण पाडल न वर्णववा, तेमज पुत्रना  
गुण समक्ष न वर्णववा, स्त्रीना गुण पाडल अने समक्ष न  
वर्णववा के, जेथी आपणी म्होटाइ नाश न पामे. ॥ १७ ॥

जंपिङ्गइ पित्रवयणं, किङ्गइ विणान्त्र दिङ्गए दाणं ॥

परगुणागहणं किङ्गइ, अमूलमंतं वसीकरणं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ-प्रीय वचन बोलवुं, विनय करवो, दान आपवुं  
अने पारका गुण ग्रहण करवा ए मूल विनानो वशीकरण मत्रवे  
पञ्चावे जपिङ्गइ, सम्माणिङ्गइ खलोवि वहुमज्जे ॥

न ऊङ्गइ सपरविसेसो, सयद्वात्रा तस्स सिश्वति ॥१४॥

शब्दार्थ-उचित अवसरे बोलवुं, वहु माणसोनी मध्ये ख  
खने पण सन्मान आपवु, स्वपरनु विशेषपणु न त्यजवुं ए प्र  
माणे चालनाराना सर्वे अर्थों सिंह थाय रे ॥ १४ ॥

मंतताण न पासे, गम्मइ नइ परगगहे अबीएहि ॥

पमिवन्नं पालिङ्गइ, सुकुलीणतं हवइ एवं ॥ १५ ॥

शब्दार्थ-मत्र तत्रने न जोवा, एकदा पारका घरमा न ज  
वु अने पोतानु कहेलु पालवुं ए प्रमाणे चालवाथी साहु कुलीन  
पणुं होय रे ॥ १५ ॥

ज्ञुजइ ज्ञुंजाविङ्गइ, पुर्णिङ्ग मणोगयं कहिङ्ग सयं ॥

दिङ्गइ लिङ्गइ उचित्रां, इत्तिङ्गइ जइ थिरं पिम्मं ॥१६॥

शब्दार्थ-जो मित्रनी साये स्थिर प्रेम इच्छिये तो तेने घेर  
जमीये अने तेने जमाडीये, आपणा मननो विचार तेने पूरीए अने  
ते पूरे तेनो उत्तर आपीए, वली योग्य वस्तु आपीए अने लइए  
कोवि न अवमन्निङ्गइ, न य गविङ्गइ गुणेहि निअपेहि ॥  
न य विम्हन्त वहिङ्गइ, वहुरयणा जेणिमा पुहवी ॥१६॥

शब्दार्थ-कोइने पण अपमान न आपवु, तेम पोताना गु  
णाथी गर्व पण न करवो वलो मनमा आश्र्वय पण न पामवुं  
करण के, आ पृथ्वो वहु रत्नवाली रे ॥ १७ ॥

आरंचिङ्गइ लहुअं, किङ्गइ कङ्ग महत मविपञ्चा ॥  
न य उक्करिसो किङ्गइ, लप्पइ गुरुअत्तण जेण ॥१८॥

शब्दार्थ—प्रथम आरंज योगो करवो अने पारब्रह्मी म्होटुं  
कार्य पण करवुं. वलो पोतानुं उत्कृष्टपणुं न करवुं के, जेथी  
म्होटाइपणुं पामीये, ॥ ४३ ॥

जाइज्ञइ परमप्पा, अप्पसमाणो गणिज्ञइ परो ॥

किंज्ञइ न रागदोसो, बिन्निज्ञइ तेण संसारो ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—परमात्मानुं ध्यान करवुं, वीजाने पोतानां समान  
गणवा, राग दोष पण न करवो, तेथो संसार ठेदाइजाय ठे. ४४

उवएसरयणमाल्यं, जो एवं ठवइ सुष्ठु निअकंठे ॥

सो नर सिवसुहलड्डी, वह्यले रमइ सह्याइ ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ—जे पुरुष आ प्रमाणे उपदेशरत्नमालाने पोता  
ना कंठने विषे स्थापन करे ठे; तेनां वक्षस्थलमां मोक्ष सुखनी  
खद्मी पोतानी इड्डा प्रमाणे क्रीमा करे ठे. ॥ ४५ ॥

॥ इति उपदेश रत्न कोष.

॥ अथ शाश्वताजिन नामादि संख्या स्तवन ॥  
सिरि उसह वद्माणं, चंदाणण वारिसेण जिणचंदं ॥  
नमिञं सासय जिण नव—ए संख परिकितणं काहं॥१॥

शब्दार्थ—सामान्य केवलीनी मध्ये चंद समान श्री रुद्रज्ञ  
देव, श्री वद्मान स्वामी, श्री चंद्रानन अने श्री वारिषेणने नम  
स्कार करीने शाश्वता जिननुवननी संख्यानुं कीर्तन करुं ठुं. ॥१॥  
जोइ वणेसु असंखा, सग कोमि विसयरि लख नवणेसु  
चुखसी लखा सगनवइ, सहस तेवोसुवरि लोए ॥ २ ॥

शब्दार्थ—ज्योतसी अने व्यंतरने विषे असंख्याता, नुवन  
पतिमां सात क्रोम अने वोतेर लाख, तथा उर्ध्व लोकमां चोरा

(१४१)

सी बाख सत्ताणुं हजार अने त्रेवीस जिन ज्ञुवन ठे ॥ २ ॥  
 बावन्ना नदोसर—वरमि चउ चउ कुमले रुच्यागे ॥  
 इथ्रा सधी चउबारा, तिड्डुबारा सेसजिण ज्ञवणा ॥३॥

शब्दार्थ—आरमा नंदोश्वर द्वीपमा बावन तथा कुमल द्वीप अने रुचकद्वीपमा चार चार एम साठ जिनज्ञुवन चार वारणा बाला ठे अने बाकोना जिनज्ञुवनो त्रण बारणाबाला ठे ३  
 पत्तेअं बारेसु, मुहमंदव रगमम्बवे तत्तो ॥

मणिमयपीठं तड्डुवरि, यून्ने चउदिसिसु चउ पमिमा ४

शब्दार्थ—प्रत्येक बारणामा मुखमम्प अने रगमम्पठे त्यार परी मणिमयपीठ ठे ते पीठ उपर स्थून्न अने ते स्थून्न उपर चार दिशामा चार प्रतिमा ठे ॥ ४ ॥

तत्तो मणीपीठजुगे, असोग धम्मशङ्क अ पुरुकरणी ॥  
 पझन्नवण पमिमाण, मझे अछुतर सयं च ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—त्यार परी मणिपीठनु जोमलु, अशोक वृक्ष, धर्म ध्वज अने पुष्करिणी वाव्य ठे प्रत्येक ज्ञुवननी मध्ये (गजारा मा) एकसो आठ प्रतिमाउं ठे ॥ ५ ॥

पमिमा पुण गुरुच्याउ, पण धणुसय लहु अ सत्तहड्डाउ ॥  
 मणिपोठे देवर्हं—दयमि सीहासणनिसन्ना ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—बली म्होटी प्रतिमाउं पाचसो धनुष्यनी अने न्हानी प्रतिमाउं सात हाथनी ठे ते प्रतिमाउं मणिपीठ उपर देवर्हंदामा सिहासन उपर बेठेली ठे ॥ ६ ॥

जिण पिठे उत्तधरा, पमिमा जिणज्ञिमुह डुन्नि चमरधरा नागा ज्ञूच्छा जख्ता, कुंडधरा जिणमुहा दो दो ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—जिनप्रतिमानी पावल एक ब्रघर प्रतिमा अने

सन्मुख वे चामरधारक प्रतिमा रे. वली जिनेश्वरना सन्मुख नागदेवनी, झूतदेवनी, जहादेवनी अने कुम्हधारीनी वे वे प्रतिमा रे. (उत्तरधरादिकनी सर्व मली अगीयार प्रतिमा आय रे.) ॥६॥ सिरिवच्छ नान्नि चुच्छुअ, पय कर केस महिजीह तालुरुणा अंकमया नह अरुही, अंतो रत्ता तहा नासा ॥ ७ ॥

**शब्दार्थ-**श्री जिनेश्वरना श्रीवत्स, नान्नि, चुचुक, हाथेली, पगनां तलोयां, मस्तक, जीज्ज अने तालबुं एटलां राता वर्षवा लां रे. नख अने आंख अंकरत्नमय रे तेमज रेडे राता वर्ष वाली नासिका रे. ॥ ८ ॥

ताराइ रोमराइ, अहिदला नमुहि केस रिष्मया ॥  
फलिह मय दसणा वयरम—य सीस विहूममया उठा॥९॥

**शब्दार्थ-**आंखनी कीकी, रुंवामानो पंक्ति, आंखनी पांपण, नेण अने केश एटला श्यामरत्नमय रे, दांत स्फटिक रत्नमय रे, मस्तक वज्ररत्नमय रे अने होठ परवालां सरखा रे. ऐ कणगमय जाणु जंघा, तणुजष्ठी नास सवण ज्ञालोरु ॥ पलोयंक निसन्नाण, इच्छा पमिमाण नवे वन्नो ॥ १० ॥

**शब्दार्थ-**ढींचण, जांघ, शरीरनी यष्टी, नासिका, कान, कपाल अने साथल ए सर्व सुवर्णमय रे, वली पद्मासने वे रेली ए प्रतिमाना आ उपर कहेवा प्रमाणे वर्ण रे. ॥ १ ॥ ज्ञवणवण कप्पजोइस, उववाय न्निसेअ तह अलंकारा ववसाय सुहम्म सज्जा, मुहमंदव माइ उक्कजुअरा ॥११॥

**शब्दार्थ-**नुवनपति, व्यंतर, ज्योतसी अने बार देव लोक ए सर्वेमा मलो पांच सज्जा रे. तेनांनाम उत्पात, अन्निषेक, अलंकार, व्यवसाय अने सुधर्मा. ए सज्जाउ मुखमंडप विगेरे उसहित रे.

तिक्तुवारा पत्तेअर्ण, तोपुण सन्न यून्न सचि विवेहि ॥  
चेइथ्र विवेहि समं, पइन्नवण विव असीइसय ॥१७॥

शब्दार्थ—त्रण द्वारना जिनन्नूवनमा प्रत्येके चोमुखनी बार  
प्रतिमा रे त्यारपरी दरेक बारणानी पाच पाच सज्जाना स्थून्न  
मा साठ जिनप्रतिविव रे ते चैत्य ( मूल ) प्रतिविवनी साथे  
गणता दरेक न्नूवन प्रत्ये एकसो एसी जिनविव आय रे ॥१८॥  
६०-१०८-११७ ॥

जोपण सयंच पन्ना, विसयरि दीहत्त पिहुल उच्चतं ॥  
वेमाणिअ नंदीसर, कुम्ल रुच्छगे नवणमाण ॥१९॥

शब्दार्थ—वैमानीकना, नदीश्वर द्वीपना, कुडलद्वीपना अने  
रुचकद्वीपना वैमानो अनुक्रमे सो योजन, पचास योजन अने  
बोतेर योजन लावपणे पहोलपणे अने उचपणे जाणावा ॥२०॥  
तीसकुलगिरिसुदस कुरु, मेरुवणिअसीइवीसगयदंते ॥  
वर्कारेसु असीई, चउ चउ इसुआर मणुअ नगे ॥२१॥

शब्दार्थ—हिमवतादि त्रीस कुलगिरि पर्वत उपर त्रीस, दे  
वरुह उत्तर कुरुमा दश, मेरु पर्वतना वनमा ऐसी, गजदता  
पर्वत उपर वीश, वर्कारा पर्वत उपर ऐसी अने इकुकार तथा  
मानुष्योत्तर पर्वत उपर चार श जिन न्नूवन रे ॥ २२ ॥

एआई असुर नवण—ठिआईं पुब्बुत माण अद्वाई॥  
दल मित्तो नागाई—नवसु वणेसु इउ अद्वं ॥ २३ ॥

शब्दार्थ—असुर कुमारमा रहेला ए विगेरे जिनन्नूवननु  
( लावा, पद्मोला अने उचानु ) प्रमाण पूर्वे कहेलाथी अर्धु जा  
णबु नागकुमारादि नव निकायमा तेथी अर्धु जाणवु अने व्य  
तर भूवनमा तेनाथी अर्धु जाणवु ( असुर कुमारमा लावा ५०

पहोला ३५—उंचा ३६ नागकुमारमाँ—३५—१६॥—१८ व्यंतरमाँ  
१६॥—६—४—योजन अनुक्रमे जाएवा. ॥ १५ ॥

दिग्गणगिरिसु चत्ता, दहे आसी कंचणेसु इगसहसो ॥  
सतरि महानईसु, सतरिसयं दीह वेअहे ॥ १६ ॥

**शब्दार्थ**—दिग्गज पर्वत उपर चालीश, इहमाँ ऐसी, कंच  
न गिरिने विषे एक हजार, महा नदीयोमां सीतेर अने लांवा वै  
ताढ्य उपर एकसो सीतेर जिन ज्ञुवन रे. ॥ १६ ॥

कुंझेसु तिसय असीआ, वीसं जमगेसु पंच चूखासु ॥  
इकारस सय सतरि, जंबूपमुहे दसतरूसु ॥ १७ ॥

**शब्दार्थ**—कुंडने विषे त्रणसो ऐसी, यमक पर्वत उपर वीस,  
झेहपर्वतनी चूलिका उपर पांच अने जंबू प्रमुख दश वृक्ष उपर  
अगीयार सो सीतेर जिनज्ञुवन रे. ॥ १७ ॥

वट्टवेअहे वीसा, कोस तयद्वंच दीहविडारा ॥

चउदस धणुसय चालीस, अहिअ उच्चतणे सवे १८

**शब्दार्थ**—वृत वैताढ्य उपर वीश जिनज्ञुवन रे. ए सर्वे  
दिग्गजादि दश स्थानना ३४५५ जिनज्ञुवनो एक गाऊ लांवां  
अने अधो गाऊ पहोलां तेमज चौद सो चालीस धनुष्य उंचां रे.  
अमदीविविदिसोलास, सोहम्मीसाणगदेविनयरीसु ॥  
एवं बत्तीससया, गुणसठि जुआ तिरिअलोए ॥ १८ ॥

**शब्दार्थ**—आठमा द्वीपनी विदिशाए सौधर्म अने ईशान ए  
बे इंडनी सोल देवीनी सोल नगरीयोमां सोल जिनभुवन रे. ए  
म तिर्छालोकमाँ सर्व मली बत्रीससो ने उगणसाठ जिनज्ञुवनरे  
एवं तिहुआणमष्टे, अम कोमी सतवन्न लखाइं ॥  
दोअसया बासीया, सासय जिणज्ञवण वंदामि ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे पूर्वे कहेदा उर्द्ध, अधो अने तिर्छा ए  
त्रणे लोकमा आठ कोड, सन्नावन लाख, वसोने व्यासी शाश्वता  
जिनभुवनने हु वाडबु ॥ २० ॥

सठी लखा गुणनवइ कोमि, तेरकोमि सय विव नवणेसु  
तिअसय वीसा इगनवइ, सहस लखक तिग तिरिअ ॥२१॥

शब्दार्थ—तेरसो कोड, नव्यासी कोड अने साठ लाख एट  
ला जिनविव भुवनपतिमा रे, तेमज त्रण लाख, एकाणु इजार  
त्रणसो वीस जिनविव तिर्छलोकमा रे ॥ २२ ॥

एग कोमि सय खलु, वावन्ना कोमि चउणवइ लखा ॥  
चउ चत्त सहस सगसय, सष्ठा वेमाणि विवाणि ॥२३॥

शब्दार्थ—एकसो कोम, वावन कोड, चोराणु लाख, चुमालीश  
हजार सातसो साठ एटला जिनविव वैमानिक देव लोकमा रे  
पनरस कोमि सयाइ, उचत्त कोडि अमुवन्न लखकाइ ॥  
ठत्तीससहस असीआ, तिहुआण विवाणि पणमामि ॥२४॥

शब्दार्थ—पदर सो कोम, वेतालीसकोम, अगवन लाख,  
वत्रीस हजार अने एसी एटला त्रण न्नुवनमा सर्व जिनविवने  
हु प्रणाम करु ॥ २५ ॥

सिरिन्नरह निवइ पमुहे—हि जाइ अन्नाइ इत्र विहिआइ  
देविद मुणिदयुआइ, दितु नवीयाण सिक्रिसुहं ॥२६॥

शब्दार्थ—ओ भरतचकवर्ती विगेरे राजान्नए आ अठीक्षीप  
मा जे प्रतिविवो निपजाव्या रे अने देवेइ सूरीश्वरे स्तव्या रे, ते  
जिनविव नव्यजनोने मिदि सुख आपो ॥ २७ ॥

उस्सेह मंगुलेण, अह उढमसेस सन्त रयाणीति ॥

निरिलोप पण धणु सय, सासय पमिमा पणिवयामिहृ

(१४६)

शब्दार्थ—उत्सेष्टांगुलनां प्रमाणे करी अधोलोकमां अने उ  
द्विलोकमां सर्वे सात हाथनो अने तिर्त्तलोकमां पांचसो धनुष्य  
नो शाश्वति प्रतिमाने हुं प्रणमुं दुं. ॥ ३५ ॥

॥ इति शाश्वत जिननामादि संख्या स्तवन समाप्तम् ॥

---

॥ अथ त्रिलोक चैत्य विव संख्या ॥

॥ अधोलोकमां जिनन्नुवनविव संख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नाम	न्नुवन संख्या	जिनविव संख्या
१	असुरकुमारमां ॥	६४०००००	११५४०००००००
२	नागकुमारमां ॥	७४०००००	१५१४०००००००
३	सुवर्णकुमारमां ॥	७४ लाख	१४४६०००००००
४	विद्युत्कुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८०००००००
५	अग्निकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८०००००००
६	द्वीपकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८०००००००
७	उदयिकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८०००००००
८	दिग्गुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८०००००००
९	वायुकुमारमां ॥	८६ लाख	१४४८०००००००
१०	स्तनितकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८०००००००
प्रत्येक चैत्ये प्रतिमा १८० रे		कुल	कुल
		७४४०००००	१३६८००००००००

(१४४)

## ॥ उर्द्धलोकमां जिनभुवन विंवसख्या ॥

स्थान संख्या	स्थानना नाम	भुवन संख्या	जिनविव संख्या
१	सौधर्मदेवलोके ॥	३२ लाख	५७६००००००
२	ईशानदेवलोके ॥	४७ लाख	५७४००००००
३	सनत्कुमारमा ॥	१२ लाख	२२६००००००
४	माहेश्वरदेवलोके ॥	८ लाख	१४४०००००००
५	ब्रह्मदेवलोके ॥	४ लाख	७४०००००००
६	लातकदेवलोके ॥	५००००	४००००००००
७	महाशुकदेवलोके ॥	४००००	७२०००००००
८	सहस्रारदेवलोके ॥	६०००	१०८००००००
९	आनतदेवलोके ॥	१०००	३६००००
१०	प्राणतदेवलोके ॥	१०००	३६००००
११	ग्रारणदेवलोके ॥	१५०	१७००००
१२	अच्युतेश्वरलोके ॥	१५०	१७००००
१३	प्रथमत्रीके ॥	१११	१३३७०
१४	बीजेत्रीके ॥	१०७	१४७४०
१५	त्रोजेत्रीके ॥	१००	१४००००
१६	अनुचरपाचे ॥	५	६००
		कुल ८४४७०३	कुल १५४४४४४४६०

प्रथमदेवलोकथी १२ मा सुधी प्रत्येक चैत्ये १८० प्रतीमा रे ॥  
 पाच सज्जानी ६० प्रतीमा । त्रण वारणाना चोमुखनी १२ प्रती  
 मा । मध्य चैत्यनी १०८ प्रतीमा । सर्व मली १८० जाणवी ॥ ग्रै  
 वेक अनुचरे १२० कष्टपातीत रे, माटे सज्जा नथी ॥

## ॥ तिच्छालोकमा चैत्य विवरसंख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नाम	जिनचैत्य संख्या	जिनविव संख्या
१	व्यंतर असंख्यनगरे ॥	असंख्यनुवन	असंख्यविव
२	जोतपीचरथरमां ॥	असंख्यनुवन	असंख्यविव
३	नंदीश्वरद्वीपमां प्र०३२४	५४	६४४७
४	कुंमलद्वीपमां ॥	४	४४६
५	रुचकद्वीपमां ॥	४	४४६
६	कुंमलगिरिमां प्र०१२०	३०	३६००
७	ढव उत्तरकुरुमां ॥	१०	१२००
८	मेरुवनने विपे ॥	८०	८६००
९	गजदंता पर्वते ॥	४०	४४००
१०	वखार पर्वते	८०	८६००
११	श्वेतकुलर पर्वते ॥	४	४८०
१२	मानुषोत्तर पर्वते ॥	४	४८०
१३	दिग्गजे ॥	४०	४८००
१४	इहे ॥	८०	८६००
१५	कंचनगिरिये ॥	१०००	१२००००
१६	महानर्योये ॥	८०	८४००
१७	दिर्घ वैताढ्य गिरिये ॥	१४०	२०४००
१८	कुमे ॥	३८०	४५६००
१९	यमकगिरिये ॥	४०	४४००
२०	मेरुपर्वतनी चूलीकाये	५	६००
२१	जंबुप्रसुख वृक्षे ॥	११४०	१४०४००
२२	वृत्वैताढ्यगिरिये ॥	४०	२४००
२३	नगरी वोजयादिके ॥	१६	१८४०
		कुल ३२५९	कुल ३९१३२०

(१४८)

एहमा ६० प्रासाद तेमां प्रत्येके १७४ पातिमा वाकी ३१४४  
प्रासाद त्रीड्वारा । तेमा प्रत्येके १७४ पतिमा ॥

## ॥ त्रिजगसंख्या ॥

अयोद्योके ॥	७४७००००००	१३८४६०००००००
उद्धोके ॥	८४४८०४३	१५४४४४४४६०
तिर्वालोके ॥	३२५४	३४१३७०

## ॥ एम त्रणलोकमां ॥

साश्वता प्रासाद ॥	साश्वता जिनविव ॥
८५४००२७३	१५४४८५८३६०७०

॥ इति साश्वता जिननुवन तथा जिनविव संख्यायत्र समाप्तम् ॥

## ॥ अथ शत्रुंजय लघुकल्प ॥

अद्भुतयकेवलिणा, कहिअ सेतुंझतिरमाहप्यं ॥  
नारयरिसिस्स पुरञ्ज, त निसुणह ज्ञावञ्ज ज्ञविअ ॥२॥

शब्दार्थ—हे ज्ञव्यजनो! अति मुक्त मुनिये नारदक्षपिनी आग  
ज शत्रुंजय तोर्थनु महात्म्य कद्युरे, तेने तमे ज्ञावयी साज्जलो.

सेतुजे पुमरीञ्ज, सिंचो मुणिकोमीपचसजुतो ॥

चित्तस्स पुणिमाए, सो जन्मद्व तेण पुंमरिञ्ज ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—शत्रुंजय उपर पुंमरिक गणवर पाच फोड साधु  
सहित चेत्रमालनी पुनमे सिद्ध थया हे, तेथी ते पर्वतनु नाम  
पुंमरिक कहेवाय हे ॥ ५ ॥

नमि विनमि रायाणो, सिद्धा को मिहिं दोहीं साहुणं ॥  
तह दविम वालीखिल्ला, निव्वुआ दसय कोडिन् ॥३॥

**शब्दार्थ—**नमि अने विनमि राजा वे क्रोड साधुसहित सिद्ध थया. तेमज इविम अने वालीखिल वे वंधु मुनियो इशकोम साधु साथे सिद्ध थया भे. ॥ ३ ॥

पञ्जन्नसंबपमुहा, अर्घु छाँ कुमारको मिन् ॥

तह पमवावि पंचय, सिद्धिगया नारयरिसि य ॥४॥

**शब्दार्थ—**प्रद्युम्न सांव विगरे साडा आठ क्रोम कुमारो तेमज पांच पांकवो अने नारदक्षपि सिद्धि पद पाम्या. ॥ ४ ॥

थावच्चा सुय सेलं—गाय मुणिणोवि तह राममुणि ॥  
नरहो दसरहपुत्तो, सिद्धा वंदामि सेतुंजे ॥ ५ ॥

**शब्दार्थ—**थावच्चा पुत्र मुनि, शुकमुनि, शेखकमुनि तेमज इशरथना पुत्र राममुनि अने भरतमुनि शत्रुंजय उपर सिद्ध थया भे, तेमने हुं वांडु ठुं. ॥ ५ ॥

अव्वेवि खवियमोहा, उसन्नाइविसालवंससंज्ञुआ ॥  
जे सिद्धा सेतुंजे, तं नमह मुणि असंखिङा ॥ ६ ॥

**शब्दार्थ—**बोजा पण मोहने खपावनारा अने झषन्नादिकना विशाल वंशमां उत्पन्न थयेला जे मुनियो शत्रुंजय उपर सिद्ध थया भे ते असंख्याता मुनियोने हुं वांडु ठुं. ॥६॥

पंनास जोयणाइ, आसी सेतुंजविडो मूले ॥

दसजोयण सिहरतले, उच्चतं जोयणा अष ॥ ७ ॥

**शब्दार्थ—**मूलमां शत्रुंजयनो विस्तार पचास जोजन हतो, शिखर उपर दश जोजन अने उंचपणे आठ जोजन हतो.

जं लहइ अन्नतिडे, उग्गेण तवेण बन्नचेरेण ॥  
तं लहइ पयत्तेण, सेतुंजगिरिम्मी निवसते ॥ ७ ॥

**शब्दार्थ—**अन्यतोर्धमा उग्रतपथी अथवा ब्रह्मचर्यधी जे फल प्राप्त थाय ते फल प्रयत्ने शत्रुजय उपर वसवाथी थाय रे ७

ज कोमिए पुन्नं, कामियआहारन्नोइआ जेऊ ॥

जं लहइ तडु पुन्नं, एगो वासेण सेतुंजे ॥ ८ ॥

**शब्दार्थ—**इष्टित झोजन वडे क्रोक माणसने जमानवाथी जे पुण्य थाय, ते पुण्य शत्रुजय उपर एक उपवास करवाथी थाय रे.

जं किची नामतीडं, सग्गे पायाले माणुसे खोए ॥

त सव्वमेव दिष्ठ, पुमरिए वदिए संत्ते ॥ १० ॥

**शब्दार्थ—**स्वर्ग, पाताल अथवा मनुष्य लोकमा जे कोइ पण नाम मात्र तीर्थ होय, ते सर्व फक्त शत्रुजयने वादवाथी दीर्घ जाणवा ॥ १० ॥

पमिलान्नते संघ, दिष्ठमदिष्ठेय साहूसेतुंजे ॥

कोमिगुणं च अदिष्ठ, दिष्ठेआ अणतये होई ॥ ११ ॥

**शब्दार्थ—**शत्रुजय पर्वतने दीर्घ अणदीर्घ पण तेना सन्मुख चालवाथी चतुर्विंध संघनी जक्कि करवा जेटलु पुण्य थाय रे, न देखवाथी क्रोक गणु अने देखवाथी अनतगणु थाय रे

केवलनाणुप्पत्ती, निवाण आसि जड्ह साहूणं ॥

पुमरिए वदित्ता, सव्वे ते वंदिया तड्ह ॥ १२ ॥

**शब्दार्थ—**ज्या साधुउनने ज्ञाननी उत्पत्ति अने मोक्षप्राप्ति होय रे, त्या ते पुक्करीकगिरिने वंदन करवाथी ते सर्वे मुनियोने वादा जाणवा ॥ १२ ॥

अग्रावयं समेए, पावा चंपाइ उज्जंत नगे य ॥  
वंदिता पुन्न फलं, सयगुणं तंपि पुंमरीए ॥ १३ ॥

**शब्दार्थ-**ऋषज्ञ देवनुं मोक्ष क्षेत्र अप्नापद, जिन सिद्धके  
त्र समेतशिखर, वीरप्रभुनुं मोक्षस्थान पावापुरी, वासुपूज्यनुं सिद्ध  
क्षेत्र चंपानगरी अने नेमनायनुं मोक्षस्थान गिरनार. ए सर्व ती  
र्थने वांदवाथी सो गणुं पुण्य पुंमरिक तीर्थने ज्ञेटवाथी थाय भे.  
पूछा करणे पुन्न, एगगुणं सयगुणं च पमिमाए ॥  
**जिणन्नवणेण सहस्रं, एंतगुणं पालणे होइ ॥ १४ ॥**

**शब्दार्थ-**पूजा करवाथी जे पुण्य थाय ते एक गणुं, तेथी  
सो गणुं प्रतिमा ज्ञराववाथी थाय भे, तेथो जिन ज्ञुवन कराव  
वाथी हजारगणुं अने अनंतगणुं फल तीर्थरक्षाथी होय भे. १४  
पमिमं चेइहरं वा, सित्तुंजगिरीस्स मढए कुणइ ॥

**ज्ञूतूण जरहवासं, वसइ सग्गेण निरुवसग्गे ॥ १५ ॥**

**शब्दार्थ-**जे माणस शत्रुंजय पर्वत उपर प्रभुनी प्रतिमा अथवा  
जिनमंदिर करावे भे, ते माणस ज्ञरत क्षेत्रनुं राज्य नोगवीने  
स्वर्ग अथवा मोक्ष पामे भे. ॥ १५ ॥

नवकार पोरिसीए, पुरिमहे गासणं च आयामं ॥

पुंमरीयं च सरंतो, फलकंखी कुणइ अञ्जतष्ठं ॥ १६ ॥

**शब्दार्थ-**फलनी इड्डा करनारो नोक्कारसोनुं, पोरसीनुं, पु  
रिमठनुं, एकासणानुं अने आंबीलनुं एटलानुं पच्चस्काण करे ते  
मज पुंमरिकनुं स्मरण करतो भतो उपवास करे. ॥ १६ ॥  
ठष छम दसम डुवा—खसाण मास छमास खवणाणं ॥  
तिगरणसुद्धो लहइ, सित्तुङ्गं संज्ञरंतोअ ॥ १७ ॥

**शब्दार्थ-**ठष, अद्धम, दशम, दुवाखस, पक्कहमण अने मा

सक्षमण। ए सर्व करवानु फल मन, वचन अने कायायी शुद्ध एवो  
जे माणस शत्रुंजयने संज्ञारे ते पामे दे ॥ १७ ॥

ब्रह्मेण नत्तेण, अपाणेण तु सत्त जत्ताइ ॥

जो कुण्ड सेवुंजे, तद्य नवे लहड़ सो मुखं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—जे माणस चोवीहार ब्रह्मके शत्रुंजयनी सात  
जात्रा करे दे ते त्रीजा नवे मोह पामे दे ॥ १८ ॥

अङ्गवि दीसइ लोए, नत्तं चर्झउण पुंमरीयनगे ॥

सगे सुहेण वचड, सीलविहूणोवि होकण ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—आज पण लोकमा देखाय दे के, जे माणस सी  
ल रहित रतो पण पुंडरिक गिरि उपर अनशन करे दे ते सुखे  
स्वर्गमा जाय दे ॥ १९ ॥

ब्रतं श्य पमां, चामर निगार थालदाणेण ॥

विजाहरोद्य हवड, तह चक्की होइ रहदाणा ॥ २० ॥

शब्दार्थ—माणस ब्रत ध्वजा, पताका, चामर, कदश अने  
थाल ए वस्तुलना दानथो विद्याधर थाय दे अने रथदानथो च  
कवर्ती पद पामे दे ॥ २० ॥

दस बीस तीस चत्ता, लखपन्नासा पुष्पदामदाणेण ॥

लहड़ चबूत्र रट-ठम दसम डुवालस फलाइ ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—दशलाख, बीशलाख, त्रीशलाख, चालीशलाख,  
अथवा पचासलाख पुष्पनी मालाना दानथो (चडावाथा) अनु  
कमे एक उपवासनु, वे उपवासनु, त्रण उपवासनु, चार उपवा  
सनु अथवा पाच उपवासनु फल थाय दे ॥ २१ ॥

धूवे पस्कुववासो, मासखमणं कपूरधूवंमि ॥

कित्तिय मासखमणं, साहूपमिलान्निए लहड़ ॥ २२ ॥

**शब्दार्थ—**कृष्ण अगुरुना धूपथी पंदर दिवसना उपवासनुं फल अने कर्पूरना धूपथी एक मासना उपवासनुं फल थाय ठे. बली साधुने शुद्ध आहारादिक आपवाथी केटलाक मासना उपवासनुं फल थाय ठे. ॥३२॥

न वितं सुवन्न नूमी—नूसणदाणेण अन्नतिहेसु ॥

जं पावङ्ग पुन्न फलं, पुच्छा न्हवणेण सित्तंजे ॥ ३३ ॥

**शब्दार्थ—**शत्रुंजय उपर तीर्थपतिने पूजा न्हावण कराववाथी जेटखुं पुण्यफल प्राप्त थाय, तेटखुं पुण्यफल बीजा तीर्थमां सुवर्ण, नूमी अथवा आन्नधणनां दानथी पण न थाय. ॥३३॥

कंतार चोर सावय, समुद्र दारिद्र रोग रिति रुदा ॥

मुच्चंति अविघेण, जे सेतुंजं धरंति मणे ॥ ३४ ॥

**शब्दार्थ—**जे माणस मनमां शत्रुंजयनुं ध्यान करे ठे ते माणस अरण्यना, चोरना, सिंहादिकना, समुद्रना, दारिद्रना, रोगना, शत्रुना अने ज्यंकर अग्निना ज्यने निर्विम्बपणे त्यजी दे ठे. सारावली पयन्नग, गाहाञ्च सुअहरेण नणिआञ्च ॥ जो पढङ्ग गुणङ्ग निसुणाई, सो लहङ्ग सितुंजजतफलं ३५

**शब्दार्थ—**श्रुतधरे सारावली नामना प्रक्षापना सूत्रमां जे गाथाञ्च कही ठे, तेने जे माणस ज्ञणे ठे, गणे ठे अथवा सांन्दले ठे, ते शत्रुंजयनी जात्राना फलने पामे ठे. ॥३५॥

॥ इति शत्रुंजय लघुकछप समाप्त ॥



॥ अथ उपगारी श्री रत्नागरसूरिजी कृत ॥  
॥ श्री रत्नाकर पचीसी ॥

श्रेयः श्रिया मंगलकेलिसद्वाः, नरेष्वदेवेष्वनताद्ग्रीष्मद्य ॥  
सर्वज्ञ सर्वातिशय प्रधान, चिरं जयं ज्ञानकलानिधान १

शब्दार्थ—मोक्ष लक्ष्मीने मंगल एवु कीमा करवानु मदिर,  
चक्रवर्ती अने इज्जे जेमना चरण कमलमा नमस्कार करी रह्या  
रे एवा, सर्वं जाण, चोत्रीश अतिशये करीने प्रधान अने ज्ञान  
कलाना ज्ञानार एवा हे प्रज्ञो । तमे दीर्घकाल जयवता वत्तो २  
जगलयाधार क्रपावतार, उर्वारसंसारविकारवेद्य ॥

श्रीवीतरागत्वयिमुग्धज्ञावा, विज्ञप्रज्ञोविज्ञपयामिकिचित् ॥

शब्दार्थ—त्रण जगत्ज्ञा आधार, क्रपाना अवतार, उर्वारे  
निवारखा योग्य सस्ताररूप विकारने उर करनारा वैद्य एवा हे  
विशेष जाण प्रज्ञो । हु ज्ञोला ज्ञावश्ची तमारी आगल काइ वि  
नती करुं दु ॥ ७ ॥

कि वालखीलाकलितो न वालः,  
पित्रोःपुरो जट्पति निर्विकट्पः ॥  
तथा यथार्य कथयामि नाथ,  
निजाशय सानुशयस्तवाये ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—हे नाथ ! वालकीडा सहित एवो वालक मा  
ता पितानी आगल विकट्प रहित शुं नयो बोलतो ? तेम हुं  
पण तमारी आगल पश्चाताप करतो ठतो म्हारो पोतानो आ  
शय कडु कु ॥ ३ ॥

दत्त न दान परिग्नीलित च,  
न शालिशील न तपोन्नितप्रभ् ॥

शुन्नो न जावोऽप्यन्नवन्नवऽस्मिन्,

विन्नो मया त्रांतमहो सुधैव ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—हे विन्नो ! मैं दान आप्युं नथी, सुशोन्नित एवं  
शीख पाढ्युं नथी, तप करयुं नथी तेमज आ ज्ञवमां मने शुन्न  
ज्ञाव पण थयो नथी, माटे अहो ! हुं फोगटज त्रांती पास्योहुं,  
दग्धोऽग्निना कोधमयेन दृष्टो,

उष्टेन लोज्ञारूपमहोरगेण ॥

प्रस्तोऽन्निमानाजगरेण माया—

जालेन वद्रोऽस्मि कथं ज्ञजे त्वां ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—हे प्रन्नो ! कोधरूप अग्निथी वलेखो, लोज्ञरूप उ<sup>ष्ट</sup>  
ष्ट महा सर्वे डसेखो, अन्निमान रूप अजगरे गलेखो अने माया  
थी वंधाइ रहेखो हुं तमने शी रीते ज्ञजी शकुं ? ॥ ५ ॥

कृतं मयासुव्र हितं न चेह,

लोकेऽपि लोकेश सुखं न मेऽनूत् ॥

अस्मादशां केवलमेव जन्म,

जिनेश जडो ज्ञवपूरणाय ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—हे लोकेश ! मैं परलोकमां हितकारी अने आ  
लोकमां पण हितकारी एवुं कांइ करयुं नथी, जेशी मने आ ज  
न्ममां सुखं नथी मछयुं, हे जिनेश्वर ! ते माटे असारा सरखा  
नो जन्म फक्त ज्ञव पूर्खा माटेज थयो रे. ॥ ६ ॥

मन्ये मनो यन्न मनोऽश्वृतं,

त्वदास्यपीयूषमयूखलाज्ञात् ॥

हुतं महानंदरसं कठोर—

मस्मादशां देव तदश्मतोऽपि ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—ह मनोङ्गवृत् । हु जाणु तु के, तमारा मुखरूप  
अमृतना किरणोनो लाज्ज थयाथी पण अमार मन महा आनद  
ने गृहण करतु नथी, तेथी ते पठरथी पण करीण ठे ॥ ७ ॥  
त्वत् सुदु प्राप्यभिद मयाप, रत्नत्रय नूरिज्जवन्नमेण ॥  
प्रमादनिजावशतो गतं तत्, कस्याग्रतो नायकपूत्करोमि

शब्दार्थ—सत्सारमा वहु जटकता एवा में डुखे मेलवी श  
काय एवा आ झान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रत्न तमाराथी  
मेलव्या हता ते प्रमाद निझना वशाथी गुमावी दीधा ठे, तो हवे  
हे नायक । हुं कोनी आगल जइने पोकार करु ॥ ८ ॥  
वैराग्यग्गो परवचनाय, धर्मोपदेशो जनरजनाय ॥  
वादाय विद्याध्ययन च मे नूत्, कियद्वेषे हास्यकर स्वमीश

शब्दार्थ—हे ईश । म्हारो वैराग्य रग वीजाने ठगवाने अर्थे  
थयो, वर्मोपदेश माणसोने राजो करवाने अर्थे थयो अने विद्या  
न्यास वाद करवा माटे थयो आवु म्हारु हाश्यकारक कृत्य  
केटलु कहु ॥ ९ ॥

परापवादेन मुख सदोपं, नेत्र परस्तीजनवीक्षणेन ॥  
चेतःपरापायविचितनेन, कृतं नविष्यामि कथं विज्ञोहम् ॥१०॥

शब्दार्थ—हे विज्ञो वीजाना अवता दोप वोखवाथी मुखने,  
परस्तीने जोवाथी नेत्रने अने वीजानुने कष्ट चितववाथी चिन्न  
ने एम ए त्रेने मलीन करवा ठे, तो हवे म्हारी शी गति थझे ?  
विमवित यत्स्मरघस्मराति—दशावशाल्स्वंविषयाधखेन ॥  
प्रकाशित तज्जवतो द्वियैव, सर्वज्ञ सर्वं स्वयमेव वेत्सि ॥११॥

शब्दार्थ—हे सर्वज्ञ कामदेवना पापनी पीकाना वश्यथी वि  
पयवेन आधला श्रेयदा में म्हारु पोतानु जे कुकूत्य इतु ते सर्व

आपनो आगल लज्याथी कहुं रे. वधारे शुं कहुं ? कारण आ पज सर्व जाणो गे. ॥ ११ ॥

ध्वस्तोऽन्यमंत्रैः परमेष्ठिमंत्रं, कुशास्त्रवाक्यैर्निहितागमोक्तिः  
कर्तुवृथाकर्मकुदेवसंगात्, अवांठिहिनायमतित्रमोमे ? १

शब्दार्थ—में मारणादि बीजा मंत्रोथी परमेष्ठि मंत्रनो नाश कस्यो, कुशास्त्र वचनोथी आगम वचननो नाश कस्यो अने कु देवना संगथो वृथा कर्म करवानी इच्छा करी. हे नाथ ! आ सर्व मने मतिज्ञृम श्रयो रे. ॥ १२ ॥

विमुच्यद्वक्खद्यगतं ज्ञवंतं, ध्यातामयामूढधियाहदंतः ॥  
कटाक्षवक्षोजगन्नीरनान्नी, कटीतटीयः सुदृशांविलासाः ॥

शब्दार्थ—हे प्रज्ञो ! नेत्रनी सन्मुख रहेता तमने त्यजी दइ मूढ बुद्धिलाला में स्त्रीयोनां कटाक्ष, स्तन, गंग्नीर नान्नी, केडना ज्ञाग अने विलासोनुं हृदयमां ध्यान कर्युं रे. ॥ १३ ॥

खोखेद्वणावक्निरोक्षणेन, योमानसोरागल्वोविलगः ॥  
नशुद्धसिद्धांतपयोधिमध्ये, धौतोप्यगत्तारककारणं किं १४

शब्दार्थ—हे तारक ! स्त्रीयोनां मुखने जोवाथी जे म्हारां मनने विषे श्रोमो रंग लाग्यो रे, ते रंगने में शुद्धसिद्धांत समुद्भुमां धोइ नाख्यो तो पण गयो नहि, तेनुं शुं कारण ? ॥ १४ ॥  
अंगं गंनं चं गंनं गणो गुणानां, ननिर्मलः कोपिकखाविलास ॥  
स्फुरत्प्रज्ञानप्रज्ञुताचकापि, तथाप्यहंकारं कदर्थितोहम् १५

शब्दार्थ—म्हारूं अंग सारुं नथी, म्हारामां कोइ गुणसमूह नथी, कोइ निर्मल कलाविलास नथी, तेम देदीप्यमान कांति अथवा कोइ पण प्रज्ञुता नथी, तो पण हुं अहंकारथी कदर्थना पास्थ्यो छुं. ॥ १५ ॥

आयुर्गत्याशुनपापबुद्धि., गतवयोनोविषयान्निलाप ॥  
यत्रश्वन्नैपञ्चविधौनधर्मे, स्वामिन्महामोहविमूलनामे १६

शब्दार्थ—हे स्वामिन् । हमेशा आयुष्य गततु जाय रे, पण पाप  
बुद्धि गती जतो नथो, बाढ्यादि अवस्था गङ्गा, पण विषयनो अन्नि  
लाप गयो नहि, वली औपधविधिमा यत्न करयो, पण धर्ममा यत्न  
करयो नहि खरेखर आ मने म्होटी मोह विटवना लागी रे १६  
नात्मानपुण्यनन्नवोनपापं, मया विटानाकटुगीरपीयं ॥  
आधारिकण्ठविधिकेवलाके, परिस्फुटेसत्यपिदेवधिगमा ॥

शब्दार्थ—हे देव ! केवल ज्ञाने करीने सूर्यरूप आप प्रगट  
रता में, ‘ आत्मा नथो, पुण्य नथी, नव नथी, पाप नथी ’  
आवी नास्तिकोनी कहवी वाणीने पान करी तथा कानमा धा  
रण करी, तेथी मने धिक्कार रे ॥ १७ ॥

न देवपूजा न च पात्रपूजा, न श्रावधर्मश्च न साधुधर्म ॥  
खब्धवापिमानुप्यमिदसमस्त, कृतं मयारण्यविलापतुल्यं ॥

शब्दार्थ—मे मनुप्य जन्म पामीने देव पूजा न करी, पात्र  
पूजा न करी, आवक धर्म न पाढ्यो तेमज साधुधर्म पण न  
पाढ्यो, तेथो में ए सधलो मनुप्य जन्म ग्ररण्यमा विलाप क  
रवा तुल्य करयो रे अर्थात् फोगट गुमावी नार्थ्यो रे ॥ १८ ॥  
चक्रेमयासत्स्वपिकामधेनु., कल्पदुचितामणिषुस्पृहार्ति ॥  
नजैनधर्मस्फुटशर्मदेपि, जिनेशमेपत्यविमूढन्नाव ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—हे जिनेश्वर ! मे असत्य एवी कामधेनु, कछप  
वृक्ष अने चित्तामणि रत्न विगेरे वस्तुमा स्पृहा करी, परतु प्रगट  
सुख आपनारा जिन धर्मने विषे स्पृहा करी नहि ए म्हारा वि  
शेष मूढ ज्ञावने जूच ॥ २० ॥

सज्जोगलीखानवरोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ॥  
दारानकारानरकस्यचित्ते, विचिंतिनित्यंमयकाधमेन ॥१०

**शब्दार्थ—**मैं अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा ज्ञोगनी लीलानो विचार करयो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार करयो नहि; धन मेलववानो विचार करयो, पण मरणानो विचार करयो नहि; स्त्रीयोनो विचार करयो, पण नरकनी वेडीनो विचार करयो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोरहदिसाधुवृत्तात्, परोपकाराङ्गयशोर्जितंच ॥  
कृतंनतीर्थोद्विरणादिकृत्यं, मयामुद्ध्राहारितमेवजन्म ॥११

**शब्दार्थ—**म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम मैं परोपकार माटे यश पण मेलव्यो नहि. वलो तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्यु नहि, तेथी मैं खरेखर म्हारो जन्म फोगट गुमावी लाख्यो. ॥ ११ ॥

वैराग्यरंगो न गुरुदितेषु, न उर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥  
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंनवाद्यः ॥

**शब्दार्थ—**मने गुरुए कहेलां वचनमां वैराग्यरंग न थयो, उर्जनोनां वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अध्यात्म लेश प्रगत्यो नहि; तेथी हे देव ! म्हाराथी आ संसार समुद्र शी रीते तराय ॥ १२ ॥

पूर्वञ्जवेकारिमयानपुरायं, आगामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये ॥  
यदौष्टशोहंममतेननष्टा, ज्ञूतोऽन्नवज्ञविज्ञवत्रयीशः ॥१३॥

**शब्दार्थ—**मैं पूर्वञ्जवमां पुराय करहुं नस्थी, आवता ज्ञवने विषे पण करीश नहि के, जेथी हुं आवो झःखी रह्योहुं; माटे हे इश म्हारा भूत, ज्ञविष्य अने वर्जमान कालना त्रणे जन्म वृथा नाश पाम्या.

(१४१)

किवामुधाहंवहुधासुधान्नुक्, पूज्यत्वदयेचरितंस्वकीयं ॥  
जल्पामियस्मात् त्रिजगत्स्वरूप—निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ—ह अमृतज्ञोजी । हु तमारी आगल फोगट म्हा  
रु चरित्र वधारे शु कहु ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत्  
ना स्वरूपने निरूपण करानारा थे, तो परी आ म्हारु कहेवु  
कोण मात्र थे ॥ ४४ ॥

दीनोद्वारधुरधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा—  
पात्र नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येता न याचे श्रीयम् ॥  
कित्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,  
श्रोरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्कर प्रार्थये ॥४५॥

शब्दार्थ—हे जिनेश्वर तमारा विना वीजो कोइ दीन मा  
णसोनो उघार करवाने समर्थ नश्री तेमज लोकमा म्हारा वि  
ना वीजो कोइ द्या करवा योग्य पात्र नश्री, तो पण हु ते ख  
हमीने मागतो नयी, परतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलहमीना समु  
द ! हे मगलना एक स्थान हु फक्त कछ्याणकारी एवा अने मो  
क्षु हेतु एवा उत्तम वोधीवोजरूप रत्ननी याचना करु दु ॥४५

॥ इति रत्नाकर पञ्चीशी ॥

(१४७)

## ॥ अथ समाधि शतक ॥

येनात्माबुध्यतात्मैव, परत्वेनैव चापरम् ॥

अद्विद्यानंतवोधाय, तस्मै सिद्धात्मने नमः ॥१॥

शब्दार्थ—जेमणे आत्माने आत्मारूपे जाएयो रे अने आत्माना ज्ञेद पणाए करीने शरीरने जाएयुं रे ते अद्विद्य अने अनंत वोधवाला सिद्ध ज्ञगवानने नमस्कार आउ. ॥ १ ॥

जयंति यस्यावदतोऽपि ज्ञारती—

विज्ञूतयस्तीर्थकृतोऽप्यनीहितुः ॥

शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे,

जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः ॥ २ ॥

शब्दार्थ—तीर्थकर भता पण वांच्छा रहित अने ताढ्वादि कश्ची अद्विरोने नहि उच्चारता एवाय पण जे प्रज्ञुनी वाणीनी संपत्तियो ( अथवा वाणी अने उत्र चामरादि संपत्तियो ) जयंती वर्ते रे. ते मोक्ष पामेला, ऋष्यादिद्वारा लोकोनो उद्घार कर नारा, उत्तम ज्ञानवाला, केवल ज्ञानशी सर्व लोकना व्यापक एवा, अनेक प्रकारनां ज्ञवङ्गःखने आपनारां कर्मने जीतनारा, ते मज आत्मरूपे रहेला ते प्रज्ञुने नमस्कार आउ ॥ २ ॥

श्रुतेन लिंगेन यथात्मशक्ति,

समाहितातःकरणेन सम्यक्

समीद्य कैवल्यसुखस्थिराणां,

विविक्तमात्मानमयान्निधास्ये ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—हुं म्हारी शक्ति प्रमाणे शास्त्राथी, हेतुथी अने नि श्वल एवा अतःकरणाथी उत्तमरीते अनुज्ञव कराने पठी सर्व क

मर्मना रहित पणाने विषे ( मोक्षने विषे ) सुखनी इत्ता करनारा  
उनुं कर्ममलरहित जीवस्वरूप कहीश ॥ ३ ॥

वहिरिंत परथ्वेति, त्रिधात्मा सर्वदेहिषु ॥

उपेयात्तत्र परमं, मध्योपायाद् वहिस्त्यजेत् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—सर्वे प्राणीयोमा वहिरात्मा, अतरात्मा अने पर  
मात्मा एम त्रण प्रकारना आत्मा हे तेमा मध्य अंतरात्माना  
उपायथी परमात्माने पामबु तथा वहिरात्माने त्यजी देवो ॥ ४ ॥

वहिरात्मा शरीरादौ, जातात्मचांतिरातरः ॥

चित्तदोषात्मविच्छातिः परमात्मातिनिर्मलः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—शरीर, वाणी, मन इत्यादिकने विषे आत्मा एवी  
जेनी ब्राति आय ते वहिरात्मा जाणवो चित्त, दोष अने आत्मा  
तेमने विषे जेनी ब्राति नाश पामे अर्थात् चित्तने चित्तपणाथी,  
दोषो ने दोषपणाथी अने आत्माने आत्मापणाथी जाणेते अतरा  
त्मा जाणवो अने जेना सर्व कर्ममल क्षय थइ गया होय ते  
परमात्मा जाणवो ॥ ५ ॥

निर्मल. केवल शुद्ध, विविक्त प्रज्ञुरव्ययः ॥

परमेष्ठी परात्मेति, परमात्मेश्वरो जिन ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—कर्मना मलरहित, शरीरादि सघध रहित, इत्य  
ज्ञाव कर्मना अज्ञावथी अत्यत शुद्ध, शरीर अने कर्मथी न स्पर्श्य  
थयेलो, इज्ञादिकनो स्वामी, नहि चेवे तेवो, इज्ञादि देवोने वादवा  
योग्य पदने विषे रहेलो, ससारी जीवोथी उत्कृष्ट, निरतर उत्तम  
ऐश्वर्ययुक्त अने सर्व कर्मने उखेडी नाखनारो जे होय ते  
परमात्मा जाणवो ॥ ६ ॥

वहिरात्मेन्द्रियद्वारै—रात्मज्ञानपराङ्गम् ॥

स्फुरितस्वात्मनो देहमात्मत्वेनाध्यवस्थति ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—इदिय द्वारे करीने व्हारना अर्थने प्रहण करतो बहिरात्मा आत्मज्ञानश्री अवला मुखवालो होय ठे; तेथी ते बहिरात्मा प्रगट पोताना देहने आत्मारूपज जाणे ठे. ॥ ७ ॥

नरदेहस्थमात्मानमविद्यान्मन्यते नरम् ॥

तिर्यंचं तिर्यगङ्गस्थं, सुराङ्गस्थं सुरं तथा ॥८॥

शब्दार्थ—बहिरात्मा मनुष्य देहमां रहेला आत्माने मनुष्य, तिर्यंचना शरीरमां रहेला आत्माने तिर्यंच, तेमज देवतानां शरीरमां रहेला आत्माने देवता माने ठे. ॥ ८ ॥

नारकं नारकांगस्थं, न स्वयं तत्त्वतस्तथा ॥

अनंतानंतधीशक्तिः, स्वसंवेदोऽचलस्थितिः ॥९॥

शब्दार्थ—बली नारकीना शरीरमां रहेला आत्माने नारकी माने ठे, परंतु तत्त्वथी तेवी रीते पोताने जाणतो नथी. परमात्मा पोते तो अनंत अनंत वुडि अने शक्तिवालो, पोतानेज जाणवा योग्य अने अचल स्थितिवालो ठे. ॥ ९ ॥

स्वदेहसदृशं दृष्टा, परदेहमचेतनम् ॥

परात्माधिष्ठितं मूढः, परत्वेनाध्यवस्थति ॥१०॥

शब्दार्थ—परमात्माए कर्मना वश्यथी अंगीकार करेला अने अचेतन एवा परदेहने पोताना देह सरखा जोश मूढ एवो वहि रात्मा ते परदेहने परमात्मपणाए अंगीकार करे ठे ॥ १० ॥

स्वपराध्यवसायेन, देहेष्वविदितात्मनाम् ॥

वर्तते विद्वमः पुसां, पुत्रज्ञार्यादिगोचरः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—आत्मस्वरूप न जाणनारा पुरुषोने देहने विषे पोताना अने परना अध्यवसायथी पुत्र खी विगेरेने गोचर ए वो विद्वम् थाय ठे, अर्थात् अनात्मारूप अने अपकार करनारा

एवाय पण स्त्री पुत्रादिकने अनेधन धान्यादिकने पोतानो उपकार करनारा जाए ठे वली तेमना लाज्जने विषे सतोष अनेअलाज्जने विषे परिताप तथा आत्मवध पण करे ठे ॥ ११ ॥

**अविद्यासंज्ञितस्तस्मात्संस्कारो जायते हृष्टः ॥**

**येन लोकोङ्गमेव स्व, पुनरप्यन्निमन्यते ॥ १२ ॥**

शब्दार्थ—ते वित्रम थकी अविद्या नामवालो अविचल संस्कार थाय ठे के, जे संस्कारे करीने अविवेकी लोक अन्मातर ने विषे पण पोताना शरीरनेज आत्मा माने ठे. ॥ १२ ॥

**देहे स्वबुद्धिरात्मानं, पुनत्त्येतेन निश्चयात् ॥**

**स्वात्मन्येवात्मधीस्तस्माद्वियोजयति देहिनम् ॥ १३ ॥**

शब्दार्थ—शरीरने विषे आत्मबुद्धि करनारो बहिरात्मा परमार्थधी ए देहे करीने आत्माने जोमो देहे अर्थात् दीर्घ ससारी करेठे अने पोताना आत्माने विषे आत्मबुद्धि करनारो अत्तरात्मा ते शरोरादिथी आत्माने वियोग करावे ठे. अर्थात् मुक्ति पमारे ठे

**देहेष्वात्मधिया जाताः, पुत्रज्ञार्यादिकष्टपना ॥**

**संपत्तिमात्मनस्तान्निर्मन्यते हा हतं जगत् ॥ १४ ॥**

शब्दार्थ—देहने विषे आत्मबुद्धि करवाथी पुत्र ज्ञार्यादि कष्टपना थइ ठे अने ते अनात्मिय कष्टपनाथी पुत्र ज्ञार्यादिने आत्मानी सपत्ति माने ठे हाय हाय! एज कारणे पोताना स्वरूपना ज्ञानथी जृष्ट थयेलु जगत् नाश पाम्यु ठे अर्थात् बहिरात्मारूप बन्यु ठे ॥ १४ ॥

**मूल ससारङ्ग खस्य, देह एवात्मधीस्ततः ॥**

**त्यक्त्वैना प्रविशेदत्तर्वहिरव्यावृत्तेऽद्विः ॥ १५ ॥**

शब्दार्थ—शरीर एज आत्मा एवी जे बुद्धि तेज ससारना

इःखनुं कारणे रे, माटे ते शरीर एज आत्मा एवी बुद्धिने त्य  
जी इह बहार अप्रवृत्त रे इंडियो जेनो एवो पुरुष अंतरमां प्रवेश  
करे रे. अर्थात् आत्माने विषे आत्मबुद्धि करे रे. ॥ १५ ॥

**मतश्शयुत्खेन्द्रियघ्नैः पतितो विपयेष्वहम् ॥**

**तान्प्रपद्याहमिति मां, पुरा वेद न तत्त्वतः ॥ १६ ॥**

शब्दार्थ—पोताश्री (आत्मस्वरूपथी) चरोने हुं इंडियघ्नरे  
करीने विषयने विषे पमेलो हुं. अर्थात् प्रवृत्त अयेलो हुं. माटे  
ते विषयोने (आ मने उपकार करनारा रे, एवा विचारश्री)  
अंगीकार करीने अनादि कालथी हुं मने पोताने तत्त्वथी जाण  
तो नयो. ॥ १६ ॥

**एवं त्यत्त्वा बहिर्वाचं, त्यजेदंतरशेषतः ॥**

**एप योगः समासेन, प्रदीपः परमात्मनः ॥ १७ ॥**

शब्दार्थ—ए प्रमाणे कहेजा न्यायश्री पुत्र, स्त्री, धन धा-  
न्यादि लक्षणवाली बहिर्वाणीने त्यजी इने पठो (हुं कर्ता हुं,  
सुखी हुं, डुखी हुं, इत्यादि लक्षणवाली) अंतर्वाणीने सर्व प्रकारे  
त्यजी देवी, ए प्रमाणे बहिरात्माने अने अंतरात्माने त्यजी देवा  
रूप योग संक्षेपथी परमात्मानां स्वरूपने प्रकाश करनारो रे.

**यन्मया हृथ्यते रूपं, तन्न जानाति सर्वथा ॥**

**जानन्न हृथ्यते रूपं, ततः केन ब्रवीम्यहम् ॥ १८ ॥**

शब्दार्थ—हुं जे स्वरूपने जोवुं हुं, तेने हुं सर्व प्रकारे जाण  
तो नथी अने जेने हुं जाणुं हुं ते स्वरूप देखातुं नथी तो पठो हुं  
कोनी साथे बोलुं ? ॥ १८ ॥

**यत्परैः प्रतिपाद्योऽहं, यत्परान् प्रतिपादये ॥**

**उन्मत्तचेष्टितं तन्मे, यदहं निर्विकल्पकः ॥ १९ ॥**

शब्दार्थ—उपाध्यायादिकथी जो हु शिक्षण करात तुं अथवा हु शिष्यादिकने जे शिक्षण करतु ते सर्व म्हारुं उन्मत्त चेष्टित ठे कारणके, हु निर्विकल्प तु ॥ १४ ॥

यदग्राह्य न गृह्णाति, गृहीत नापि मुचति ॥

जानाति सर्वथा सर्व, तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—जे शुद्ध एव आत्मस्वरूप, नहि गृहण करवा यो ग्य एवा कर्मना उदय निमित्त कोधादिस्वरूपने गृहणतुं नथी अने गृहण करेला अनंतज्ञानादि स्वरूपने त्यजी देतु नथी व ली इय पर्यायादिके करोने सर्व चेतन तथा अचेतनने जाणे ठे, ते हु पोताथीज जाणवा योग्य आत्मा तु ॥ १५ ॥

उत्पन्नपुरुषपञ्चातेः, स्थाणौ यद्विचेष्टितम् ॥

तद्वन्मे चेष्टित पूर्व, देहादिष्वात्मविच्चरमात् ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—आज्ञलामा उत्पन्न थयेली पुरुष आतिने लीघे जेवी रीते विविध उपकारादि चेष्टित कराय ठे तेवीज रीते आ कहेला आत्मस्वरूपनु ज्ञान थवा पूर्वे देहादिकने विपे आत्मवु द्विना ब्रमथी म्हारु चेष्टित हतु ॥ १६ ॥

यथासौ चेष्टते स्थाणौ, निवृत्ते पुरुषयहे ॥

तथा चेष्टोऽस्मि देहादौ, विनिवृत्तात्मविच्चरमः ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—जेवी रीते ( आज्ञलामा उत्पन्न थयेली पुरुष ब्रातिवालो ) पुरुष, पुरुषारोप निवृत पामेला जन पदार्थमा उप कार तथा अपकार न करवारूप जे चेष्टा करे ठे तेवी रीते दे हादिकमा निवृत पामी ठे आत्मब्राति जेने एवी चेष्टा वालो हु थइशा ॥ १७ ॥

येनात्मनानुज्ञयेऽह—मात्मनैवात्मनाऽत्मनि ॥

सोऽहं न तन्न सा नासौ, नैको न द्वौ न वा वहुः १८

(३४७)

शब्दार्थ—जे चैतन्यस्वरूप आत्माए करीने हुं पोतानां स्वरूपने विषे पोताने जाणवाना स्वज्ञाववाला आत्मावेज अनुज्ञव करुं हुं के, ते हुं पुरुष, स्त्री के नपुंसक नथी. बली एक, वे अथवा वहु नथी. ॥३३॥

यदज्ञावे सुषुप्तोऽहं, यज्ञावे व्युत्तिः पुनः ॥

अर्तांज्ञियमनिर्देश्यं, तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥३४॥

शब्दार्थ—जे पोताने जाणवा योग्य शुद्ध स्वरूपने न पाम वारूप गाढ निःशाथी सूतेलो अने बली जे पोताने जाणवा योग्य शुद्ध स्वरूपने पामवारूप जागी उरेलो रे ते हुं इंदियोने अग्राह्य, वाणीने अगोचर अने पोताथीज जाणवा योग्य हुं ॥३४॥

क्षीयंतेऽत्रैव रागाद्या—स्तत्वतो मां प्रपश्यतः ॥

बोधात्मानं ततःकश्चिन्न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥३५॥

शब्दार्थ—आज जन्मने विषे ज्ञान स्वरूप एवा मने तत्ववर्ते जोवाथी रागादिक शत्रुउ क्य पामे रे, पठी मने कोइ शत्रु नथी अने मित्र पण नथी. ॥३५॥

मामपश्यन्नयं लोको, न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥

मां प्रपश्यन्नयं लोको, न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥३६॥

शब्दार्थ—मने न जोई शकतो एवो आ लोक म्हारो शत्रु अने मित्र नथी तेमज मने जोइ शकतो एवो पण आ लोक म्हारो शत्रु अने मित्र नथी ॥३६॥

त्यक्त्वैवं बहिरात्मानमंतरात्मव्यवस्थितः ॥

नावयेत्परमात्मानं, सर्वसंकल्पवर्जितः ॥३७॥

शब्दार्थ—ए प्रभाषे अंतरात्माने विषे रहेलो पुरुष बहिरात्मा ने त्यजी सर्व प्रकारना संकल्प रहित थया रतो परमात्माने नावे.

सोऽहमित्यात्तसंस्कारस्तस्मिन्नावनया पुनः ॥

तत्रैव दृढसंस्कारात्मने ह्यात्मनः स्थितिम् ॥४७॥

शब्दार्थ—वली ते परमात्माने विषे ज्ञावनावडे ग्रहण करी थे वासना जेणे एवो ते अनंतज्ञानस्वरूप परमात्मारूप हु, ते परमात्माने विषे दृढ संस्कारथो (अविचल वासनाथी) आत्मानी स्थितिने पासु दु ॥ ४८ ॥

मूढात्मा यत्र विश्वस्तस्ततो नान्यज्ञयास्पदम् ॥

यतो जीतस्ततो नान्यदज्ञयस्थानमात्मन ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ—वहिरात्मा जे पुत्र स्त्री विगेरने विषे (आ म्हारा थे अने हुंतेमनो दु) एवो विश्वास पाम्यो वे, तेथी तेने बीजो ज्ञय नथी अर्थात् शरीरने लीधेज ज्ञय रहेखो वे वली जे परमात्म स्वरूपने जाणावाथी ज्ञय पाम्यो थे, तेथी बीजु आत्माने अज्ञ यस्थान नथी ॥ ४९ ॥

सर्वेऽद्वियाणि संयम्य, स्तिमितेनांतरात्मना ॥

यत्क्षणं पश्यतो ज्ञाति, तत्तत्त्वं परमात्मन ॥ ५० ॥

शब्दार्थ—सर्वे इद्वियोने नियमभा राखीने क्षण मात्र अनुज्ञव करवाथी निश्चल एवा मन वडे जे स्वरूप देखाय वे, तेज परमात्मानुं स्वरूप वे ॥ ५० ॥

य परात्मा स एवाहं, योऽहं स परमस्ततः ॥

अहमेव मयोपास्यो, नान्य कश्चिदिति स्थिति ५१

शब्दार्थ—जे परमात्मा तेज हुं अने जे हु ते परमात्मा तेथी हुज म्हारे पोताने उपासना करवा योग्य दु बीजो कोइ उपासना करवा योग्य नथी, ए स्थिति वे ॥ ५१ ॥

प्राच्याद्य विषयेऽन्योऽहं, मा मयैव मयि स्थितम् ॥

योधात्मानं प्रपन्नोऽस्मि, परमानदनिर्वृत्तम् ॥ ५२ ॥

**शब्दार्थ—**आत्मस्वरूपवडे करीने विषयथी निवृत्ति पामीने आत्मस्वरूपने विषे रहेला म्हारा ज्ञानस्वरूप अने उच्चम आनंदथी सुखी एवा आत्माने हुं प्राप्त थयेलो वुं. ॥ ३७ ॥

यो न वेत्ति परं देहा—देवमात्मानमव्ययम् ॥

लज्जते न स निर्वाणं, तप्त्वापि परमं तपः ॥ ३८ ॥

**शब्दार्थ—**जे पुरुष, प्राप्त थयेला देहथी पर अने अव्यय एवा आत्माने कहेली रीते नथी जाणतो, ते उत्कृष्ट एवां तपने करतो भतो मोक्षपद पामतो नथी. ॥ ३८ ॥

**आत्मदेहांतरज्ञान—**जनिताह्वादनिर्वृतः ॥

तपसा उष्ट्रृतं घोरं, नुंजानोऽपि न खिद्यते ॥ ३९ ॥

**शब्दार्थ—**आत्मा अने देहना ज्ञेदज्ञानथी उत्पन्न थयेला हर्षे करीने सुखी थयो उत्तो वार प्रकारनां तपयो घोर पापने ज्ञोगवतो एवो पण माणस खेद पामतो नथी. ॥ ३९ ॥

**रागदेषादिकल्पोलैरलोलं यन्मनोजलम् ॥**

स पश्यात्यात्मनस्तत्त्वं, स तत्त्वं नेतरो जनः ॥ ३५ ॥

**शब्दार्थ—**रागदेषादि कल्पोलथी जेनुं मन रूप जल मोलाइ गयुं नथी, ते आत्मतत्त्वने जूए रे. वली ते जोनारो पौतेज पर मात्मरूप रे. वीजो परमात्म रूप नथी. ॥ ३५ ॥

**अविक्षिप्तं मनस्तत्त्वं, विक्षिप्तं त्रांतिरात्मनः ॥**

**धारयेतदविक्षिप्तं, विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः ॥ ३६ ॥**

**शब्दार्थ—**रागादिकथी अपरिणामित एवुं आत्मानुं वास्तविक स्वरूप रे अने तेनाथी जे उलटुं ते आत्मानी त्रांति आत्मरूप रहित रे. ते कारण माटे रागादिकथी अपरिणामित एवा मनने धारण करवुं, परंतु रागादिकना विकारवाला मननो आश्रय करवो नहि. ॥ ३६ ॥

अविद्याज्ञ्याससस्करैरवशं द्विष्ट्यते मन ॥

तदेव ज्ञानसंस्करैः, स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्ठते ॥ ३६ ॥

**शब्दार्थ-**शरीरने विषेज पवित्र अने स्थिर एवु आत्मा तथा आत्मिय विगेरे जे ज्ञान ते अविद्या, ते अविद्याना अज्ञ्या सधी उत्पन्न थयेलो वासनाये करीने अवश (विषयने अने इंडियो ने आविन तथा आत्माने आविन नहि) एवुं मन थाय रे तेज मन ज्ञानस्तस्कारे करीने आत्मस्वरूपने विषे रहे रे ॥ ३६ ॥

अपमानादयस्तस्य, विद्वेषो यस्य चेतस ॥

नापमानादयस्तस्य, न द्वेषो यस्य चेतसः ॥ ३७ ॥

**शब्दार्थ-**जेना चिन्नने रागादि परिणाम रे तेने अपमाना दि होय रे अने जेना चिन्नने रागादि परिणाम नधी तेने अपमा नादि पण नधी ॥ ३७ ॥

यदा मोहात्प्रजायेते, रागद्वेषौ तपस्विनः ॥

तदेव ज्ञावयेत् स्वस्यमात्मानं शाम्यत क्षणात् ३८

**शब्दार्थ-**ज्यारे तपस्विने मोहनीय कर्मना उदयथी रागदे प उत्पन्न थायरे त्यारे तेउ क्षणमात्रमां रागद्वेषने शाति पमाड ता रता पोताना स्वरूपमा रहेला आत्माने ज्ञावे रे ॥ ३८ ॥

यत्र काये मुने. प्रेम, तत प्राच्यव्य देहिनम् ॥

बुद्ध्या तद्वत्तमे काये, योजयेत्प्रेम नड्यति ॥ ४० ॥

**शब्दार्थ-**मुनिने जे पोताना अथवा परना शरीरने विषे स्नेह थाय रे ते शरीरथी बुद्धिकरे आत्माने पाठो फेरवीने तेथा पण उच्चम एवा चिदानन्दमय आत्म स्वरूपने विषे जोडे रे के, जेथी काया उपर स्नेह थतो नधी ॥ ४० ॥

आत्मविद्वमज दुख—मात्मज्ञानात्प्रजाम्यति ॥

नायतास्तत्र निवांति, कृत्वापि परम तप ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ—शरीरादिकमां आत्मा एवा वित्तमयी थयेलुं उःख  
आत्मज्ञानयी नाश पामे रे. वली आत्मस्वरूपमां असावधान  
एवा पुरुषो उत्कृष्ट एवुं तप करीने पण मोक्ष पामता नयी. ४१

शुन्नं शरीरं दिव्यांश्च, विषयानन्निवांश्चति ॥

उत्पन्नात्ममतिदेहे, तत्त्वज्ञानी ततश्चयुतिम् ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ—शरीरने विषे उत्पन्न थयेली आत्म बुद्धिवालो अ  
र्थात् बहिरात्मा पुरुष शुन्न एवा शरीरने अने दिव्य एवा विष  
योने इड्डे रे. तथा तत्त्वज्ञानी पुरुष शरीरनी निवृत्तिने इड्डे रे.

परत्राहंमतिः स्वस्माच्युतो बध्नात्यसंशयम् ॥

स्वस्मिन्नहंमतिद्युत्वा, परस्मान्मुच्यते बुधः ॥४३॥

शब्दार्थ—शरीरने विषे आत्मबुद्धिवालो बहिरात्मा आत्म  
स्वरूपयी उष्ट अइने खेरेखर बंधन पामे रे अने आत्मस्वरूपने  
विषे आत्मबुद्धिवालो अंतरात्मा शरीरादिकयी जूदो अइने  
मुक्ति पामे रे. ॥ ४३ ॥

दृश्यमानभिदं मूढस्त्रिलिंगमवबुध्यते ॥

दृदमित्यवबुद्धस्तु, निष्पन्नं शब्दवर्जितम् ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—बहिरात्मा आ देखाता पुरुष, स्त्री अने नपुंसक  
रूप त्रण लिंगने त्रिलिंगरूप माने रे अने अंतरात्मा अनादिसिद्ध  
अने विकल्पादिके वर्जित एवा आत्मतत्त्वनेज माने रे. ॥४४॥

जानन्नप्यात्मनस्तत्त्वं, विविक्तं ज्ञावयन्नपि ॥

पूर्ववित्तमसंस्कारान्नांतिं न्नयोऽपि गद्धति ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ—अंतरात्मा आत्मतत्त्वने जाणतो उतो तथा शरीरा  
दिकयी जूडं मानतो उतो पण पूर्व वित्तमना संस्कारयी फरीने  
पण ब्रांति पामे रे. ॥४५॥

अचेतनमिद दृश्य—महृश्य चेतन ततः ॥

क रुद्ध्यामि क तुष्यामि, मध्यस्थोऽहं नवाम्यतः ४६

शब्दार्थ—आ देखातुं एवु शरीरादि जडे अने न देखातुं एवु आत्मस्वरूप चैतन्यरूपे रे, माटे हु कोना उपर क्रोध अने को ना उपर सतोष करु तेथी द्वे हुं मध्यस्थरूप थाउ दु ४६

त्यागादाने वहिर्मूढः, करोत्यध्यात्ममात्मवित् ॥

नातर्वहिरुपादानं, न त्यागो निष्ठितात्मनः ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—वहिरात्मा वाह्यवस्तुने विषे त्याग अने अज्ञिलाप करे रे अंतरात्मा आत्मस्वरूपने विषे त्याग अने अज्ञिलाप करे रे, परंतु कृत कृत्य एवा परमात्माने तो अतरात्माने विषे अज्ञिलाप अने वहिवस्तुने विषे त्याग एमानुं काइ नयो ॥ ४७ ॥

युंजीत मनसात्मान, वाक्यायाज्ञ्या वियोजयेत् ॥

मनसा व्यवहारं तु, स्यजेघाक्याययोजितम् ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—मानसिक ज्ञानयी आत्मानुं ध्यान करवु, पण वाणी अने कायाथी आत्माने जूळो करवो वली मननी साथे वाणी अने कायाथी जोडाएला व्यवहारने मने करीने त्यजी देवो जगद्वेहात्मदृष्टीना, विश्वास्य रम्यमेव च ॥

स्वात्मन्येवात्मदृष्टीना, कविश्वास कवा रति ४९

शब्दार्थ—शरीरने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् वहिरात्माने जगत् विश्वास करवा योग्य अने मनोहर लागे रे, परतु आत्मा ने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् अंतरात्माने क्या विश्वास अने क्या रति होय रे? अर्थात् तेने पुत्रादिकने विषे विश्वास अथवा प्रोति होती नयी, ॥४९॥

आत्मज्ञानात्परं कार्यं, न तु धो धारयेचिरम् ॥

कुर्यादिर्यवशात्किंचिद्वाक्यायाज्ञ्यामतत्पर ॥ ५० ॥

**शब्दार्थ—**आत्मज्ञान विना बीजुं कार्यं वहु वखत मनमां धा  
खुं नहि अने तेवुं ज्ञोजन व्याख्यानादिक कार्यं करवुं पडे तो ते  
आसक्ति रहित यहने फक्त पोताना अने परना उपकारना  
वशथीज करवुं ॥ ५७ ॥

यत्पञ्चामोन्द्रियैस्तन्मे, नास्ति यन्नियतेन्द्रियः ॥

**अंतःपश्यामि सानंदं, तदस्य ज्योतिरुत्तमम् ॥५८॥**

**शब्दार्थ—**हुं इंडियोवदे जे शारीरादिक जोउं बुं, ते म्हारुं  
रूप नथो, परंतु इंडियोने स्वाधिन करीने हुं म्हारी अंदर उ  
त्तम सुखरूप अबे इंडियोने अगोचर एवुं जे ज्ञान जोउं बुं,  
ते म्हारुं स्वरूप रे ॥ ५८ ॥

सुखमारवधयोगस्य, बहिर्दुःखमयात्मनि ॥

**बहिरेवासुखं सौख्य—मध्यात्मं ज्ञावितात्मनः ॥५९॥**

**शब्दार्थ—**आत्मस्वरूप जाणवामां उद्यमवंत शयेलाने वाह्य  
विषयमां सुख आय रे तथा आत्मविषयमां डुःख आय रे अने  
यथार्थ आत्मस्वरूप जाणेलाने वाह्यविषयमां डुःख तथा आत्मविष  
यमां सुख आय रे ॥ ५९ ॥

तद्वृयात्तपरान्पृष्ठे—तदिष्ठेतत्परो ज्ञवेत् ॥

**यैनाविद्यामयं रूपं, त्यक्त्वा विद्यामयं ब्रजेत् ॥५३॥**

**शब्दार्थ—**ते आत्मस्वरूप पोते कहेबुं, बीजाने पूरबुं, ते आ  
त्मस्वरूपनेज इछवुं अने तेमां तत्पर थवुं के, जेथी बहिरात्मरूप  
त्यजो इइ आत्मस्वरूपने पमाय ॥ ५३ ॥

शरीरे वाचि चात्मानं, संधते वाकूशरीरयोः ॥

**त्रांतोऽत्रांतः पुनरुत्तर्वं, पृथगेषां निबुध्यते ॥५४॥**

**शब्दार्थ—**वाणी अने शरीरने विषे त्रांति पामेलो बहिरा

त्मा पोताने शरीरमा अने वाणीमा आरोपण करे रे. बली यथार्थ  
ते स्वरूपने जाणनारो अतरात्मा वाणीना, शरीरना अने आत्मा-  
ना स्वरूपने जूदा जूदा जाणे रे. ॥ ५४ ॥

न तदस्तीद्वियार्थेषु, यत्केमंकरमात्मनः ॥

तथापि रमते वाल्मीकिवाङ्गानन्नावनात् ॥५५॥

शब्दार्थ—इद्वियार्थने विषे तेवु काइ नथी के, जे आत्मानु  
कुशल करनार थाय तो पण अङ्गानी वहिरात्मा ते इद्वियोना  
अर्थने विषे मिथ्यात्वना संस्कारथी रमे रे ॥ ५५ ॥

चिर प्रसुपास्तमसि, मूढात्मान. कुयोनिषु ॥

अनात्मोयात्मन्नतेषु, ममाहमिति जायति ॥५६॥

शब्दार्थ—अनादि मिथ्यात्व संस्कार होवाने दीधे चोराङ्गी  
खाख कुयोनिमा दीर्घकालथी सूतेदा वहिरात्मा परमार्थथी पो-  
ताना सबधी नहि एवा पुत्र स्त्री विगेरेने विषे ‘हु अने म्हारूं’  
एम कहेता रता जागे रे ॥ ५६ ॥

पउयेन्निरतर देहमात्मनोऽनात्मयेतसा ॥

अपरात्मधियाऽन्येपामात्मतत्वे व्यवस्थित. ॥५७॥

शब्दार्थ—आत्मतत्वने विषे रहेलो अतरात्मा पोताना शरीरने  
अनात्मवुद्धियो (आ आत्मा नथी एवा विचारथी) निरतर जूए  
रे तेमज वोजाउने ग्रा परमात्मा नथी ए एवी वुद्धियो जूए रे

अङ्गापित न जानति, यथा मा झापितं तथा ॥

मूढात्मानस्ततस्तेपा, वृथा मे झापनाश्रम ॥५८॥

शब्दार्थ—मूढात्मा जेम आत्मस्वरूप न समजाव्या रता  
नथी जाणतो तेमज समजाव्या रता पण नथी जाणतो, तेथी  
ते मूढात्माने म्हारे समजाववानो श्रमज फोगट रे ॥५८॥

यद्योधयितुमिह्नामि, तन्नाहं यदहं पुनः ॥

ग्राह्यं तदपि नान्यस्य, तत्किमन्यस्य बोधये ॥५४॥

**शब्दार्थ—**जे विकल्पमां व्याप्त अश्च रहेला आत्मस्वरूपने अथवा देहादिकने समजाववानी इह्ना करुं दुं. ते हुं पोते परमार्थयी आत्मस्वरूप नथी अने वली जे हुं चिदात्मरूप दुं ते बीजाने ग्राह्यमां आवुं तेम नथी. तो पर्ही हुं बीजाने शा माटे आत्म तत्वनो बोध करुं ? ॥ ५४ ॥

बहिस्तुव्यति मूढात्मा, पिहितज्योतिरिंतरे ॥

तुष्यत्यन्तः प्रबुद्धात्मा, बहिर्व्यावृत्तकौतुकः ॥६०॥

**शब्दार्थ—**अंदरना तत्त्व विषयने विषे मोहथी ढंकाश गयेला ज्ञानवालो बहिरात्मा शरीरादि वाह्य अर्थने विषे प्रसन्न आय भे अने शरीरादिकने विषे प्रीति रहित एवो अंतरात्मा पोतानां स्वरूपने विषे प्रसन्न आय भे. ॥६०॥

न जानति शरीरणि, सुखदुःखान्यबुद्धयः ॥

निग्रहानुग्रहधियं, तथाप्यत्रैव कुर्वते ॥ ६१ ॥

**शब्दार्थ—**शरीरो सुख डुःखने जाणतां नथी, तो पण बहिरात्मा एज शरीरादिकने विषे उपवासादि करवायी निग्रह करवानी अने कुंडल कमा विगेरेयी शणगारवावडे अनुग्रह करवानी बुद्धि करे भे. ॥ ६१ ॥

स्वबुद्धया यावद्गृहणीयात्, कायवाक् चेतसां त्रयम् ॥  
संसारस्तावदेतेषा, नेदान्यासे तु निवृत्तिः ॥ ६२ ॥

**शब्दार्थ—**ज्यांसुधी शरीर, वाणी अने चित्त ए त्रणने आत्म बुद्धियी ग्रहण करे त्यांसुधी संसार आय भे अने ते त्रणनो नेद अन्यास थ्यो एटले मुक्ति आय भे. ॥६२॥

घने वस्त्रे यथात्मानं, न घनं मन्यते तथा ॥

घने स्वदेहेष्यात्मानं न घनं मन्यते बुधः ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ—ज्ञानी पुरुष जेम मजबुत वस्त्र पहरवाथी पोताने मजबुत मानतो नथी तेम शरीर पण मजबुत होय तोपण आत्माने मजबुत मानतो नथी ॥ ६३ ॥

जीर्णे वस्त्रे यथात्मानं, न जोर्ण मन्यते तथा ॥

जीर्णे स्वदेहेष्यात्मानं, न जीर्ण मन्यते बुधः ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ—ज्ञानीपुरुष जेम जीर्ण वस्त्र पहरवाथी पोताने जीर्ण मानतो नथी तेम जीर्ण शरीर रता आत्माने जीर्ण मानतो नथी नष्टे वस्त्रे यथात्मान, न नष्ट मन्यते तथा ॥

नष्टे स्वदेहेष्यात्मान, न नष्ट मन्यते बुधः ॥ ६५ ॥

शब्दार्थ—ज्ञानीपुरुष जेम वस्त्र फाटी जवाथी पोताने नाश पामेलो जाणतो नथी तेम देह नाश पान्या रता आत्माने नाश पामेलो मानतो नथी ॥ ६५ ॥

रक्ते वस्त्रे यथात्मानं, न रक्त मन्यते तथा ॥

रक्ते स्वदेहेष्यात्मानं, न रक्त मन्यते बुधः ॥ ६६ ॥

शब्दार्थ—ज्ञानी पुरुष जेम वस्त्र रक्त रता पोताने रक्त मानतो नथी तेम पोतानो देह रक्त रता आत्माने रक्त मानतो नथी ॥ ६६ ॥

यस्य सस्पदमाज्ञाति, निस्पंदेन सम जगत् ॥

अप्रज्ञमक्रियाज्ञोग, स काम याति नेतर ॥ ६७ ॥

शब्दार्थ—जेने चंचल एवु आ जगत् जड, तेमज पदार्थनु ज्ञान अने सुखादिकनो अनुज्ञव न होवाने लीघे काष्ठ अने पा पाण तुळ्य जणाय वे, ते शातिने पामे वे, वीजो पामतो नथी,

शरीरकं चुके नात्मा, संवृतज्ञानविग्रहः ॥

नात्मानं बुध्यते तस्माद्भूमत्यतिचिरं ज्ञवे ॥ ६७ ॥

**शब्दार्थ-**शरीर रूप कंचवासी ढंकाइ गयो ऐ ज्ञानरूपदे ह जेनो एवो बहिरात्मा पोताने जाणी शकतो नथी, तेथी ते संसारमां वहु कालयी जटके ऐ. ॥ ६८ ॥

प्रविशज्ञात्वां व्यूहे, देहेऽणुनां समाकृतौ ॥

स्थितिचांत्या प्रपद्यते, तस्मात्मानम्बुद्ध्यः ॥ ६९ ॥

**शब्दार्थ-**पेसतां अने निकलतां एवा परमाणुनां समूहरूप अने समानकृतिवाला देहने विषे स्थितिनी चांतिथी बहिरात्मा ते देहने आत्मा माने ऐ. ॥ ६९ ॥

गौरः स्थूलः कृशो वाहमित्यड्जेनाविशेषयन् ॥

आत्मानं धारयेन्नित्यं, कैवल्यज्ञप्तिविग्रहम् ॥ ७० ॥

**शब्दार्थ-**हुं गोरो हुं जामो हुं अथवा पातलो हुं. एम अंग नी साये एकमेक न करतो रतो फक्त जाणपणारूप शरीरवा ला आत्माने नित्य धारण करे ऐ. ॥ ७० ॥

मुक्तिरेकांतिकी तस्य, चित्ते यस्याचला धृतिः ॥

तस्य नैकांतिकी मुक्तिर्यस्य नास्त्यचला धृतिः ॥ ७१ ॥

**शब्दार्थ-**जेनां चित्तमां अविचल आत्मस्वरूपनुं धारण क रक्षापणुं ऐ. तेने अवश्य मुक्ति प्राप्त आय ऐ अने जेनां चित्तमां अविचल आत्मस्वरूपनुं धारण करवा पणुं नथी तेने अवश्य मुक्ति प्राप्त रहतो नथी. ॥ ७१ ॥

जनैर्यो वाकृतः स्पंदो, मनसश्चित्रविच्चराः ॥

भृष्णवंति तस्मै संसर्गं, जनैर्योगी ततस्त्यजेत् ॥ ७२ ॥

**प्रज्ञाशब्दार्थ-**माणसोना समागमथी वचन प्रवृत्ति आय ऐ, व

चन प्रवृत्तियो मननी व्यग्रता थाय रे अनेतेथी नाना प्रकारना  
विकल्पो थाय रे, माटे योगी पुरुषोये माणसोनी साथे समाग  
म त्यजी देवो ॥ ७२ ॥

**ग्रामोऽरण्यमिति वेधा, निवासोऽनात्मदर्शिनाम् ॥**

**दृष्टात्मना निवासस्तु, विविक्तात्मेव निश्चिन्द्र ॥ ७३ ॥**

**शब्दार्थ-आत्मस्वरूपने न पामेलाने गाम अने ग्ररण्य एम  
वे प्रकारे निवास स्थान रे तथा आत्मस्वरूपने पामेलाने व्याकु  
लता रहित एवो शुद्ध आत्माज निवास स्थान रे ॥ ७३ ॥**

**देहातरगतेर्वीज, देहेऽस्मिन्नात्मज्ञावना ॥**

**वीजं विदेहनिष्पतेरात्मन्येवात्मज्ञावना ॥ ७४ ॥**

**शब्दार्थ-आ देहने विषे आत्मज्ञावना करवी एज वीजा ज्ञ  
वनी प्राप्तिनु कारण रे अने आत्माने विषे आत्मज्ञावना करवी  
एज मोक्ष प्राप्तिनु वीज रे ॥ ७४ ॥**

**नयत्यात्मानमात्मेव, जन्मनिर्वाणमेववा ॥**

**गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योऽस्ति परमार्थतः ॥ ७५ ॥**

**शब्दार्थ-आत्मा आ देहादिकने विषे आत्मज्ञावना वद्यथी  
पोताने ससारमा जटकावे रे अने आत्माने विषे आत्मज्ञावनाना  
वद्यथी पोताने मोक्ष प्रत्ये पमासे रे, माटे परमार्थथी आत्मानो  
गुरु तो आत्माज रे वीजो कोइ नयी. ॥ ७५ ॥**

**दृष्टात्मवुद्विद्विद्वादावुत्पञ्चाशात्मन ॥**

**मित्रादिज्ञिर्वियोग च, विज्ञेति मरणान्तशम् ॥ ७६ ॥**

**शब्दार्थ-दहादिकने विषे दृढ एवी आत्मवुद्विलो वहिरा  
त्मा पोताना मरणने जोतो रतो अने मित्रादिकना वियोगने  
जाणतो रतो मृत्युथी वहु जय पामे रे ॥ ७६ ॥**

आत्मन्यैवात्मधीरन्या, शरीरगतिमात्मनः ॥

मन्यते निर्जयं त्यक्षवा, वस्त्रं वस्त्रांतरग्रहम् ॥४५॥

**शब्दार्थ-**एक वस्त्रने त्यजी दइ बीजा वस्त्रने ग्रहण करवा नी पेरे आत्माने विषे आत्मबुद्धिलो अंतरात्मा ज्ञय रहितपणे शरीरनी परिणतिने ( बाढ्यादि अवस्थाने ) पोताथी जूदो माने डे. अर्थात् शरीरनी उत्पत्ति अने नाशना अवसरे पोतानी उत्पत्ति अने नाश नथी मानतो. ॥४६॥

व्यवहारे सुषुप्तो यः, स जागत्यात्मगोचरे ॥

जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन्सुषुप्तश्चात्मगोचरे ॥ ४७ ॥

**शब्दार्थ-**प्रवृत्ति निवृत्तिरूप व्यवहारमां जे सूतेलो (अतत्पर) डे ते आत्मविषयमां जागतो (तत्पर) डे अने जे प्रवृत्ति निवृत्ति रूप व्यवहारमां जागतो (तत्पर) डे ते आत्मविषयमां सूतेलो (अतत्पर) डे. ॥४७॥

आत्मानमंतरे हष्टा, हष्टा देहादिकं बहिः ॥

तयोरंतरविज्ञानादन्यासादच्युतो ज्ञवेत् ॥ ४८ ॥

**शब्दार्थ-**आत्माने अंदर जोइ अने शरीरादिकने व्हार जो इने ते बनेना ज्ञेद ज्ञाननी ज्ञावनाथी मुक्त यवाय डे. ॥४८॥

पूर्वं हष्टात्मतत्त्वस्य, विज्ञात्युन्मत्तवज्जगत् ॥

स्वन्यस्तात्मधियः पञ्चात्काष्ठपाषाणरूपवत् ॥४९॥

**शब्दार्थ-**प्रथम आत्मतत्त्वने जोनारा अर्थात् योगारंजी पुरुषने आ जगत् उन्मत्त समान देखाय डे अने पठी आत्मतत्त्वनो सारी रीते अन्यास करनाराने काष्ठ अने पाषाण सरखुं देखाय डे.

शृण्वन्नप्यन्यतः कामं, वदन्नपि कलेवरात् ॥

आत्मानं ज्ञावयेऽन्नं, यावत्तावन्न मोक्षज्ञाक् ॥५१॥

(१११)

शब्दार्थ—वीजा पासेयी अत्यंत साज्जनतो अने पोते वीजा  
ने कहेको उतो पण ज्यासुधी शरीरथी आत्माने जूदो ज्ञावतो  
नयो त्यासुधी मोक्षनु पाच घ्रतो नयी ॥७१॥

तथैव ज्ञावयेद्देहाद्—व्यावृत्त्यात्मानमात्मनि ॥

यथा न पुनरात्मानं, देहे स्वप्रेऽपि योजयेत् ॥७२॥

शब्दार्थ—देहथी जूदो करीने आत्माने आत्माने विषे तेवी  
रीते ज्ञाववो के, जेथी ते फरीथी स्वप्रामा देहने आत्मरूप न माने  
अपुण्यमत्रतै पुण्य, व्रतैर्मोक्षस्तयोर्व्ययः ॥

अव्रतानीव मोक्षार्थी, व्रतान्यपि ततस्त्वजेत् । ७३

शब्दार्थ—हिसादिक विकटपोथी पाप अने अहिसादिक वि  
कटपोथी पुण्य थाय रे तथा ते बनेनो त्याग करवाथी मोक्ष थाय  
रे, तो मोक्षना अर्थाये हिसादिकनी पेरे पुण्यादिकने त्यजी देवा  
अव्रतानि परित्यज्य, व्रतेषु परिनिष्ठित ॥

त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य, परमं पदमात्मन ॥७४॥

शब्दार्थ—प्रथम हिसादि अव्रतोने त्यजी इ पुण्यादि व्रतने  
विषे सावधान थाय अने परी आत्माना परम पदने पामीने अ  
र्थात् वीतरागपणु पामीने ते पुण्यादि व्रतने पण त्यजी दे । ७४

यदन्तरर्जटपसष्टुक्षुल्पेक्षाजाखमात्मन ॥

मूल उ खस्य तन्नाशे, शिष्टमिष्टं पर पदम् ॥७५॥

शब्दार्थ—जे अतर वचनना व्यापारे सहित एवी चितारूप  
जाख तेज आत्माने उ खनु मूल रे, माटे ते जाखनो नाश थये  
इष एवु परमपद प्राप्त थाय रे ॥

अव्रती व्रतमादाय, व्रती ज्ञानपरायण ॥

परात्मज्ञानसप्तन् . स्वयमेव परो ज्ञवेत् ॥ ७६ ॥

(४१७)

शब्दार्थ—हिंसादि करवावालो अवती हिंसा न करवारूप व्रत लङ् अने पठी ते व्रत लेनारो व्रती ज्ञानमां तत्पर एवो आय रे. पठी ते उत्कृष्ट एवा आत्मज्ञानमां लोन यद्दने पोतेज परमात्मा रूप आय रे. ॥४६॥

लिंगं देहाश्रितं दृष्टं, देह एवात्मनो नवः ॥

न मुच्यंते नवात्तस्मात्ते ये लिंगकृताग्रहाः ॥४७॥

शब्दार्थ—जटाधारण अथवा नग्नपणुं ए विगेरे लिंग, देहने आश्रिने देखाय रे अने देह एज आत्माने संसाररूप रे, माटे जेउ लिंगने विषे आग्रह करनारा रे तेउ ते संसारथी मूकाता नथी.

जातिर्देहाश्रिता दृष्टा, देह एवात्मनो नवः ॥

न मुच्यंते नवात्तस्मात्ते ये जातिकृताग्रहाः ॥४८॥

शब्दार्थ—जाति ए पण देहने आश्रिने देखाय रे अने देह रे ते आत्माने संसार रे, माटे जेउ जातिमां आग्रह करनारा रे तेउ ते संसारथी मूकाता नथी. ॥४९॥

जातिलिंगविकल्पेन, येषां च समयाग्रहः ॥

तेऽपि न प्राप्नुवन्त्येव, परमं पदमात्मनः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ—जाति अने लिंगना न्नेदे करीने जेउने आगम उपर आग्रह रे तेउ पण आत्माना परम पदने पामता नथीज.

यत्यागाय निर्वर्तते, नोगेऽयो यदवाप्नये ॥

प्रोतिं तत्रैव कुर्वति, द्वेषमन्यत्र मोहिनः ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ—जे शरीरना निर्ममत्वने अर्थे पुष्पनी माला अथवा स्त्री विगेरेथी निवृत्ति पामे रे अथवा उत्तम एवा वीतरागपणानो प्राप्तिने अर्थे निवृत्ति पामे रे. वली ते शरीरने विषे प्रोति करे रे अने वीतरागपणामां द्वेष करे रे. तेउने मोहवाला जाणवा.

अनंतरङ्गः संधते, दृष्टि पंगोर्यथांधके ॥

संयोगाद्विष्टमिंगेऽपि, संधते तत्त्वदात्मनः ॥४१॥

शब्दार्थ—जेम पागलानी दृष्टि आधलाने विषे धारण कराये तेम शरीर अने आत्माने विषे अन्नेदनो आग्रह करनारो पुरुष देह अने आत्माना सयोगथी आत्मानो आशय देहने विषे पण धारण करेठे ॥ ॥४१॥

दृष्टज्ञेदो यथा दृष्टि, पंगोरघे न योजयेत् ॥

तथा न योजयेदेहे, दृष्टात्मा दृष्टिमात्मनः ॥४२॥

शब्दार्थ—पागलानो अने आधलानो ज्ञेद जाणनारो पुरुष जेम पागलानी दृष्टि आधलाने विषे न धारण करे तेम देह अने आत्मानो ज्ञेद जाणनारो अतरात्मा पुरुष आत्मानी दृष्टि देहने विषे न धारण करे ॥ ॥४२॥

सुप्तोत्मत्ताद्यवस्थेव, विच्चमोऽनात्मदर्शिनाम् ॥

विच्चमोऽक्षीणदोपस्य, सर्वावस्थात्मदर्शिन ॥४३॥

शब्दार्थ—बहिरात्माउने सुप्तावस्थानी पेठे अने उन्मत्तादि अवस्थानो पेठे विच्चम वे. तथा बालकुमारादि लक्षणवाली सर्व अवस्थाने आत्मा एम जोनारा बहिरात्माउने विच्चमज होय वे विदिताशेपशास्त्रोऽपि, न जायदपि मुच्यते ॥

देहात्मदृष्टिर्जातात्मा, सुप्तोत्मत्तोऽपि मुच्यते ॥४४॥

शब्दार्थ—बहिरात्मा सर्व शास्त्रने जाणवाने लीघे जागतो उतो पण मूर्कातो नथी अने अतरात्मा सुप्त तथा उन्मत्त उतो पण मूर्काय रे ॥ ९४ ॥

यत्र्विवाहितधी, पुंस, शक्ता तत्रैव जायते ॥

यत्र्वैव जायते शक्ता, चित्त तत्रैव लीयते ॥४५॥

(४१४)

शब्दार्थ—जे विषयमां बुद्धि आश्रय करे, पुरुषने तेज विषयमां श्रद्धा आय भे अने जे विषयमां श्रद्धा आय भे तेज विषयमां चित्त आसक्त आय भे. ॥ ९५ ॥

यत्रैवाहितधीः पुंसः, श्रद्धा तस्मान्निवर्तते ॥

यस्मान्निवर्तते श्रद्धा, कुतश्चित्स्य तद्वयः ॥४६॥

शब्दार्थ—जे विषयमां बुद्धि आश्रय न करे, पुरुषने ते विषयथी श्रद्धा निवृत्ति पामे अने जे विषयथी श्रद्धा निवृत्ति पामे ते विषयमां चित्तनी आशक्ति क्यांथी होय. ॥ ९६ ॥

निन्नात्मानमुपास्यात्मा, परो नवति तादृशः ॥

वार्तिदीर्पं यथोपास्य, निन्ना नवति तादृशी ॥४७॥

शब्दार्थ—जेम दीवाथी जूदी एवी वाट दीवाने पामीने दी वारूप बनी जाय भे तेम आत्माथो जूदो एवो आराधक पुरुष अर्हत् सिद्धरूप आत्मानी उपासना करीने तेवो परमात्मारूप बनी जाय भे. ॥ ९७ ॥

उपास्यात्मानमेवात्मा, जायते परमोऽयवा ॥

मथिलात्मानमात्मैव, जायते ऽग्निर्यथा तरुः ॥४८॥

शब्दार्थ—जेम् वृक्ष पोतानां शरीरने घर्षण करीने पोते अग्निरूप थाय भे तेम आत्मा (उपासक) चिदानन्दमय पोताना आत्मस्वरूपनी उपासना करीने परमात्मारूप थाय भे. ९८

इतीदं न्नावयेन्नित्य—मवाचागोचरं पदम् ॥

स्वत एव तदाप्रोति, यतो नावर्तते पुनः ॥४९॥

शब्दार्थ—आ कह्या प्रमाणे जे न्निन्न अने अन्निन्न एवा आ त्मपदनी नित्य न्नावना करे भे ते वाणीने अगोचर एवा मोक्ष स्थानने पोतानी मेलेज पामे भे अने ते प्राप्त थयेका पदथी फरी पागो आवतो नथी. ॥ ४९ ॥

(११५)

अपत्नसाध्यं निवार्णं, चित्तत्वं ज्ञूतज यदि ॥

अन्यथा योगतस्तस्मान्नद्दुखं योगिना क्वचित् १००

शब्दार्थ—जो चेतना लक्षण तत्त्व पृथ्वी आदि पाच महा ज्ञूतथी उत्पन्न थयेलुं जाणीये तो परी मोक्ष, यत्न करथा विना पण साध्य रे अने प्रारब्ध योगनी अपेक्षाये जो ते तत्त्व पृथ्वो आदि पाच महाभूतथी उत्पन्न थयेलु न जाणीये तो परी योग थी मोक्ष प्राप्ति रे, माटे उर्धर अनुष्टान अथवा ज्ञेदन रेदनादि कोइ पण अवस्थामा योगीउने डुःख यतु नशी ॥ १०० ॥

स्वप्ने हष्टे विनष्टेऽपि, न नाशोऽस्ति यथात्मनः ॥

तथा जागरृष्टेऽपि, विपर्यासाविशेषतः ॥ १०१ ॥

शब्दार्थ—जेम स्वप्नावस्थामा नाश पामेला शरीरादिकने दीठा रत्ता आत्मानो नाश नथी देखातो तेम विपर्यासना अविशेष पणाथी जाग्रत अवस्थामा पण नाश पामेला शरीरादिक ने दीठा रत्ता आत्मानो नाश नशी देखातो ॥ १०१ ॥

अद्दुखज्ञावितज्ञान, क्वीयते डुःखसंनिधौ ॥

तस्माद्यथावल्ल डुःखे—रात्मानज्ञावयेन्मुनिः ॥ १०२ ॥

शब्दार्थ—काय हेशादि कष्ट विना एकाग्रपणाथी एकरुं करेलु ज्ञान डुःख प्राप्त थवाथी नाश पामी जाय रे, माटे योगी पुरुष पोतानी शक्तिने अनुसारे कायहेशादि कष्टोवमे आत्माने चितवन करे रे ॥ १०२ ॥

प्रयत्नादात्मनो वायु—रित्रिद्वेषप्रवर्तितात् ॥

वायोःशरीरयत्राणि, वर्तन्ते स्वेषु कर्मसु ॥१०३॥

शब्दार्थ—इच्छा अने द्वेषथी उत्पन्न थयेला प्रयत्नने लीघे आत्मा सवधी वायु शरीरने विषे चाली रह्यो रे अने ते वायु थी शरीररूपी यत्रो पोताने साध्य एवी ऊर्णीयाने विषे वर्ती रह्या रे

(११६)

तान्यात्मनि समारोप्य, साक्षाएयास्ते सुखं जमः ॥  
त्यक्त्वारोपं पुनर्विद्वान्, प्राप्नोति परमं पदम् ॥ १०४ ॥

शब्दार्थ—जम् एवो वहिरात्मा इंडियो सहित ते शरीररूप यंत्रोने आत्माने विषे आरोपण करी “हुं गौरुं, हुं सारां नेत्र वाको लुं.” एम मानीने न सुख रतां सुख माने रे अने अंत रात्मा ते आरोपने त्यजी इश मोक्षपदने पामे रे. ॥ १०४ ॥

मुक्त्वा परत्र परबुद्धिमंहधियं च,  
संसारङ्गःखजननीं जननाद्विमुक्तः ॥  
ज्योतिर्मयं सुखमुपैति परात्मनिष्ट—  
स्तन्मार्गमेतदधिगम्य समाधितंत्रम् ॥ १०५ ॥

शब्दार्थ—संसारथी मुक्त अने परमात्म स्वरूपनो जाण एवो पुरुष परमास्वरूपना जाणपणाना एकायताने प्रतिपादन करनारा मोक्षमार्गना उपायरूप आ शास्त्रने पामीने शरीरादिक पदार्थमां परमात्म बुद्धिने अने संसारना ङुःखने उत्पन्न करनारी अहंबुद्धिने त्यजी इश ज्ञानमय एवां सुखने पामे रे. ॥ १०५ ॥

॥ इति समाधि शतकं संपूर्णम् ॥



॥ अथ सज्जनचित्तवद्धभ ॥

नत्वा वीरजिनं जगत्रयगुरु मुक्तिश्रियो वद्धनं,  
पुष्पेषुद्धयनीतवाणनिवह ससारङ्गःखापहम् ॥  
वद्धये नव्यजनप्रबोधजनन ग्रथ समासादहं,  
नाम्ना सज्जनचित्तवद्धनमिम शृणवतु सतो जना १

शब्दार्थ—त्रण जगत्ना गुरु, मुक्तिरूप लक्ष्मीना पति, कामना वाण समूहने कृय करनारा अने ससारना उ खने नाश करनारा श्री वीर प्रज्ञने नमस्कार करीने नव्य माणसोने ज्ञान प्रगट करनारा आ सज्जनचित्तवद्धन नामना ग्रथने सदेष्ठो कहु गु, तेने सत पुरुषो साजलो ॥ १ ॥

रात्रिश्वंद्धमसा विनाभनिवहैर्नो ज्ञाति पद्माकरो,  
यद्वत्पमितलोकवर्जितसज्जा दंतीव दंत विना ॥  
पुष्प गंधविवर्जित मृतपति खी चेह तद्वन्मुनि,,  
चारित्रेण विना न ज्ञाति सततं यद्यप्यसौ शास्त्रवान् ॥

शब्दार्थ—जेम रात्री चइ विना, तखाव कमलोना समूह विना, सज्जा पमितलोक विना, हाथी दात विना, पुष्प गंध विना अने खी पति विना नथी शोज्जती तेम जोके शास्त्रनो जाण एवो पण मुनि चारित्र विना शोज्जतो नथो ॥ २ ॥

कि वस्त्रत्यजनेन ज्ञो मुनिरसावेतावाता जायते,  
द्वयेमेन च्युतपन्नगो गतविपः कि जातवान् ज्ञूतले ॥  
मूख कि तपस क्रमेभ्रियजय. सत्य सदाचारता—  
रागार्दीश्व विज्ञर्ति चेन्न स यतिर्लिंगी जवेत्केवलम् ॥ ३

शब्दार्थ—अरे ! वस्त्रने त्यजवाथी शु ? आ पुरुप ए वस्त्रने त्यजी देवार्थी शु मुनि थाय ? अर्थात् न थाय विप खरी पक्षेलो

अर्थात् विष रहित एवो सर्प शुं पृथ्वीने विषे थाय खरो? अर्थात्  
न थाय. तपनुं मूळ क्षमा, इङ्गियजय, सत्य अने सदाचारपणुं रे  
ठता जो यति रागादिकने धारण करेहे तो ते यति नहि, परंतु  
खिंगधारी कहेवाय ॥३॥

किं दीक्षाग्रहणेन ज्ञो यदि धनाकांक्षा ज्ञवेज्ञेतसि,  
किं गार्हस्थमनेन वेषधरणेनासुंदरं मन्यसे ॥  
इव्योपार्जनचित्तमेव कथयत्यज्यन्तरस्थांगजं,  
नो चेदर्थपरिग्रहमतिर्जिक्षोर्न संपद्यते ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—हे यति! जो धननी इडा थाय तो दीक्षा देवाथी  
शुं? कारणके, ए यतिवेषने धारण करवाथी ग्रहस्थपणाने तुं शुं  
खोटो माने रे? इव्य मेलववानुं चित्तज अंतरना कामने देखाडी  
आपे रे अने जो अंतरनो कामविकार न होय तो साधुने धनने अने  
खीने ग्रहण करवानी इडा यतीज नथो. ॥४॥

योषापंमकगोविवर्जितपदे संतिष्ठ जिक्षो सदा,  
ज्ञुकाहारमकारितं परगृहे लब्धं यथासंज्ञवम् ॥  
षट्धावश्यकसत्क्रियासु निरतो धर्मादिरागं वहन्,  
सार्वं योगिज्ञिरात्मपावनपरै रत्नत्रयाखंकृतैः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—हे साधो! खी, जीव तथा पशु विनाना स्थानकने विषे  
निरंतर रहे अने पारके घरे नहि करावेला तेमज अवसर प्रमाणे  
मलेला आहारने ज्ञोजन कर. वली आत्माथी पवित्र तेमज  
ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रत्नोथी सुशोभित एवा योगी  
पुरुषोनी साथे धर्मादि राग करतो भतो उ प्रकारनी आवश्यक  
क्रियाने विषे तत्पर था. ॥५॥

दुर्गंधं वदन वपुर्मखगृहं जिक्षाटनान्नोजनम् ,  
शया स्थमिखन्नूमिपु प्रतिदिनं कर्त्या न ते कर्पटम् ॥  
मुंम मुमितमर्ददग्धशववत्वं हृश्यसे ज्ञो जनै ,  
माधोऽद्याप्यवलाजनस्य ज्ञवतो गोष्ठी कथ रोचते ६

शब्दार्थ—मुख दुर्गंधवालुं, शरीर मलनुं घर, जिक्षा माग वाथी ज्ञोजन, प्रति दिवस पृथ्वीने विषे शयन, केम उपर वस्त्र पण नहि एवु, अर्ज्ञ शब्दनी पैठे माथु मुमेलुं आ प्रमाणे आकृ तीवाला तने हमेशा माणसो जूवे रे उता हे साधो! तने आज सुवी स्थीयोनी साथे वातो करवी केम रुचे रे? ॥६॥  
अंगं शोणितशुक्रसंज्ञवमिदं मेदोस्थिमङ्गाकुल .  
वाह्ये माद्विकपत्रसन्निज्ञमहो चर्मावृतं सर्वत. ॥  
नो चेत्काकवृकादिज्ञिर्वपुरहो जायेत जड्य ध्रुवम् ॥  
दृष्टाद्यापि शरोरशश्वनि कथ निर्वेदना नास्ति ते ॥७॥

शब्दार्थ—आ शरीर रुधिर अने वीर्यथी उत्पन्न अथुं रे ते मज ते चर्खी, हाडका अने स्नायुथी ज्ञरपुररे बली व्हारना ज्ञागमा माखीउनी पाखोना सरखी चामडीथी चारे तरफ ढका यलु रे जो आ वर्णन करवा प्रमाणे शरीर न होय तो ते शरीर कागमा अने नार विगेरे जीवोथी ग्राश्वर्यकारी रीते ज्ञक्षण कराय रे. तेवा शरीरने जोइने पण तने ते शरीर उपर वैराग्य केम नथो अतो स्थोणा ज्ञावविलासविच्चमगति दृष्टानुराग मनाक्,  
मागास्त्वं विपवृक्षपक्फलवत्सुस्वादवंत्यस्तदा ॥  
ईपत्सेवनमात्रतोऽपि मरण पुंसा प्रयच्छति ज्ञो,  
तस्मात् दृष्टिविपाहिवत्परिहर त्वं दूरतोऽमृत्यवे ॥८॥

शब्दार्थ—स्थीयोना शृगारादि विलासनो विच्चमवालो गति

ने जोड़ तुं जरा पण राग न कर. कारणके, ते फक्त जोवाने अब सरे विषवृक्खनां पाकेलां फलनी पेरे उत्तम स्वादवाली देखाय रे. परंतु हे मुनि ! ते स्त्री जरापण सेवन करवाथी माणसोने मृत्यु आपे रे, माटे ते स्त्रीयोने तुं त्वारा पोतानां जीवितने माटे दृष्टि विष सर्पनी पेरे दूरश्चो त्यजी दे. ॥४॥

यद्यद्वांड्सि तत्तदेव वपुषे दत्तं सुपुष्टं त्वया,  
सार्घ्नैति तथापि ते जम्मते मित्रादयो यांति किम् ॥  
पुण्यं पापमिति द्वयं च ज्ञवतः पृष्ठेऽनुयायिष्यते,  
तस्मात्त्वं न कृथा मनागपि महामोहं शरीरादिपु ॥५॥

शब्दार्थ—तुं जे जे वस्तुनो इच्छा करे रे ते ते वस्तु तें शरीरने आपीने तेने पुष्ट बनावी दीधुं, तोपण हे जम्बुद्धि ! ते शरीर त्वारी साथे आववानुं नथी. वली शुं मित्रादि आववाना रे ? अर्थात् तेज पण आववाना नथी. परंतु पुण्य अने पाप ए बन्ने त्वारी पारल आववाना रे, माटे तुं शरीरादिकने विषे फोगट एवा महा मोहं न कर. ॥५॥

अष्टाविंशतिन्नेदमात्मनि पुरा संरोप्य साधौ वृत्तं,  
साक्षीकृत्य जिनान् गुरुनपि कियत्कालं त्वया पालितम्  
न्नंकुं वांड्सि शीतवातविहतो ज्वूत्वाधुना तदृतं,  
दारिद्र्योपहः स्ववांतमसनं नुक्ते क्लुधार्तोऽपि किम् ॥६॥

शब्दार्थ—हे साधु ! ते श्री जिनेश्वरने तथा गुरुने साक्षी करी अष्टाविंशति न्नेदवाला साधु व्रतने अंगीकार करीने केटलोक काल पाल्युं रे. वली हवणां ते तुं विषयरूप वायुथी हणायो रतो थइने तेने ज्ञांगवानी इच्छा करे रे. परंतु दारिद्र्यथी हणायेलो एवो पण नुख्यो माणस शुं पोताना वमन करेला पदार्थने खाय खरो ? अर्थात् न खाय. ॥६॥

सौख्यं वांछसि कि तथा गतज्ञवे दान तपो वा कृतं,  
 नो चेत्व किमिहैवमेव लज्जसे खब्ध तदत्रागतम् ॥  
 धान्यं कि लज्जते विनापि वपन लोके कुटुम्बीजनो—  
 देहे कीटकज्ञहितेकुसद्दशे मोहं वृथा मा कृथाः ॥११॥  
 शब्दार्थ—हे साधु ! तु देह सुखनी इच्छा करे रे ? तो शुंते पू  
 र्वज्ञवे दान अथवा तप करयुं रे ? जो ते दान अथवा तप नथी  
 करयु तो तु आ ज्ञवमा शुं पामवानो रे ? अने सुख प्राप्त करवा  
 नी इच्छायो जे शुज्ञाशुज्ञ कर्म करयुं रे ते आ ज्ञवमा तेनी मेलेज  
 प्राप्त थयेलु रे दृष्टात कहे रे के, लोकमा कणवी लोक शुं वाव्या  
 विना क्यारे पण धान्य पामे खरा ? माटे कीडायी जक्षण करायेलो  
 झेरकीना सरखा देहने विषे वृथा मोह न कर ॥११॥  
 यत्काले लघुज्ञाम्मडितकरो ज्ञूत्वा परेपा गृहे,  
 जिक्षार्थ ज्ञमसे तदापि ज्ञवतो मानापमानौ नहि ॥  
 जिक्षो तापसवृत्तित कदशनात्किं तप्स्यसेऽहर्निशं,  
 श्रेयोर्थ किल सद्यते मुनिवरैर्वाधा कुधाद्युन्नवा ॥ १२ ॥  
 शब्दार्थ—जे अवसरे न्वाना पात्रोयो सुशोन्नित हाथवालो अइ  
 लोकोना घरने विषे जिक्षाने माटे ज्ञमे रे त्यारे पण तने मान अपमा  
 न थतु नथी, हे साधु ! तो परी तापस वृत्तिने लीघे कुत्सित आहारथी  
 रातदिवस शा माटे खेद करे रे ? कारण उत्तम मुनिरु कल्याणने  
 माटे ज्ञुख आदिथी उत्पन्न थयेथी वहु पीडानने निश्चे सहन करे रे  
 एकाकी विरहत्यन स्थितवलिवहों यथा स्वेच्छया,  
 योपामध्यरतस्त्वमेवमपि ज्ञोत्यत्त्वात्मयूय यते ॥  
 तस्मिंश्रेदज्जिलापता न ज्ञवतःकि ज्ञाम्यसि प्रत्यहम्,  
 मध्ये साधुजनस्य तिष्ठसि न कि कृत्वासदाचारताम् ॥१३॥

शब्दार्थ—हे मुनि ! जेम गामीमां जोकायेलो एक वखद पोतानी मरजी मुजव क्रीमा करे रे तेम तुं पण पोताना समूहने (मुनि समूहने) त्यजो इ ख्योना मध्यमां आसक्त श्रयो उतो क्रीडा करे रे, जो कदापि त्वारे ते ख्योनी इत्ता न होय तो तुं ते उना मध्ये निरंतर झा माटे फरे रे अने सदाचार पालीने साधु उना समूहने विषे केम नथी रहेतो ? ॥१३॥

क्रीतान्नं नवतो नवेत्कदशने रोपस्तदा श्लाघ्यते,  
निद्वायां यदवाप्यते यतिजनैस्तन्नज्यते सादरात् ॥  
निद्वो ज्ञाटकसद्वासनिन्नतनोः पुष्टिं वृथा मा कृथाः।  
पूर्णे किं दिवसावधौ क्षणमपि स्थातुं यमो दास्यति ॥१४॥

शब्दार्थ—जो त्वारे खराव ज्ञोजनमां पण वेचाथी अन्न ला वबुं पमतुं होय तो रोप करवो योग्य रे, परंतु मुनिजनोए निद्वामां जे अन्न मेलवाय तेज आदरथी ज्ञोजन कराय रे, माटे हे निकु ! ज्ञाडाना घर सरखा आ शरीरने तुं वृथा पोषण न कर. कारणके, ते शरीरनी अवधि पूर्ण थइ रहेशे त्यारे तेने यम क्षण मात्र पण तेमां रहेवा देशे नहि. ॥१४॥

लब्धान्नं यदि धर्मदानं विषये दातुं न यैः शक्यते,  
दारिङोपहतास्तथापि विषयाशक्तिं न मुचंति ये ॥  
धृत्वा ये चरणं जिनेऽग्नितं तस्मिन् सदा नादरा—  
स्तेपां जन्म निर्यकं गतमजाकंठे स्तनाकारवत् ॥१५॥

शब्दार्थ—जो के जे गृहस्थो पोताने मलेदुं अन्न धर्मदान करवामां आपी शकाता नथी, जेउ दरिङ्यी हणाया उता पण विषयाशक्तिने मूकता नथी अने जेउ जिनराजे कहेला चारित्रने धारण करी तेने विषे आदर करता नथी. ते सर्वेनो जन्म वकरी

ना केंठे रहेला स्तननी पेरे निष्फल गयो रे ॥१५॥

इर्गंधं नवन्निर्वपुः प्रवहति घारैरिमै सतत,

संटृप्तापि हि यस्य चेतसि पुनर्निवेदता नास्ति चेत् ॥

तस्माद्यनुवि वस्तु किदृशमहो तत्कारणं कथ्यते,

ओखमादिन्निरगसंस्कृतिरिय व्याख्याति इर्गंधतां १६

शब्दार्थ—आ शरीर नवद्वारोधी हमेशा इर्गंधनेज वहन करे रे, ते शरीरने जोइने जे पुरुषना चिन्मा जो वैराग्य नशी थयो तो पर्ही आश्वर्य रेके, तेने पृथ्वी उपर बीजी कह वस्तु वैराग्यनुकारण कहेगाय? आ प्रत्यक्ष श्रीखक्षचदन विगेरेथी करेदी अग नी सस्कृती पण इर्गंधनेज प्रगट करे रे ॥१६॥

शोचति न मृत कदापि वनिता यद्यस्ति गेहे धनं,

तद्वेन्नास्ति रुदति जीवनधिया स्मृत्वा पुनः प्रत्यहम् ॥

कृत्वा तदहनक्रिया निजनिजव्यापारचिताकुला—

स्तन्नामापि च विस्मरति कतिन्निः सवत्सरैयोऽपितः १७

शब्दार्थ—स्त्री जो घरने विये धन होय तो मृत्यु पामेला पतिनी शोक फरती नथी अने जो धन नशी होतु तो आजीरिका नी चुक्किया तेने दररोज वारवार सज्जारीने रुदन करे रे वली ते चोयो पतिनी उर्ध्वदेहिरु कीया करीने पर्ही पोत पोताना का ममा आकुल व्याकुल अह रत्ती केटलाफ वये तेनु नाम पण गिमरी जाय रे ॥ १७ ॥

अन्यथा मरण नवानगणयन् स्वस्यामरत्व सदा,

देहिन् चितयसीद्वियत्रिपवडी ज्ञूत्वा परिच्छाम्यसि ॥

अद्य त्वः पुनर्गगमिष्यति यमो न ज्ञायते तत्वत ,

तस्मादात्महित कुरुत्वमचिराद्वमं जिनेंद्रोदितम् १८

शब्दार्थ—हे देहधारी ! तुं वीजाउनां मरणने नहि गणकार तो उतो हमेशां पोतानां अमरपणानो विचार करे रे अने तेथी ज तुं ईङ्गियरूप हाथीउने वडा अङ्ग नटके रे; परंतु मृत्यु आजे आवश्य अथवा काले आवश्य ते तत्वथी जाणी झकातुं नयो, माटे तुं तरत पोताना हितकारक एवा जिनेश्वरे कहेला धर्मने आचरण कर. ॥ १७ ॥

देहे निर्ममता गुरौ विनयता नित्यं श्रुतान्यासता,  
चारित्रोज्वलता महोपशमता संसारनिर्वेदता ॥  
अंतर्बाह्यपरिग्रहत्यजनता धर्मज्ञता साधुता,  
साधो साधुजनस्य लक्षणमिदं संसारविह्वेदनम् ॥१८॥

शब्दार्थ—हे साधु ! शरीरने विषे निर्ममपणुं, गुरुने विषे विनयपणुं, निरंतर शास्त्रने विषे अन्यासपणुं, चारित्रनुं उज्वल पणुं, म्होटुं उपशमपणुं, संसारमां वैराग्यपणुं, अंतरना अने वा ह्यना परिग्रहने त्यजवापणुं, धर्मज्ञपणुं अने साधुपणुं. आ उपर कहेलुं साधुजननुं लक्षण संसारनो नाश करनारुं रे. ॥ १८ ॥

लब्ध्वा मानुषजातिमुत्तमकुलं रूपं च नीरोगतां,  
बुद्धिं धीधनसेवनं सुचरणां श्रीमञ्जिनेऽदितम् ॥  
लोन्नार्थं वसुपूर्णहेतुनिरखं स्तोकाय सौख्याय ज्ञो,  
देहिन् देहसुपोतकं गुणनृतं नंकतुं किमिह्वास्ति ते ॥१९॥

शब्दार्थ—हे देहधारी ! मनुष्यजातिने, उत्तमकुलने, रूप ने, नीरोगीपणाने, बुद्धिने, बुद्धिवंतनी सेवाने अने श्री जिनराजे कहेला चारित्रने त्वारे पामीने लोन्नने अर्थे धनने एकठा करवाना कारणथी सरचुं शुं. तुं योडां सुखने माटे गुणथी पूर्ण एवा आ देहरूप उत्तम नावने नांगी नाखवानी त्वारी इड्डा रे ? ॥१९॥

वैतालाकृतिमर्घदग्धमृतकं हृषा ज्ञवतं यते,  
यासा नास्ति ज्ञय त्वया सममहो जटपति प्रत्युत्तरम् ॥  
राक्षस्यो ज्ञुविनो ज्ञवति वनिता मामागता ज्ञक्षितुं,  
मत्वैवं प्रपल्लायता मृतिज्ञयात् त्वं तत्र मा स्था क्षणम् ॥

शब्दार्थ—हे यति ! वैतालना सरखी आकृतीवाला अने अहं दग्ध थयेला शब सरखा तने जोइ जे स्त्रीयोने ज्ञय थतो नथी, तेज स्त्रीउ तमने उच्चर आपे ऐ शुते स्त्रीयो पृथ्वीने विषे राक्षसीयो न कहेवाय ? अर्थात् कहेवाय ‘ते स्त्रीउ मने ज्ञक्षण क खा आवो दे’ एम मानो तु मृत्युना ज्ञयथी नासी जा पण त्या क्षणमात्र रहिशा नहि ॥२१॥

मागास्त्वं युवतीगृहेषु सततं विश्वासता संशयो—

विश्वासे जनवाच्यता ज्ञवति ते न स्यात्पुमर्थं ततः ॥

स्वाध्यानुरतो गुरुक्तवचनं चित्ते समारोपयन् ,

तिष्ठ त्वं विकृति पुनर्ब्रजसि चेद्यासि त्वमेव क्षयम् शश्

शब्दार्थ—तु स्त्रीयोना घरने विषे निरतर विश्वासपणुं न कर कारणके, विश्वास करवाथी सज्जाय अने लोकमा निदा थाय ऐ अने नेथी त्वारो काइ पुरुषार्थं थवानो नथी माटे तु गुरुना कहेदा वचनने चिन्मा धारण करी ज्ञणवा ज्ञणाववामा आस थयो वर्तो रहे वली जो तु विकार पास्यो तो निश्चे नाझा पामीझ कि संस्कारशतेन विट् जगति ज्ञो कास्मीरज जायते,

कि देहःशुचिता ब्रजेदनुदिन प्रक्षालनादंजसा ॥

संस्कारो नखदतवक्रवपुषा साधो त्वया युज्यते,

नाकामी किछ मंडनप्रिय इति त्वं सार्थक मा कृया ॥

शब्दार्थ—ह मुनि ! जगत्मा शेकड़ों उपायोथी पण शु वि

ष्टा होय ते कंकु थाय खरुं? अथवा हमेशां झेंकडोवार प्रयत्नवर्मे  
धोवाथी शरीर शुं पवित्रपणाने पामे? माटे त्हारे नख उनारवा,  
दांत साफ करवा, मुख साफ राखवुं अथवा शरीर धोवुं विगेरे  
संस्कार करवा योग्य नयी? तो 'तुं शुं अकामी नयो? अथवा  
मंकनप्रिय भे?' ए वचनने तुं सार्थक न कर. ॥४३॥

आयुष्यं तव निष्ठ्यार्घ्मपरं चायुस्त्रिज्ञेदादहो,  
बालत्वे जरया कियघ्यसनतो यातीति देहिन् वृथा ॥  
निश्चित्यात्मनि मोहपासमधुना संठिद्य बोधासिना,  
मुक्तिश्रीवनितावशीकरणसञ्चारित्रमाराधय ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—हे देहिन्! त्हारुं अर्धुं आयुष्य निष्ठामां चाल्युं  
जाय रे अने बाकोनुं अर्धुं त्रण ज्ञेदशी चाल्युं जाय रे ते त्रण  
ज्ञेदमां केटलुंक वाढ्यावस्थामां, केटलुंक वृद्धावस्थामां अने केट  
लुंक विषयादिव्यसनमां फोगट जाय रे. आ प्रमाणे तुं आत्माने  
विषे निश्चय करी हवणां बोधरूप खड्यां मोह पासने कापी ना  
खी मुक्ति श्री रमणीने वशीकरण एवा उत्तम चारित्रने आराध.  
वृत्तैर्विशतिज्ञिश्चतुर्जिरधिकैः सद्वक्षणेनान्वितः,

ग्रंथं सज्जनचित्तवद्वन्नमिमं श्रीमद्विषेणोदितम् ॥  
श्रुत्वात्मेऽर्द्धकुंजरान्समटतो रुद्धंतु ते उर्जयान्,  
विद्वांसे विषयाटवीषु सततं संसारविद्वित्तये ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ—श्री मद्विषेण गुहए उत्तम लक्षणवाला चोवीशा  
काव्योवर्मे कहेला आ सज्जनचित्तवद्वन्न नामना ग्रंथने सांन्नली  
ने ते पूर्वे कहेला संत पुरुषो संसारनो छेद करवा माटे विषयरूप  
अरण्यमां न्नटकता एवा उर्जय इंडियरूप गजोने वडा करो. ४५

॥ इति सज्जनचित्तवद्वन्न संपूर्ण ॥

## ॥ अथ श्री वीरजिन स्तवन ॥

जइङ्गा समणे जयवं, महावीरे जिणुन्नमे ॥  
 लोगनाहे सवंवुद्धे, लोगंतिय विवोहिए ॥ १ ॥  
 वच्चर दिन्नदाणोहे, सपूरियजणासए ॥  
 नाणत्तयसमाभृते, पुच्चे सिद्धराइणो ॥ २ ॥  
 चिज्ञा रङ्ग च रष्ट च, पुर अतेभर तहा ॥  
 निरक्षमित्ता आगारात्त, प०वज्ञए अणगारिय ॥ ३ ॥  
 परोसदाण नो ज्ञीए, जेरवाण खभाखमे ॥  
 पचहा समिए गुच्चे, बज्जयारी अकिचणे ॥ ४ ॥  
 निम्ममे निरहकारे, अकोहे माणवज्ञिए ॥  
 अम.ए लोज्जविमुक्ते, पसते छिन्नवधणे ॥ ५ ॥  
 पुरुखरवा अलेवेय सखोइव निरंजणे ॥  
 जीवेवा अप्यनिग्धाए, गयणव निरासए ॥ ६ ॥  
 वाजव्व अप्पडिवद्दे, कुम्मोवा गुच्चज्ञदिए ॥  
 पिष्पमुके विहगव्व, खगिसिगव एगमे ॥ ७ ॥  
 ज्ञारमेवा पमत्तेय, वसहेवा जाय यामए ॥  
 कुजरोइव सोमीरे, साँहोवा डुदरिस्त्तए ॥ ८ ॥  
 सायरोइव गज्जीरे, चदे इव सोमलेसए ॥  
 सूरोवा दिन तेयल्ले, हेमवा जाय रूवए ॥ ९ ॥  
 सब्ब सहे धरिजिव्व, सायरखुव्व सछडे ॥  
 सुद्धुहुय हुयासुव्व, जखमाणेय तेयसा ॥ १० ॥  
 वासी चदण कप्पेय, समाणे लोहु कचणे ॥  
 समे पूया वमाणेसु, समे मोर्सेक ज्ञवे तहा ॥ ११ ॥  
 नाणेण दसणेण च, चरिन्नेण मणुन्नरे ॥  
 आलएण विहारेण, मद्वेण झावेणय ॥ १२ ॥

दाघवेणं च खंतीए, गुन्नी मुन्नी अणुन्तरे ॥  
 संजमेण तवेणांच, संवरेण मणुन्तरे ॥ १३ ॥  
 अणेग गुण सयाइन्ने, धम्म मुक्काण जायए ॥  
 धाइखकएण संजाए, अणांतवर केवली ॥ १४ ॥  
 वीयराएय निगंथे, सब्बन्नु सब्बदंसणे ॥  
 देविंद दाणविंदेहिं; निब्बन्तिय महामहे ॥ १५ ॥  
 सब्ब ज्ञासाणुगाएय, ज्ञासाए सब्ब संसाए ॥  
 जुगवं सब्बजीवाणं, बिंदिउ निन्नगोयरे ॥ १६ ॥  
 हिए सुहेय निस्त्येय, कारए सब्ब पाणिणं ॥  
 महब्बयाणि पंचेव, पन्नवित्ता सन्नावणे ॥ १७ ॥  
 संसारसायरं बुझ, जंतुसंताण तारए ॥  
 जाणुब्ब देसियं तिड, संपत्ते पंचमं गङ्गं ॥ १८ ॥  
 से सिवे अयखे निज्जे, अरुवे अयरामरे ॥  
 कम्मप्पंचनम्मुक्के, जएवीरे जएजिणे ॥ १९ ॥  
 से जिणे वद्धमाणोय, महावीरे महायसे ॥  
 असंखडखिन्नाणं, अम्हाणं देऊ निबुइ ॥ २० ॥  
 इय परम पमोया संथुउ वीरनाहो,  
 परमपसमदाणा देऊ तुल्लन्तणं मे ॥  
 असमसुहडहेसु सग्गसिद्धी नवेसु,  
 कणायकयवरेसु सत्तु मित्तेसुवावि ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवीरजिन स्तवन ॥

## ॥ अथ श्रीमधरस्वामीनु स्तवन ॥

केवलनाण सणाह, विदेहवासमि सठिय धीर ॥  
 सुरमणुग्रनमियचलण, सीमधरसामिय वदे ॥ १ ॥  
 जय सीमधर सामिय, नवियमहामुमुयबोहणमयंक ॥  
 समरामि तं महायस, इह रित्त ज्ञारहे वासे ॥ २ ॥  
 सीमधरदेव तुम, गामागरेपद्मेसु विहरंतो ॥  
 धम्म कहेसि जेसि, सहल चिय जीविय तेसि ॥ ३ ॥  
 कि ज्ञयव मह कम्म, समरियं तारिसेहि पावेहि ॥  
 ज नहजान्तु जम्मो, तुह पयमूले सया काल ॥ ४ ॥  
 चितामणि सारिड्डो, अहवा कप्पदुमव्व सुहफलन्त ॥  
 अप्पुव्व कामवेणू, नहु नहु ताणपि अहीयरो ॥ ५ ॥  
 उङ्गइ तुह सामिन्त, तिहूयण मञ्चमि नभुण अन्नस्स ॥  
 जम्हा एरिस रिष्टो, न हु दीसइ सेसपुरिस्सस्स ॥ ६ ॥  
 इया ह सामि तुमं, सिहासणसरिय सपरिवार ॥  
 धम्म वागरमाण, पिछस्स नियनयणेहि ॥ ७ ॥  
 पुङ्गतु ते मणोरह, निच्च जे हिययसंरिया मञ्च ॥  
 पावइ रकोवि फल, सपत्ते कप्परुखमि ॥ ८ ॥  
 निच्च ऊएमि अह, तुह पयकमलसु निम्मल धीर ॥  
 तह कुरु देव पसाय, जह दरिसाय मम देसि ॥ ९ ॥  
 ते धन्ना कयपुन्ना, देवा देवीय माणवा सब्बे ॥  
 जे सस्य वुच्चेय, करति तुहपायमूलंमि ॥ १० ॥  
 अहय पुन्रविहूणो, राणे गणमि संसया वमिन्त ॥  
 इडामि विसूरतो, उभमन्नो नाणपरिहीणो ॥ ११ ॥  
 कुणसु पसाय गुरुय, वव्वन्नीसमयाण जह होइ ॥  
 जम्हा महाणुज्ञावा, सरणागय वच्छाहा हुति ॥ १२ ॥

(३०)

कम्मवसेषय अहयं, नारहवासंमि जश्वि चिघामि ॥  
तहवि तुमं महियए, रयणायर चंदणाएण ॥ १३ ॥  
तं पहु तं मन्न गुरु, तं देवो वंधवो तुमं चेव ॥  
गुरु संसारगयाण, जीवालं हुङ्क तं सरण ॥ १४ ॥  
संसारजखहिमझे, निबुहुमाणेहिं नव्व सत्तेहिं ॥  
पश्चिवसं समरिङ्क, सीमंधर सामि पयकमलं ॥ १५ ॥  
जइ इच्छह परमपयं, निवंना तहय जम्ममरणाण ॥  
ता समरह जिणाहं, विदेहवासंमि विहरंतं ॥ १६ ॥  
जो निच्चं नव्वाण, विदेहवासंमि सामि विहरंतो ॥  
स द्वमदेसणाए, मिछ्न पणासणं कुणइ ॥ १७ ॥  
पञ्च मञ्चुसे मञ्चणे, संजा समयंमि सव्वकालंमि ॥  
सीमं धर तिड्यरं, वंदेहं परम नत्तोए ॥ १८ ॥  
पंच धणुस्सय माणो, चउरासी पुव्वलख वरिसाऊ ॥  
सो सीमंधरनाहो, अणंतनाणी सया जयन्त ॥ १९ ॥  
मुणिसुव्वय नमि तिड्यर, अंतरे रङ्गखच्छि विछ्छुं ॥  
छंमिय पव्वन्नदिरंक, सोमंधर सामियंवंदे ॥ २० ॥  
इय सीमंधरनाहो, थुन्त मए नत्तिरायकलिएण ॥  
सासय सुहक जणन्त, जयनाहो होन नवियालं ॥

॥ इति श्रीमंधरजिन स्तवनं ॥

## ॥ अथ श्रीगुरु प्रदक्षणा ॥

गोग्रम सुहम्म जबू, पज्जवो सिङ्गनवाइ आयरिआ ॥  
 अन्नेवि जुगप्पहाणा, पइ दिढे सुगुरु ते दिघा ॥ १ ॥  
 अङ्ग कयच्चो जम्मो, अङ्ग कयडं च जीविय मष्ट ॥  
 जेण तुह दंसणामय-रसेण सत्ताइ नयणाइ ॥ २ ॥  
 सो देसो त नगरं, त गामो सोअ आसमो धन्नो ॥  
 जबू पहु तुम्हपाया, विहरति सयावि सुपसन्ना ॥ ३ ॥  
 हड्डा ते सुकयड्डा, जे किइकम्मं कुणांति तुह चलणे ॥  
 वाणी बहुगुण खाणी, सुगुरु गुणा वन्निआ जीए ॥ ४ ॥  
 अवयरिया सूरधेणू, सजाया महगिहे कणवुछो ॥  
 दारिद्र अङ्गाय, दिढे तुह सुगुरु मुहकमले ॥ ५ ॥  
 चितामणि सारिड्डि, समज्ज पाविय मए अङ्गा ॥  
 ससारो दूरिकड्डि, दिढे तुह सुगुरुमुहकमले ॥ ६ ॥  
 जा रिक्षी अमरगणा, ज्ञुजंता पियतमाई सजुन्ना ॥  
 सापुण किन्तियमिता, दिढे तुह सुगुरु मुहकमले ॥ ७ ॥  
 मणवयकाएहि मए, ज पावे अङ्गिय सया जयव ॥  
 तं सबं अङ्ग गय, दिढे तुह सुगुरुमुहकमले ॥ ८ ॥  
 डज्जहो जिणिदधम्मो, डज्जहो जीवाण माणुसो जम्मो ॥  
 लेष्पि मणुअजम्मे, अइ इलहा सुगुरु सामगी ॥ ९ ॥  
 जबू न दीसति गुरु, पच्चसे उठिएहि सुपसन्ना ॥  
 तड़ कह जाणिङ्गइ, जिणवयण अमिअसारिड्डि ॥ १० ॥  
 जह पान्तसमि भोरा, दिणयर उठयमि कमदवणासंसा ॥  
 विहसंति तेमतज्जिय, तह अन्हे दसणे तुम्ह ॥ ११ ॥  
 जह सरइ सुरदि वड्डो, वत्तमास च कोईला सरई ॥  
 वंज सरई गङ्गदो, तह अम्म मणं तुमं सरई ॥ १२ ॥

वहुयां वहुयां दिवसमां, जइ मई सुहगुरु दिव ॥  
 लोचनबे विकसी रह्यां, हीअरुईं अमित्र पश्च ॥ १३ ॥  
 अहो ते निजिन कोहो, अहो माणो पराजिन ॥  
 अहो ते निरक्षिया माया, अहो लोहो वसीकीन ॥ १४ ॥  
 अहो ते अज्जवं साहु, अहो ते साहु मदवं ॥  
 अहो ते उत्तमा खंती, अहो ते मुनि उत्तमा ॥ १५ ॥  
 इहंसि उत्तमो नंते, इच्छाहोहिसि उत्तमो ॥  
 लोगुत्तमुत्तमं ठाणं, सिद्धि गच्छसि नीरञ्ज ॥ १६ ॥  
 आयरिय नमुक्कारो, जीवं मोएइ नवसहस्राञ्ज ॥  
 नवेण कोरमाणो, होइ पुणो वोहिलाज्ञाए ॥ १७ ॥  
 आयरियनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो ॥  
 मंगलाणं च सव्वेसिं, तर्झयं हवइ मंगलं ॥ १८ ॥

॥ इति श्रो गुरु प्रदक्षणा समाप्त ॥

---

## ॥ अथ जीवानुशास्ति कुलक ॥

रेजीव किं न वुच्छसि, चउगइसंसारसायरे घोरे ॥  
 नमीञ्ज अणांतकाले, अरहट घडिव जलमध्ये ॥ १ ॥  
 रेजीव चिंतसि तुमं, निमित्तमित्तं परो हवइ तुच्छ ॥  
 असुहपरिणामजणियं, फलमेयं पुव्वकम्माणं ॥ २ ॥  
 रेजोव कम्मन्नरिञ्च, उवएसं कुणसि मुढ विवरिञ्च ॥  
 डुग्यगमणमणाणं, एसच्चिय हियइ परिणामो ॥ ३ ॥  
 रेजोव तुमं सीस, सवणा दाऊण सुणसु महवयणं ॥  
 जं सुखं नइ पाविसि, ता धम्मविवजिन नूणं ॥ ४ ॥  
 रेजीव मा विसायं, जाहितुमं पिण्डिऊण पररिक्षी ॥  
 धम्मरहियाण कुच्छो, संपज्जइ विवहसंपत्ती ॥ ५ ॥

रेजीव कि न पिछसि, जिज्ञांत जुब्बण धण जीअ ॥  
 तहविहु सिगध न कुणसि, अप्पहिय पवरजिलाधम्म ॥ ६ ॥  
 रेजीव माणवजिअ, साहस परिहीण दीण गयलज्ज ॥  
 अब्रसि कि वोसड्डो, नहु धम्मे आयर कुणसि ॥ ७ ॥  
 रेजीव मणुयजम्म, अरुयद्व जुब्बण च वोखोण ॥  
 नय चिन्न उगतव, नय दड्डी माणिआ पवरा ॥ ८ ॥  
 रेजीव कि न कालो, तुझ गञ्ज परमुह नीयतस्म ॥  
 ज इच्छिअ न पन्न, तं असिधारावय चरसु ॥ ९ ॥  
 इयमामुह सुमणोण, तुझ सिरी जा परस्स आइन्ना ॥  
 ता आयरेण गिन्हसु, नगोय विदिपयत्तेण ॥ १० ॥  
 जोव मरणेणसम, उरङ्गश जुब्बण सह जराए ॥  
 रिषि विणात सहिप्रा, हरिसि विसाँ नय कायव्वो ॥ ११ ॥  
 ॥ इति जीवानुशास्ति कुलक समाप्त ॥



॥ श्रो प्रकरणमाला समाप्त. ॥

